मेरा बचपन

प्रगति प्रकाशन
मास्को

अनुवादक नरोत्तम नागर
सपादक डा० "मधु"

М ГОРЬКИЙ
ДЕТСТВО
На языке хинди

पहला सस्करण १९५७
दूसरा सस्करण १९६८
तीसरा सस्करण १९७७

सोवियत सघ म मुद्रित

$Г\frac{70302-626}{014(01)-77}$ 655—77

यह पथ अनन्त है

नीज्नी नोव्गोरोद के २४ वर्षीय कामगार अलेक्सेई मक्सिमोविच पेशकोव की जब पहली रचना "मक्सिम गोर्की" के उपनाम से १८६२ मे छपी, तो उस समय तक उन्होंने इतने पापड वेल लिये थे, इतनी अधिक मुसीबत झेल ली थी, जीवन का इतना समृद्ध अनुभव सचित कर लिया था कि इस दृष्टि से उनके पूववर्ती और समकालीन लेखको मे से कोई भी उनका मुकाबला नही कर सकता था। शायद ही हम किसी ऐसे अन्य लेखक का नाम ले सकते हैं, जो इतनी जल्दी जीवन के तल से विश्व-सस्कृति के शिखर पर जा पहुचा हो।

गोर्की की जीवनी इतनी सवविदित है कि यहा उसे दोहराने की आवश्यकता अनुभव नही होती। केवल इतना ही याद दिला देना काफी होगा कि अपना साहित्यिक जीवन आरम्भ करने से कई वप पहले, जिससे दुनिया के कोन कोने म उसकी ख्याति फल गयी, १६ वर्षीय अलेक्सेई मक्सिमोविच पेशकोव ने आत्म-हत्या करने की कोशिश की थी। उस समय वह कज़ान के एक नानवाई के यहा का काम करते थे। दु ख की किस गहरी चेतना ने उन्हे ऐसा करने के लिए विवश किया? सोचा जा सकता है कि जेल की कोठरी की याद दिलानेवाले, अधेरे और उमसभरे तलघर ने, जिसका बाद मे उन्होंने अपनी "कानावालोव" और "छब्बीस तथा एक" और अन्य कहानियो मे वणन किया है, उन्हे जीवन से पूरी तरह निराश करके ऐसा कदम उठाने के लिए मजबूर किया हो? नही, ऐसी बात नही है। इसके पहले किशोर अलेक्सेई कुली, खेत मजदूर और बजरा खीचने का काम कर चुके थे।

हर दिन की गुलामों जैसी जिन्दगी और अपनी ताकत से कहीं ज्यादा मेहनत और गरीबी से वह बचपन से ही परिचित थे। दूसरी ही चीज ने उन्हें निराश कर दिया था। वह अनेक ऐसी किताबें पढ चुके थे, जिनमें "सामाजिक व्यवस्था के पुनर्गठन" की सम्भावना की चर्चा की गयी थी। यह कहा गया था कि जनता आज़ादी हासिल कर सकती है। उन्हें इस बात में विश्वास हो गया था और, जैसा कि उन्हें प्रतीत हुआ, वह उन लोगों में भी यह विश्वास पैदा कर पाये थे, जो उनके साथ उस जेलखाने जैसे तलघर में काम करते थे। किन्तु जब कज़ान के विद्यार्थियों में राजनैतिक हलचलें हुई (जिनमें गोर्की के भावी महान मित्र—नौजवान व्ला० इ० लेनिन ने मुख्य भूमिका अदा की), तो उनके वही साथी उन्हें विद्यार्थियों की पिटाई करने के लिए जाने को कहने लगे। अत्यधिक मानसिक पीडा से स्तम्भित अलेक्सेई पेशकोव को उन्हें यह स्पष्ट करने के लिए शब्द नहीं मिले कि यह कितनी भयानक बात है। उस समय हताशा उनपर हावी हो गयी और कज़ान नदी के तटवर्ती ऊँचे टीले पर पिस्तौल की गोली चली।

अगर दिल को निशाना बनाकर चलायी गयी गोली ठीक जगह पर जा लगती, तो हम अलेक्सेई पेशकोव के जीवन के बारे में कुछ भी पता न चलता और न ही मक्सिम गोर्की के नामवाला कोई लेखक ही हमारे सामने आता। उनके जीवन का भी वैसा ही अकाल अन्त हो जाता, जैसा कि उस भयानक समय में किसी सुफल के बिना "जनता में जाने", असंख्य क्रान्तिकारी कारवाइयों और प्रतिक्रियावादी शक्तियों के दमनचक्र के बाद अनेक जवान लोगों का हुआ। किन्तु गोली फेफड़े को छेदती हुई दिल के करीब से निकल गयी और अलेक्सेई पेशकोव अस्पताल में पहुँचा दिये गये। होश आने पर उन्हें तानबाई के तलघर के वही साथी अपने सामने दिखाई दिये, जिन्होंने उनकी आत्मा को बुरी तरह घायल किया था। अब उन्हें उनके चेहरों पर घबराहट दिखी और अपने लिए, जिसे उन्होंने तिरस्कार की दृष्टि से देखा था, प्यार दिखाई दिया। वह समझ गये कि गुण्डे ये लोग नहीं, बल्कि वे परिस्थितियाँ बुरी हैं, जो उन्हें अंधेरे में धकेल देती हैं। इसका मतलब यह हुआ कि हताश होना नासमझी की बात है—जीवन को बदला जा सकता है और बदलना चाहिए। किन्तु इसके

लिए यह जरूरी है कि जिन्दगी, जनता और अपने देश को अधिक अच्छी तरह से जाना-समझा जाय, ऐसे शब्द, विचार और आदर्श प्राप्त किये जायें, जो लोगों को संघर्ष के लिए उठने की प्रेरणा दे सकें।

इसके बाद तो बड़ी से बड़ी आजमाइशें भी गोर्की की हिम्मत नहीं तोड़ सकीं। और आजमाइशों, मुसीबतों तथा खतरों की तो कुछ कमी नहीं थी। वे तो एक सौ लोगों के लिए भी काफी होकर भी बच सकती थीं। १८९१–१८९२ में रूस में लोगों पर बहुत बड़ी मुसीबत आयी। भयानक अकाल के कारण वोल्गा तटवर्ती और केन्द्रीय रूस के सारा-सारा विशाल परिवार, पूरे के पूरे गांव अपने घर छोड़कर दक्षिण के रास्ता पर चल पड़े। लेव तोलस्तोय, चेखाव, कोरोलेंको और अन्य रूसी लेखकों ने भूखों की मदद के लिए तब बहुत कुछ किया। उस समय तक गोर्की लेखक नहीं बने थे और भूखों में से एक थे। उन्हीं के साथ उन्होंने उक्रइना, क्रीमिया और कावेशिया घूम डाला। उन्हें कई बार पीट-पीटकर अधमरा कर डाला गया, कई बार "सन्देहजनक" व्यक्ति के रूप में थाने ले जाया गया और यों कहना चाहिए कि कुल मिलाकर इतनी अधिक मुसीबतें सहनी पड़ीं कि वह जिन्दा कैसे बच गये, यह समझ पाना मुश्किल है। किन्तु इस सबसे वह पहले की भांति हताश नहीं हुए, बल्कि उनमें विरोध की भावना तीव्र हुई, अनूठे उत्साह का संचार हुआ। तब वह लेखक बने।

कई सालों तक जवान गोर्की की रचनाएं मुख्यतः वोल्गा तटवर्ती प्रान्तीय पत्र-पत्रिकाओं में ही छपीं और यद्यपि चमक और ताजगी लिये उनकी प्रतिभा ने तत्काल प्रमुखतम लेखकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया, तथापि उन्हें बहुत विस्तृत ख्याति नहीं मिली थी। १८९८ में जब उनके "शब्दचित्रों और कहानियों" के छोटे छोटे पहले संग्रह प्रकाशित हुए, तो स्थिति एकदम बदल गयी। साहित्य जगत में इन संग्रहों का बहुत जोरदार स्वागत हुआ और इन्होंने गोर्की को उनके समय के प्रमुखतम लेखकों की पांत में ला खड़ा किया। एक वर्ष बाद प्रकाशित होनेवाले उनके उपन्यास "फोमा गोर्देयेव" ने उसी समय प्रकाशित हुए लेव तोलस्तोय के उपन्यास "पुनरुत्थान" जितनी ही विस्तृत दिलचस्पी पैदा की। इसके बाद जब उनका "तीन" उपन्यास छपा और उन्होंने नाटक लिखने शुरू किये (उनका प्रतिभापूर्ण दार्शनिक नाटक

"तलछट" विशेष रूप से सफल रहा), तो उनकी ख्याति अपने देश की सीमाओं और महासागरों को लांघकर सही अर्थ में विश्व-व्यापी हो गयी।

किन्तु गोर्की की प्रारम्भिक सफलताओं के साथ ही उनके बारे में किस्से कहानियों ने भी जन्म लिया और जैसे जल्दी-जल्दी उनकी प्रसिद्धि बढ़ी, वैसे ही ये किस्से-कहानियां भी बढ़ते गये। बहुत-से आलोचकों ने यह घोषणा की कि युवा लेखक की प्रतिभा की तुलना में उनकी अनूठी जीवनी में पैदा होनेवाली सनसनीखेज़ दिलचस्पी उनकी असाधारण लोकप्रियता का कारण थी। यह सही नहीं है। उनके जीवन-सम्बन्धी तथ्यों के सामने आने से पहले उन्हें लेखक के रूप में सफलता मिल चुकी थी। यह कहना अधिक सही होगा कि उनकी सफलता के फलस्वरूप ही १९वीं शताब्दी के अन्त में उनके जीवन के बारे में तथ्य प्रकाशित होने लगे थे। अनेक आलोचकों ने गोर्की की लोकप्रियता का कारण यह माना कि उन्होंने अपनी रचनाओं में वर्गहीन तलछटी और बेघर बार लोगों का चित्रण किया है, उनकी भावनाओं और मन स्थिति, "निरंकुश स्वतन्त्रता" वाले व्यक्तित्व के उनके अराजकतावादी प्रयास, 'भीड़" और नैतिकता, सभी प्रकार के सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति तिरस्कार भावना के फ्रेड्रिक नीत्स्शे के विचारों के साथ उनकी सादृश्यता को अभिव्यक्ति दी है। यह भी गलत है। गोर्की ने वास्तव में ही तलछटी लोगों का चित्रण किया है और वह भी इतनी अच्छी तरह कि जैसा अन्य किसी लेखक ने नहीं किया। पर उनकी अराजकतावादी भावनाओं को उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया और वह शुरू से ही नीत्स्शेवाद के कट्टर विरोधी रहे। हां, यह सही है कि नीत्स्शे की तरह गोर्की को भी टुटपुंजियापन से घृणा थी। किन्तु नीत्स्शे यदि जनता को भी "टुटपुंजियापन' के साथ जोड़ते थे (और इसी लिए उन्होंने अत्यधिक प्रतिक्रियावादी निष्कर्ष निकाले), तो गोर्की को टुटपुंजियों में जनसाधारण के उस आम जनता के सब से बड़े शत्रु दिखाई दिये जिसका वह स्वयं भी अंग थे और साहित्य क्षेत्र में अपने पदार्पण के साथ ही जिसे उन्होंने अभिव्यक्ति दी।

आइये गोर्की की पहली कहानियों में से एक "मेरा साथी' को लें। सतही तौर पर यह एक संस्मरणात्मक कहानी है, व्यक्तिगत जीवन

की एक घटना मात्र है। किन्तु वास्तव म कहानीकार ने "सुनहरी सेना" (उस समय सभी तलछटी लागो को यही सज्ञा दी जाती थी) के एक सजीव प्रतिनिधि, निधन हो गये एक जाजियाई राजकुमार के साथ सच्ची भेंट का वणन किया है। यह राजकुमार जीवन के तल मे पहुच गया है, पर उसकी बददिमागी अभी तक कायम है, वह अपन का दूसरा से श्रेष्ठ और यह मानता है कि उसे दूसरे लागा का शोषण करने का अधिकार है। उसका कहना है कि "शक्तिशाली खुद अपना कानून बनाता है।" कहानीकार को अपने "साथी" मे ऐसा व्यक्ति भी दिखाई देता है, जो जिंदगी का शिकार हो गया है और इसलिए दिल मे सहानुभूति पैदा करता है, और परोपजीवी भी, जिसके लिए दिल म नफरत पैदा होती है। किन्तु कहानीकार दोना का और दो के लिए काम करते हुए अपने इस "साथी" के साथ क्या बना रहा है? "पारस्परिक सहायता" के आधार पर जीवन को रूप देने के असफल आह्वानो के बाद भी वह क्या अपने को उसका और ज्यादा गुलाम बनने तथा शोषण करने की सम्भावना देता है? यह प्रश्न उठाने पर ही हम यह समझने लगते है कि "मेरा साथी" कहानी सतही तौर पर जैसी लगती है, उससे कही गहरी है कि वास्तव मे उसमे अत्यधिक दिलचस्प मनोवज्ञानिक, इतना ही नही, सामाजिक दाशनिक "अनुभव" को अभिव्यक्ति दी गयी है। "उसने मुझे गुलाम बना लिया," गोर्की लिखते है। "मैं उसके इशारो पर नाचता और उसका अध्ययन करता रहा, उसके चेहरे के हर कम्पन को ध्यान से देखता और यह समझने की कोशिश करता रहा कि दूसरे आदमी के व्यक्तित्व पर हावी होने की इस प्रक्रिया मे वह कितनी दूर तक जा सकता है" दूसरे शब्दा मे कहानीकार ने अपने लिए यह स्पष्ट करना चाहा कि बुराई और उत्पीडन दमन का अगर विरोध न किया जाये, तो वे किस हद तक आगे बढ सकते है (यही बुराई का ताक्त से विरोध न करने की तोलस्तोयवादी शिक्षा के विरुद्ध कहानी का विवादपूण पक्ष हमारे सामने आता है)। कहानी इस निष्कप पर पहुचती है कि ऐसा "साथी" "दूसरे के व्यक्तित्व पर हावी होन की प्रक्रिया" मे खुद कभी नही रुकेगा और अच्छे से अच्छे शब्द भी खुद-ब-खुद उसे कभी नही बदल सकते। जरूरत इस बात की है कि ऐसे "साथियो", उन अधिक

सौभाग्यशालियो को भी जो जीवन के तल मे न जाकर "ऊपर" बन हुए हैं जन्म देनेवाली पूरी सामाजिक व्यवस्था का ही मूल चूल बदला जाये।

गोर्की द्वारा प्रस्तुत किय गय "तलछटी" लोगा के प्रतिनिधि तरह तरह के व्यक्ति हैं और उनके प्रति लेखक का भिन्न रवैया है। एक ओर स्वार्थी तथा अपना रोब जमानेवाले "साथी" हैं, ता दूसरी ओर कोनोवालोव जैसे पात्र भी हैं, जा डटकर काम करने और आवारा जिन्दगी बिताने की सीमा रेखा के इधर-उधर डोलते रहते हैं। किन्तु लेखक ने कोनोवालोव जैसे लोगा को अनुकरणीय उदाहरण के रूप मे नही, बल्कि पुरानी दुनिया जिसने मानवीय लक्षणा, गुणा और शुभ आकाक्षाओ को बदसूरत बना दिया है, के "अपराधा के ठोस प्रमाण" की शक्ल म पेश किया है। श्रम के दासा जैसे स्वरूप को समझते हुए लोगो के दुख दर्दो के लिए गोर्की हमदर्दी महसूस करते थे, किन्तु मुक्ति के सही माग की अज्ञानता का स्पष्ट करनेवाले उनके निष्क्रिय, श्रम से इन्कार समाज के प्रति हर तरह के उत्तरदायित्व से इन्कार और समाज के विरुद्ध अराजकतावादी विद्रोह के प्रति उनके हृदय म तनिक भी सहानुभूति नही थी। आवारा लोगो के करीब ही हम बूर्जुआ के प्रतिनिधि, 'पश्चाताप करनेवाले व्यापारिया" का गोर्की द्वारा प्रस्तुत सुन्दर चरित्र चित्रण पाते ह। फोमा गोर्देयेव स लेकर येगोर बुलिचोव तक य पात्र अपने वग से टूट रहे हैं। इन पात्रा म लेखक का ध्यान उन बातो की ओर गया जो मयाकिन और दोस्तिगायेव जैसे "सामान्य" बूर्जुआ के "सामान्य' जीवन से टकराती थी। पर गोर्की यह समझते थे कि उनका एकाकी, जान-बूझ कर किये जानवाले विद्रोह का कोई फल नही होगा, कि वे एक किनारे से हट रह हैं किन्तु दूसरे पर खडे होने म असमथ है और भयानक एकाकीपन ही उनका अन्त होगा।

जवान गोर्की के लिए "बुढिया इजगिल" कहानी विशेष महत्त्व रखती थी। इस कहानी के तीन भाग उन तीन रास्तो पर प्रकाश डालते हैं, जो हर व्यक्ति के सामने खुले होते है। लार्रा (बकौल इजगिल के अनुसार लार्रा का अथ है समाजच्युत समाज से निकाला हुआ) का किस्सा पहले भाग का सार स्पष्ट करता है। इसका मुख्य भाव यह

है कि किसी भी व्यक्ति के लिए इससे बढ़कर और कोई सजा नही हो सकती कि उसे समाज से अलग कर दिया जाये, जनता से उसका सम्बध न रहने पाये। फ्रेड्रिक नीत्स्शे का सब से प्यारा नायक "महामानव" ज़रतुश्त हमे यह शिक्षा देता है कि "एकाकी होने पर ही मानव सुखी होता है।" मगर लार्रा का किस्सा हमे यह शिक्षा देता है कि एकाकीपन मनुष्य के लिए सबसे बडा दुर्भाग्य है, कि मृत्यु भी इसके लिए पर्याप्त दण्ड नही है। कहानी का अन्तिम भाग, यानी दान्को के जलते हृदय का किस्सा, यह बताता है कि जनता की आजादी के लिए अपने प्राण न्योछावर करके मानव को कितना अधिक सुख मिलता है। तीन भागोवाली इस कहानी का बीच का भाग जिसका स्वय इज़गिल के भाग्य से सम्बन्ध है हमे क्या बताता है? वह यह बताता है कि कोई बडा कारनामा करना और साथ ही केवल अपने लिए, अपने प्यार, अपने निजी सुख के लिए जीना, एकसाथ दान्को और लार्रा बनना, सम्भव नही हो सकता। वह इसलिए कि शक्तिशाली और साहसी व्यक्ति की आत्मा मे जैसी कि अपनी जवानी के दिनो मे इज़गिल थी "डर और दासता' का स्वर बजने लगता है और ऐसे व्यक्ति के लिए न तो दान्को की भांति प्रशसा का भाव पैदा होता है और न ही लार्रा की भांति घृणा का। उसपर केवल दया ही आती है।

१९०० मे, दो शताब्दियो के सगम पर गोर्की ने एक ऐसी कृति रची जिसमे "बुढ़िया इज़गिल" का कथानक एक किस्से की जगह वास्तविक जीवन के क्षेत्र मे लाया गया। "तीन' नामक उपन्यास मे ऐसा हुआ। इसमे भी पाठक अपने सामने तीन रास्ते पाता है और वह उनमे से किसी एक को चुन सकता है। उपन्यास का मुख्य नायक इल्या लुन्योव अकेला ही "सामान्य" बूर्जुआ-टुटपुजिया जिन्दगी (गोर्की के लिए इससे अधिक अस्वाभाविक और अटपटी अन्य कोई ज़िन्दगी नहीं थी) से टक्कर लेने की कोशिश करता है, अधगली मे जा फसता है और आत्म-हत्या कर लेता है। सभी तरह के सघर्ष और बुराई की शक्तियो के विरोध से पूर्णत इन्कार करनेवाले याकोव फिलिमोनोव का अन्त इससे भी अधिक बुरा होता है। केवल तीसरे नायक, पावेल ग्राचोव, के सामने ही, जिसकी क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियो से भेट होती

है, वास्तविक जीवन के रास्ते पर सामने आने की सम्भावना पैदा होती है। गोर्की ने जिस समय यह उपन्यास लिखा था, उस समय वह खुद भी इस नये, बचा सकनेवाले एकमात्र मार्ग की दहलीज पर खड़े थे। उनके प्रारम्भिक कृतित्व में ही, जिसने निर्भीक यथार्थवादी सचाई को इतनी उत्साहपूर्ण गूंज और "दिलेरों की दीवानगी" के स्तुतिगान के साथ जोड़ा था और जो गोर्की जैसे कठिन भाग्यवाले कलाकार के लिए बहुत ही आश्चर्यजनक बात थी, महान कलात्मक उद्घाटना के सब पूर्वाधार विद्यमान थे। किन्तु अभी भी गोर्की में समाजवादी चेतना नहीं आयी थी, सर्वहारा की ऐतिहासिक नियति के बारे में वह अभी सजग नहीं हुए थे। अभी तक उन्होंने मजदूर वर्ग को शोषित, उत्पीड़ित और मुसीबतें झेलनेवाले वर्ग के रूप में ही चित्रित किया था, उस विराट शक्ति के रूप में नहीं, जो खुद अपने को और सभी मेहनतकशों को मुक्ति दिलाने में समर्थ है। बस, एक ऐसे झटके की जरूरत थी, जिससे गोर्की की चेतना में परिवर्तन हो जाये। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में रूस में आनेवाली शक्तिशाली क्रान्तिकारी बाढ़ ऐसा झटका साबित हुई और गोर्की ने बहुत प्रेरित होकर "तूफ़ान का अग्रदूत" के आह्वान-गीत में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। इस बात का भी कुछ कम महत्त्व नहीं कि उनका मार्ग व्ला० इ० लेनिन के मार्ग के साथ एक हो गया, शुरू में लेनिन की रचनाओं और विचारों के रूप में तथा बाद में वह व्यक्तिगत रूप से उनके साथी हो गये और लेनिन उनके मित्र, गुरु तथा नेता बन गये।

गोर्की ने लेनिनवाद को एक कलाकार के नाते, जिसके लिए मानवतावाद की समस्या बहुत महत्त्वपूर्ण थी, अपने ही ढंग से अपनाया। उन्होंने १६०१ में ही "टक्कर" नाटक में इस समस्या को प्रस्तुत किया था। इसी नाटक में उन्होंने समाजवादी चेतना से सम्पन्न मजदूर, सर्वहारा क्रान्तिकारी नील का पहली बार चरित्र-चित्रण किया है। टुटपुंजिया लोग नील और उसके साथियों पर संगदिली, निर्दयता और मानवता के अभाव का नैतिक अभियोग लगाते हैं। किन्तु नाटक की घटनाएं ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती हैं वैसे-वैसे 'अभियोक्ता" अभियुक्त बनते जाते हैं और अपराधियों के कटघरे में जा खड़े होते हैं। यह स्पष्ट हो जाता है कि नील की साफ़गोई और ईमानदारी तथा बुराई

के विरुद्ध डटकर सघप करने की उसकी तत्परता मे वेस्सेमनाव परिवार के बूढा और जवाना की नम्रता तथा दया आदि के बारे मे लम्बी चौडी बातो से कही अधिक सच्चा मानवीय प्यार विद्यमान है। गोर्की ने "तलछट" नाटक म सच्चे और झठे मानवतावाद की समस्या का और अधिक विस्तृत रूप मे तथा गहराई के साथ पेश किया। इसम उपदेशक लुका की "सान्त्वना" का भडाफोड किया गया है, जिसके सारे दशन का सार इस सूक्ति मे निहित है कि "जैसा मानो, वैसा जानो।" लुका हर व्यक्ति के लिए सान्त्वना देनेवाला कोई धोखा, कोई छलना खाज निकालता है, जिससे उसे वक्ती तौर पर कुछ इतमीनान हो जाय। वह इसलिए ऐसा करता है कि उसे जीवन को वास्तव मे ही बदल डालने की लोगो की क्षमता मे विश्वास नही है, जीवन के कायाकरप की सम्भावना मे उसकी आस्था नही है। ऐसे डाक्टर का हमे क्या मूल्याकन करना चाहिए, जो यह मानता हो कि किसी भी रोग का इलाज सम्भव नही और उसका मात्र कत्तव्य है इस तथ्य को बीमारो से छिपाना? लुका ऐसा ही डाक्टर है। यह सही है कि उसे लागा पर सच्ची दया आती है, किन्तु उसकी दया, जा उनके प्रति सम्मान, उनकी शक्ति मे विश्वास पर आधारित नही है, उनके लिए अहितकर ही सिद्ध होती है। जीवन के साथ समझौता करने के ऐसे निष्क्रिय मानवतावाद के मुकाबले मे गोर्की ने क्रातिकारी सघप का मानवतावाद पेश किया, जो इस बात का आह्वान करता है कि जीवन की सारी सचाई से दिलेरी के साथ आख मिलाओ, ताकि जीवन और स्वय व्यक्ति को बदला जा सके, उसे अन्दरूनी और बाहरी तौर पर मुक्त किया जा सके। दुनिया की सभी भाषाओ म लाखा लोग इस नाटक के ये शब्द दोहराते है–"इन्सान–यही तो सचाई है," "मानव–कितनी गर्वीली गूज है इस शब्द की!" "सभी कुछ मानव मे है, सभी कुछ मानव के लिए है।"

१९०६ मे लिखे गये गोर्की के "मा" उपन्यास म भी क्रान्तिकारी मानवतावाद की समस्या प्रस्तुत की गयी है। "मा" असाधारण भाग्य-वाली असाधारण पुस्तक है। पूरे विश्वास के साथ यह कहा जा सकता है कि विश्व-साहित्य के पूरे इतिहास म ललित साहित्य की लगभग एक भी तो ऐसी रचना नही है, जिसके पाठका की इतनी बडी सख्या हो

ग्रौर जिसने लाखा करोडा लोगो के भाग्य पर इतना ज़ोरदार ग्रौर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला हो। यह भी कहना सम्भव है कि ललित साहित्य की बहुत कम ही ऐसी रचनाए होगी, जिनके कलात्मक गुणो के बार मे ग्रक्सर ऐसे सन्देह प्रकट किया गया हो ग्रौर कभी-कभी तो उनके द्वारा भी जिन्होने इसकी शैक्षणिक ग्रौर वैचारिक भूमिका को इतना ग्रधिक मूल्यवान माना है। ऐसा क्या हुग्रा? ग्रगर हम गोर्की के दृष्टिकोण के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया रखनेवाले ग्रालोचको की ग्रोर ध्यान न दें, तो इसका कारण "मा" के कलात्मक गुणो की कमी मे नही, बल्कि उसके ऊचे कलात्मक गुणो, उसकी साहसपूर्ण नवीनता मे खोजना चाहिए, उसकी गहराई मे जाना चाहिए। ग्रक्सर यह कहा जाता है कि 'मा" उपन्यास मे मज़दूर वर्ग का जीवन, निरकुश राजतन्त्र ग्रौर बूर्जुग्रा के विरुद्ध उसका सघर्ष, उसकी क्रान्तिकारी चेतना की वृद्धि, उसमे से ग्रागे ग्राये हुए पथ प्रदर्शको ग्रौर नेताग्रो को चित्रित किया गया है। ज़ाहिर है कि यह सब कुछ सही है, किन्तु बहुत ही सतही है ग्रौर यह समझने मे बहुत कम सहायता देता है कि ऐसे विषय के लिए क्यो कलात्मक रूप ग्रौर किस तरह का रूप बहुत ज़रूरी था। इतना ही नही, कई ऐसे प्रश्न भी पैदा होते हैं, जो समझ में नही ग्राते। यह बात कैसे समझी जाये कि मज़दूर वर्ग को समर्पित रचना मे उसके श्रम का, जिससे गोर्की इतना प्यार करते थे ग्रौर जिसका वह बढिया वर्णन कर सकते थे, तनिक भी चित्रण नही किया गया (हम तो यह तक भी नही पता चलता कि उपन्यास की घटनाए किस फैक्टरी मे घटती है)? सर्वहारा का वर्ग-सघर्ष दिखानेवाली रचना मे एक भी पूजीपति को क्यो चित्रित नही किया गया (गोर्की पूजीपतियो के जीवन से भली भाति परिचित थे, यह तो "फोमा गोर्देयेव" से ही स्पष्ट है) ग्रौर उदात्त नायको के मुकाबले मे बूर्जुग्रा ग्रौर निरकुश राजतन्त्र के विभिन्न कर्मचारियो—पुलिसवालो, जेनदार्मों ग्रौर जजो ग्रादि का तनिक भी ग्रात्मिक चित्रण नही किया गया (जैसा कि इसी समय लिखे गये "दुश्मन' नाटक के छोटे छोटे दृश्यो मे हुग्रा है)? ग्रगर 'मा' के लेखक क्रान्तिकारी चेतना का विकास दिखाना चाहते थे, तो उन्होंने जीवन के भय ग्रौर श्रम के उत्पीडन से बडी मुश्किल से मुक्ति पानेवाली पलागेया नीलोव्ना व्लासोवा को उपन्यास का केन्द्र

विदु क्यों बनाया और उसके बेटे, "इस्पात की तरह मजबूत" पावेल को इसके लिए क्या नहीं चुना?

"मा' की वास्तविक विषयवस्तु स्पष्ट होने पर ये सभी प्रश्न सारहीन हो जाते हैं। उपन्यास में केवल क्रान्तिकारी संघर्ष का वर्णन नहीं, बल्कि यह बताया गया है कि इस संघर्ष की प्रक्रिया, उसकी शुद्ध करनेवाली आग में साधारण व्यक्ति का आत्मिक कायाकल्प होता है, उसका नया, आत्मिक जन्म होता है। इसमें इस चीज़ का वर्णन किया गया है कि दमन की अपने आप काम करनेवाली आत्माहीन मशीन और आदर्शहीन "उपकरणों" के भय से मुक्त होने पर जो देखने भर को मानवों जैसे लगते हैं, मानवीय आत्माओं का कैसे पुनर्जन्म होता है। अमानवों के मुकाबले में मानव, यन्त्र के मुकाबले में मानव—चित्रण के इस सिद्धान्त ने बाद में गद्य, पद्य और नाटक के क्षेत्र में स्थान प्राप्त कर लिया, किन्तु गोर्की ने ही पूंजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध मजदूर वर्ग के संघर्ष का वर्णन करने के लिए सब से पहले इसका उपयोग किया था। इसके साथ मानव के आन्तरिक "पुनरुत्थान" के प्रश्न ने बहुत ही गहन दार्शनिक और अत्यधिक विवादग्रस्त अर्थ ग्रहण कर लिया। अगर दोस्तोयेव्स्की को यह डर था कि क्रान्तिकारी संघर्ष लोगों में एक दूसरे के प्रति शत्रुता की भावना को तीव्र कर देगा, उनके हिंसक तत्त्वों को भड़का देगा, तो गोर्की ने इसके उलट यह स्पष्ट किया कि केवल क्रान्तिकारी संघर्ष ही मानवीय आत्मा की पशुता और स्वार्थपरता का अन्त कर सकता है। अगर लेव तोलस्तोय के अनुसार राजनीति से नाता तोड़कर और बुराई का विरोध न करते हुए आन्तरिक परिष्कार के पथ पर चलकर ही व्यक्ति का "पुनरुत्थान" होता है, तो 'मा" उपन्यास की नायिका संघर्ष-पथ पर बढ़कर ही यह कह पाती है कि "पुनर्जीवित आत्मा को तो नहीं मार पायेंगे!"

गोर्की के कृतित्व के दो मुख्य विषय हैं, जो एक दूसरे की पूर्ति और उनके विश्वदृष्टिकोण के "गुप्त रहस्य" का उद्घाटन करते हैं तथा "यथार्थता के प्रति उनके कलात्मक रवये" को स्पष्ट करते हैं। एक तो विषय है उस व्यक्ति की आत्मा के "पुनरुत्थान" का, जो अपने भाग्य को जनता के भाग्य, वास्तविक जीवन के क्रान्तिकारी विकास के साथ जोड़ता है। दूसरा विषय है "व्यक्तित्व के नाश" का।

यह उन लोगो के लिए प्रतिदण्ड होता है, जो अपने "मैं" को जनता से अलग करते है और इतिहास के तूफानी प्रवाह से कन्नी काटते हैं। उपन्यास "मा" और प्रतिभापूर्ण त्रिखण्डीय आत्म कथात्मक उपन्यासो 'बचपन', "जीवन की राहो पर" और "मेरे विश्वविद्यालय" मे पहले विषय ने बहुत ही उत्कृष्ट व्यावहारिक रूप प्राप्त किया है। अलेक्सेई पेशकोव के आत्मिक निर्माण की कहानी वास्तव मे इस बात की कहानी है कि कैसे दो शक्तियो ने, जिनके विरोधी प्रभाव मे उसका व्यक्तित्व आया, उसकी आत्मा के लिए सघर्ष किया। एक ओर तो जनता के प्रतिनिधि हैं, जो अपने अपने ढग से प्रतिभापूर्ण हैं और बडे कष्ट सहते हुए सचाई तथा न्याय की खोज करते है। दूसरी ओर है स्वार्थी, निजी सम्पत्ति के दीवाने और छीना झपटी करनेवाले लोग, जिनके सभी गुण और शक्ति केवल लालच की भावना के अधीन रहते है। त्रिखण्डीय आत्म कथात्मक उपन्यासो मे गोर्की द्वारा प्रस्तुत दो तरह के चित्रो मे २० वी शताब्दी के अत्यधिक कलात्मक दो पात्र बहुत ही स्पष्ट रूप मे हमारे सामने आते हैं। इनमे से एक तो है नानी अकुलीना इवानोव्ना, जो अलेक्सेई के लिए "मित्र हृदय के बहुत ही निकट" व्यक्ति बन गयी, और दूसरे है नाना वासीली वासील्येविच, जिनसे उसे तत्काल "शत्रु की अनुभूति" हुई। इनसे अधिक एक दूसरे से भिन्न और प्रतिकूल पात्रो की रचना कठिन होगी। नाना बेहद कजूस और लालची है और नानी "लोगो के प्रति निस्स्वार्थ प्यार" का जीता-जागता रूप। नाना को पक्का यकीन है कि "हर आदमी दूसरे का भयानक दुश्मन है' और किसी पर भी विश्वास नहीं करना चाहिए, किन्तु नानी यह मानती है कि बुरो की तुलना मे अच्छो की सख्या कही अधिक है और लोगो पर भरोसा करना चाहिए। उनका "शिक्षण" भी भिन्न है। नाना डरा धमका कर और मार-पीटकर नाती को कठोर जीवन के लिए तैयार करते हैं, किन्तु नानी बडे स्नेह से उसकी आत्मा मे उदारता की भावनाए जागृत करने का प्रयास करती है। उनकी कलात्मक रुचिया भी भिन्न हैं—नाना ठोस हकीकत को तरजीह देते है, जबकि नानी को किस्से-कहानिया और गीत पसन्द हैं, जिनमे जनता के सपनो और उसकी आत्मा के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति मिली है। उनकी धार्मिक आस्थाए भी अलग अलग हैं—नाना का भगवान क्रोधी

है, दण्ड देनेवाला और निर्दयी है, जबकि नानी का भगवान दयालु है, सभी को प्यार करता है, सभी की मदद करने को तैयार है।

यह सब होने पर भी अगर हम नानी मे सभी कुछ अच्छा और नाना मे सभी कुछ बुरा ही देखेंगे, तो यह हमारी बडी भूल होगी। ये बहुत ही जटिल पात्र हैं और इनकी जटिलता मे ही गोर्की के कृतित्व का दार्शनिक सार छिपा हुआ है। अलेक्सेई, जिस अद्भुत नानी का इसलिए आभारी था कि उसकी बदौलत उसकी आत्मा के कचनार ने पलक खोली, उसी नानी की सब कुछ सहन कर लेने, सभी तरह के लोगो और सभी तरह की परिस्थितियो से समझौता करने की तत्परता, दुनिया का किस्से-कहानियो के जाले म से देखने और बुरे तथा भयानक को देख पाने की उसकी असमर्थता अलेक्सेई को परेशान करती थी। निर्दयी आत्माओ और निर्मम कार्य-कलापो के बारे म नाना की कहानिया चाहे कितनी ही भयानक क्या न थी, अलेक्सेई को उनसे भी लाभ हुआ, उन्होने उसे किस्से-कहानियो की चकाचौंध से अन्धा होने से बचाया। नानी जीवन से सन्तुष्ट थी और अलेक्सेई को भी इससे खुश होने के लिए प्रेरित करती थी। नाना जिन्दगी से बहुत नाराज थे और इसके साथ यह भी मानते थे कि इसे बदला नही जा सकता—भेडियो मे रहो, तो भेडियो की तरह चीखो। गोर्की जीवन के प्रति न तो पहला और न दूसरा रवैया ही स्वीकार कर सकते थे। दिलेरी से जिन्दगी के साथ आख मिलाते, अपनी आत्मा म घृणा की भावना पैदा करनेवाली सभी बुराइया और निर्ममताओ को देखते हुए भी उन्हें इस बात का पक्का यकीन था कि लोग सदा ऐसे ही नही रहेंगे जैसे अब है, कि वे बुराइयो पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और अगर सहन करने की आदत छोडकर सघर्ष करना सीख जायेंगे, तब तो वे अवश्य ही विजयी हो जायेंगे। केवल इसी मार्ग पर चलते हुए ही मानव और जनता की आत्मा का नया जन्म हो सकता है।

दूसरा विषय "व्यक्तित्व का नाश" गोर्की की कई रचनाओ मे सामने आया है। किन्तु उनकी अन्तिम बडी रचना, चार खण्डोवाले विराट उपन्यास "क्लिम समगीन की जिन्दगी" म यह बहुत विस्तृत और पूर्ण रूप मे उभरा है। समगीनवाद लोगो की आत्मिक स्वतन्त्रता और "पुनरुत्थान" के रास्ते मे एक बहुत बडा रोडा है। यह किसी भी

रोगत पर, जीवन की गति रोककर या उसे पीछे की तरफ मोड़कर भी बाहरी और भीतरी चैन पाने का स्वार्थपूर्ण प्रयास है। यह व्यक्तित्व की "पूर्ण स्वतन्त्रता" वर्ग और पार्टियों से इसकी पूर्ण निर्भरहीनता, इतिहास के सम्मुख उसके उत्तरदायित्व की मुक्ति की सम्भावना के बारे में बूर्जुआ-व्यक्तिवादी छलना है। समूचा जीवनचक्र समगीन की इस छलना को चकनाचूर करता है और वह प्रतिक्रियावादी शक्तियों के हाथों में अधिकाधिक दयनीय खिलौना बनता जाता है।

"क्लिम समगीन की जिन्दगी" हमारे युग की सब से महत्त्वपूर्ण रचना थी, जिसने विश्व-साहित्य की महानतम रचनाओं में स्थान प्राप्त कर लिया है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जीवन के अन्तिम वर्षों में गोर्की की प्रतिभा ने नयी ऊँची उड़ानें भरी। "क्लिम समगीन की जिन्दगी" और बड़े चित्रपटवाली ऐसी ही अन्य रचनाओं के अलावा उन्होंने 'येगोर बुलिचोव और अन्य", "दोस्तिगायेव तथा अन्य", 'वास्सा जेलेज्नोवा' का दूसरा रूप जैसे श्रेष्ठ नाटक भी लिखे। येगोर बुलिचोव और वास्सा जेलेज्नोवा—ये दोनों नायक अपने ढंग से जटिल और दुःखान्ती है तथा बूर्जुआ विचारधारा की बुनियादों को ही तहस-नहस होते हुए दिखाते हैं। बीसवीं सदी के नाटकों के शायद ही कोई अन्य नायक शेक्सपीयर के दुःखान्ती नायकों से इतने अधिक मिलते जुलते हैं। गोर्की के जीवन के अन्तिम वर्षों में प्रचारात्मक लेखों तथा विविध सार्वजनिक गतिविधियों ने असाधारण रूप से बड़ा पैमाना प्राप्त कर लिया। इन सब चीजों पर लेखक के बड़े साहस और उस वीरतापूर्ण उपलब्धि की छाप अंकित थी, जिससे अन्तिम वर्षों और दिनों में उनका व्यक्तित्व प्रकाशमान रहा था।

जैसा कि सर्वविदित है, लेनिन के अनुरोध पर १९२१ में गोर्की अपना इलाज कराने के लिए विदेश चले गये थे। वह फेफड़ा, जो कभी गोली का निशाना बनाया गया था, पुराने तपेदिक का अधिकाधिक कम मुकाबला कर पा रहा था और इसलिए लेखक का जीवन खतरे में था। वर्ष बीतते गये और गोर्की का रोग कम नहीं हुआ। किन्तु वह मातृभूमि लौटने को अधिकाधिक उत्सुक हो रहे थे, जहाँ विराट पैमाने पर समाजवादी निर्माण हो रहा था। १९२८ से गोर्की गर्मियों में सोवियत संघ आने लगे, किन्तु नमी और ठण्डक के महीने शुरू होने

पर इटली लौटने को विवश हो जाते थे। उनका शरीर वहा के जलवायु का अभ्यस्त हो गया था। पर इस चीज के बावजूद कि बीमारी वहीं अक्सर अपनी याद दिलाती रहती थी, उन्होंने १६३३ मे मातृभूमि म ही रहने का निश्चय कर लिया। उन्हे यह स्पष्ट था कि वह अपनी जिन्दगी को कम कर रहे हैं, किन्तु कोई दूसरा निर्णय कर ही नही सकते थे। कारण कि जर्मनी मे फासिस्ट सत्तारूढ हो गये थे और वातावरण मे नये विश्व-युद्ध की गध का अनुभूति होने लगी थी। इस युद्ध की चोट का मुख्य लक्ष्य ससार का प्रथम समाजवादी राज्य ही बननेवाला था। गोर्की सबमे अधिक उत्साही फासिस्ट-विरोधी प्रचारक और विश्व शान्ति आन्दोलन के एक कर्णधार बन गये। वह अथक रूप से रक्षा सम्बन्धी कार्यभारो की ओर सोवियत लेखको का ध्यान आकर्षित करते और उन्हे उस वीरतापूर्ण कारनामे के लिए तैयार करते रहे, जो बाद को, महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के वर्षों मे उन्होने सामूहिक रूप से किया। अतिम सासे लेते हुए और बेहोश होने के पहले गोर्की न जो शब्द कहे, वे ये थे " युद्ध होंगे   तैयारी करनी चाहिए   " दान्ते की भाति ही उनके जीवन का अन्त हुआ।

१६६८ मे सारी दुनिया म गोर्की का शताब्दी-समारोह मनाया गया। उनका देहान्त हुए अडतीस वर्ष हो गये हैं, किन्तु वह विश्व की साहित्यिक प्रक्रिया के केन्द्र बिन्दु बन हुए हैं—उनकी कलागत उपलब्धिया अभी तक इस प्रक्रिया को आगे बढा रही है। किन्तु कितने अर्से से, लगभग उनके साहित्यिक क्षेत्र मे पदार्पण करने के समय से ही उन्हे "दफनाया" जा रहा है। यह याद दिला देना उचित होगा कि जैसे ही गोर्की समाजवाद चेतना के स्तर पर पहुचे और उन्होने "टक्कर" नाटक मे नील की रचना की तथा "तलछट" नाटक और कुछ अन्य कृतिया रची, जिन्हें उनके विचारधारात्मक विरोधी भी अब क्लासिक का दर्जा देते है, कि फौरन ये दुभावनापूर्ण शब्द सुनाई दिये—"गोर्की खत्म हो रहे है।' प्रथम रूसी क्राति के वर्षों म उनके कृतित्व ने एक नया, महत्त्वपूर्ण डग भरा ही था कि फौरन पहले से भी अधिक मातमी शीर्षकवाला लेख "गोर्की का अन्त हो गया" सामने आया। कुछ और साल बीते, उनकी कुछ अन्य श्रेष्ठ रचनाए सामने आयी, तो एक आलोचक ने यह घोषणा कर दी कि गोर्की का अन्त ही नहीं

हुआ, उनका तो कभी आरम्भ ही नहीं हुआ था। इस तरह के घोषणाएं करनेवालों के साथ क्या बीती है? उनका क्या अन्त हुआ है? वे सामने आये और अतीत की कहानी भी बन चुके तथा अब न तो उनके आरम्भ और न ही अन्त में किसी की दिलचस्पी है।

किंतु नीज्नी नोव्गोरोद का कामगार, अलेक्सेई पेशकोव प्रतिभावान लेखक मक्सिम गोर्की रूस और सारी दुनिया के मार्गों पर कदम बढ़ाते चले जा रहे हैं और अपने हृदय की गर्मी से लाखों करोड़ लोगों की आत्माओं को गर्मा रहे हैं।

और यह पथ अनन्त है।

ब० ब्यालिक

बचपन

१

पिताजी कुछ-कुछ अंधेरे छोटे-से कमरे के फश पर खिडकी के नीचे लेटे हुए थे सफेद वस्त्र पहने और बहुत ही लम्बे-से प्रतीत होते हुए तथा उनके नगे परो की उगलिया बडे अटपटे ढग से फली हुई थीं। दोनो प्यारे हाथ छाती पर बधे हुए थे, निश्चल थे। उनकी भी उगलिया विकृत थीं। सदा हसती आखो पर ताबे के सिक्के रखे हुए थे, दयालु मुखडा विवर्ण था और दात दिखाई दे रहे थे, जिनसे मुझे डर लग रहा था।

लाल घाघरा पहने अधनगी मा उनकी बगल मे घुटनो के बल बठी हुई काली कघी से उनके लम्बे मुलायम केशो को सवार रही थी। यह वही कघी थी, जिससे मै तरबूज के छिलके काटा करता था। उसका गला बठ गया था। मा भारी और खरखरी आवाज मे लगातार कुछ कहती जा रही थी, उसकी भूरी आखें सूजी हुई थीं और आसुओ की मोटी-मोटी बूदें गिराती हुई मानो पिघली जा रही थीं।

मेरी नानी मेरा हाथ पकडे हुए थी। वह गोल-मटोल औरत थी, चौडा मस्तक, बडी बडी आखें और हास्यप्रद पिलपिली नाकवाली। वह सिर से पर तक काली पोशाक पहने कोमल और अत्यधिक आकषक दिखाई दे रही थी। वह भी रो रही थी, किन्तु विचित्र ढग से और मा के साथ खूब सुर मिलाती हुई। उसका पूरा शरीर रह रहकर सिसकियो से काप उठता था। वह मुझे बार-बार पिताजी की ओर बढाने की कोशिश कर रही थी, पर मै उससे चिपका रहता, पीछे छिप जाता। मुझे डर लग रहा था, घबराहट-सी हो रही थी।

बडे लोगो को मैंने आज तक रोते नहीं देखा था और नानी द्वारा

बार-बार कहे जानेवाले शब्द भी मेरी समझ मे नहीं आ रहे थे। वह कह रही थी

"तेरे पिताजी चल बसे, बेटे! जा नजर भरकर देख ले। अब तू उन्हे कभी नहीं देख पायेगा। तेरे पिता मर गये, मेरे लाल, अकाल, असमय "

हाल ही मे मै सख्त बीमारी से उठा था। मुझे अच्छी तरह याद है कि पिताजी मेरे साथ खेलते हसते थे, लेकिन अचानक वह गायब हो गये और उनकी जगह यह विचित्र औरत आ गयी, जो मेरी नानी थी।

नानी आयी, तो मैंने उससे पूछा

"तुम कहा से चलकर आयी हो?"

"ऊपर से, नीज्नी* से आयी हू, लेकिन चलकर नहीं, सवारी से। पानी मे पदल नहीं चला जाता, बौने!"

नानी की बात मुझे बेतुकी मालूम हुई और मेरी समझ मे भी नहीं आयी। ऊपर तो घर मे कुछ रगी दाढीवाले पारसी रहा करते थे और मकान के निचले भाग मे पीली चमडीवाला एक बूढा कलमीक** रहता था, जो भेड की खालो का व्यापार करता था। ऊपरवाले जीने से रेलिंग पर फिसलते हुए उतरा जा सकता था। नीचे आने पर कलाबाजिया खाई जा सकती थीं। मैं अच्छी तरह यह जानता था, लेकिन ऊपर पानी कहा था? नानी की सारी बात अटपटी और उलझी उलझायी थी।

"मुझको तुम बौना क्यो कहती हो?"

"क्योंकि तू वित्ते भर का है," उसने हसकर जवाब दिया।

नानी बहुत मधुर, दिलचस्प और लयबद्ध ढग से बोलती थी। पहले ही दिन मैं उससे हिलमिल गया। मैं बेचन हो रहा था कि किसी तरह हम दोनो उस कमरे से बाहर निकल चलें।

मा को देखकर मैं बहुत परेशान हो रहा था। उसके आसुओ और चीखने चिल्लाने से मेरे हृदय मे एक नयी और भयानक आशका

---

*वोल्गा नदी के तट पर स्थित शहर नीज्नी नोवगोरोद को कभी आस-पास के लोग नीज्नी कहकर पुकारते थे। अब उसका नाम गोर्की है।

**कलमीक—एक एशियाई जाति, जो रूस मे रहती है।

की आधी-सी उठ रही थी। इस रूप मे मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा था। उसकी मुद्रा हमेशा ही बहुत गम्भीर रहती थी। वह इने गिने शब्द बोलती थी, साफ-सुथरी, सवरी निखरी रहती थी, घोडे की तरह विशालकाय तथा मजबूत काठीवाली थी और उसके हाथ आश्चयजनक रूप से कडे थे, लेकिन आज उसका यह क्या हाल था? चेहरा सूजा हुआ, बाल खुले और अस्त-व्यस्त। कपडे फटे हुए। उसके सुनहरे केश, जो सदा बडे जूडे के रूप मे बधे रहते थे, नगे कधे और आखो पर बिखरे हुए थे। एक लट पिताजी के सुप्त मुखमडल पर लोट रही थी। इतना देर से मैं कमरे मे खडा था, पर एक बार भी उसने मेरी ओर नहीं देखा था। वह पिताजी के बालो मे लगातार कघी कर रही थी और आसुओ की झडी लगाते हुए फूट-फूटकर रो रही थी।

कुछ मामूली देहातियो और पुलिस के एक सिपाही ने झाककर अदर देखा।

पुलिस के सिपाही ने चिल्लाकर कहा

"अब जल्दी-से कफन-दफन की तयारी करो!"

खिडकी पर काले रग का एक दुशाला लटक रहा था। हवा से वह नाव के पाल की तरह फडफडा उठता था। एक बार पिताजी मुझे पालवाली नाव मे घुमाने ले गये थे। अचानक बडे जोर से बिजली कडक उठी थी। पिताजी ने हसकर मुझे अपनी जाघो के साथ चिपका लिया था और कहा था

"कुछ नहीं, कुछ नहीं! डरो मत, बेटे!"

यकायक मा लडखडाती हुई उठी और दूसरे ही क्षण फश पर चित गिर पडी। उसकी केश राशि फश पर बिखर गयी, उसका सफेद चेहरा नीला हो गया और दात पिताजी के दातो की तरह नजर आने लगे।

"कमरा बद करो और अलेक्सेई को बाहर ले जाओ," उसने भयानक स्वर मे कहा।

नानी मुझे ढकेलकर दरवाजे की ओर दौडी और ऊची आवाज मे वहा खडे लोगो से बोली

"घबराने की बात नहीं है! ईसा के लिए बाहर चले जाओ! यह हैजा नहीं है! उसे प्रसव वेदना हो रही है। रहम करो!"

मैं अधेरे कोने मे एक बडे सदूक के पीछे छिप गया, जहा से मा दिखायी पड रही थी। वह फश पर छटपटा रही थी–कभी दात पीसती

थी और कभी ज़ोर से कराह उठती थी। नानी कभी इधर तो कभी उधर बठती। उसके स्वर मे दुलार और ल शो थी।

"हिम्मत से काम ले, वर्वारा, हिम्मत से! भगवान के लिए इस पीडा को बर्दाश्त कर! ओ मरियम, तू ही पार लगा "

मै बहुत डर गया। पिताजी के पास ही मा प्रसव-पीडा से तडप रही थी और नानी इधर-उधर दौड धूप कर रही थी। वे दोनो कभी कभी उनके बदन से टकरा भी जाती थीं, कराहती और चिल्लाती थीं। पर वह निश्चल पडे थे, मानो उनपर हस रहे हो। बडी देर तक यही सब कुछ चलता रहा। कई बार मा ज़ोर लगाकर उठी, पर फौरन गिर पडी। नानी बडी-सी काली मुलायम गेंद की तरह लुढ़ककर कमरे से बाहर गयी। कुछ देर बाद यकायक अधेरे को चीरकर बच्चा चिल्ला उठा।

"धन्य भगवान," नानी ने लम्बी सास छोडकर कहा, "बेटा है!"

और मोमबत्ती जलायी।

आगे की बात याद नहीं है शायद मुझे कोने मे ही नींद आ गयी होगी।

मेरी स्मृति मे इसके बाद का दृश्य कब्रिस्तान से सम्बन्धित है। पानी बरस रहा था और हम लोग कब्रगाह के एक सूने कोने मे खडे थे। मै फिसलनी मिट्टी के एक छोटे-से टीले पर खडा हुआ उस गढे मे झाक रहा था, जहा ताबूत मे बद मेरे पिताजी की लाश उतारी जा रही थी। गढे के तल मे पानी भरा हुआ था, जिसमे बहुत से मेढक छपछप कर रहे थे। मैं एकटक उन्हे ही देख रहा था। दो मेढक कूदकर काठ के पीले ताबूत पर चढ गये।

कब्र के पास कुल पाच छ आदमी थे—पुलिस का सिपाही, जिसके भीगे लबादे से पानी टपक रहा था, दो देहाती, जिनके हाथो मे फावडे थे और जो न जाने क्यो नाक भौं चढ़ाये हुए थे, इसके अलावा मेरी नानी और मैं। वर्षा की हल्की फुहार से सभी भीग रहे थे।

"मिट्टी डाल दो," कहते हुए सिपाही वहा से हट गया।

अपने दुशाले के दोना कोरो से आखें दबाकर नानी रोने लगी। दोनो देहातियो ने झुककर गढे मे मिट्टी डालनी शुरू की। मिट्टी गिरने से पानी मे छपाक शब्द हो रहा था। मेढक ताबूत से कूदकर गढे की दीवारो पर चढने लगे, लेकिन मिट्टी के ढलो ने उन्हे नीचे ढकेल दिया।

"अलेक्सेई, हट जा यहा से," मेरी नानी ने कहा और मेरे कधे पकडकर खींच ले चली, लेकिन मैंने कधे छुडा लिये। मैं जाना नहीं चाहता था।

"ओ, भगवान!" उसने आह भरते हुए कहा। मालूम नहीं उसने इस शिकायती लहजे मे मुझे सम्बोधित किया था या भगवान को। देर तक वह सिर झुकाये निश्चल खडी रही। क़ब्र बिल्कुल भर गयी, फिर भी वह खडी ही रही।

दोनो देहातियो ने फावडो से जमीन को समतल कर दिया। जोर से हवा बहने लगी और बादल छट गये। नानी मेरा हाथ पकडकर दूर के गिरजाघर मे ले गयी, जिसके चारो ओर क़ब्रों का जाल बिछा हुआ था और हर कब्र पर लकडी की सलीब लगी थी।

कब्रिस्तान से बाहर आने पर नानी ने पूछा

"तू क्यो नहीं रोता? तुझे भी रोना चाहिए!"

"मुझे रुलाई नहीं आती," मैंने जवाब दिया।

"नहीं आती, तो रोने की जरूरत नहीं," उसने शात स्वर मे कहा।

मेरे लिए यह सब कुछ बहुत अजीब था – मै शायद ही कभी रोता था और वह भी तब, जब हृदय को ठेस लगती थी। देह की चोट से मुझे कभी रोना नहीं आता था। पिताजी मुझे रोते देखकर हमेशा हसने लगते थे, पर मा जोर से डाटती थी

"खबरदार रोया तो!"

वहा से हम लोग घोडागाडी मे सवार होकर चले। सडक चौडी और कीचड से भरी हुई थी। दोनो तरफ गहरे लाल घरो की कतार थी।

मैंने नानी से पूछा

"मेढक क्या अब बाहर नहीं निकलेंगे?"

नानी ने जवाब दिया

"नहीं! भगवान भला करे उनका!"

पिताजी या मा इस तरह बार-बार और इतने अपनेपन के साथ कभी भगवान का नाम नहीं लिया करते थे।

इसके कुछ दिनो बाद मा नानी और मैं स्टीमर के एक छोटे-से केबिन मे बठे कहीं चले जा रहे थे। मेरा नवजात भाई मक्सिम मर

गया था। केबिन के एक कोने मे मेज पर सफेद कपडे मे लिपटी और लाल फीते से बधी उसकी लाश रखी थी।

हमारा सामान एक ओर रखा था। मैं बक्सो और गठरियों के एक ढेर पर बठा खिडकी से बाहर झांक रहा था। गोल खिडकी बाहर को ओर यो उभरी हुई थी, जसे घोडे की आख। खिडकी के गीले शीशे के उस पार मटमला फेनिल पानी बह रहा था, कभी-कभी पानी उछलकर शीशे तक आ जाता। तब मैं घबराकर नीचे कूद पडता।

"डरो नहीं," नानी ने कहा और अपनी मुलायम गम गोद म लेकर मुझे फिर गठरियो के ऊपर बठा दिया।

नदी के ऊपर हलके मटियाले रग का नम कुहासा छाया हुआ था। कुहासे को चीरकर कभी-कभी कहीं दूरी पर काली जमीन का टुकडा दिखाई देता और दूसरे ही क्षण कुहासे तथा पानी मे आखो से ओझल हो जाता। तमाम चीजें हिल रही थीं। केवल मा दीवार के सहारे निश्चल, निश्चेष्ट खडी थी— आखें बद, दोनो हाथ सर के पीछे टिके हुए और भावशून्य, कठोर चेहरे पर दुख की काली रेखाए। वह मौन थी, मानो कोई और ही प्राणी हो। उसका फ्राक भी मेरे लिए अनजाना-सा था।

बीच-बीच मे नानी दुलारकर कहती थी

"कुछ खा ले, वर्वारा! एक कौर तो मुह मे डाल ले!"

पर मा मौन और निश्चल थी, जसे पत्थर की मूरत।

नानी मुझसे फुसफुसाकर बाते कर रही थी। मा से वह थोडा ऊचे स्वर मे बोल रही थी, लेकिन बहुत ही सावधानी से, कम और सहमते हुए। मुझे ऐसा लग रहा था कि नानी मा से डरती है। मैं भी तो मा से डरता था, अत नानी के साथ अपनापन और गाढा हो गया।

"सरातोव आ गया। मल्लाह कहा है?" मा सहसा जोर से और झल्लाकर बोल उठी।

ये शब्द भी मुझे नये और अजनबी मालूम हुए—सरातोव, मल्लाह

नीली पोशाक पहने पके बालो और चौडी छातीवाला एक आदमी छोटा-सा बक्स लिये केबिन मे आया। नानी ने उसके हाथ से बक्स ले लिया और मेरे भाई की लाश उसमे टिका दी। बक्स बद करने के बाद उसे दोना हाथो पर रखकर वह दरवाजे की ओर गयी, लेकिन मोटापे

के कारण उसके लिए तिरछा हुए बिना दरवाज़ा पार करना असम्भव था। किंकर्तव्यविमूढ़ होकर वह ठिठक गयी। उसकी विवशता पर हंसी आ रही थी।

"ओह मा!" कहकर मा ने झट तावूत उसके हाथ से ले लिया और दोनो बाहर हो गयीं। केबिन मे मैं और नीली पोशाकवाला आदमी रह गये।

मेरी ओर झुककर उसने कहा

"तो, तुम्हारा भाई तुम्हें छोड़ गया।"

"तुम कौन हो?"

"मैं मल्लाह हू!"

"और सरातोव कौन है?"

"सरातोव शहर का नाम है। खिड़की से बाहर देखो—वही है सरातोव।"

खिड़की से बाहर ज़मीन तेज़ी से भाग रही थी—काली और ढालू तथा जिसके ऊपर कुहासे का धुआ सा उठ रहा था, जिसे देखकर मुझे डबलरोटी का ताज़ा कटा टुकड़ा याद आ रहा था।

"नानी कहा गयी?"

"अपने नाती को दफनाने।"

"उसे भी ज़मीन मे गाड़ा जायेगा?"

"और क्या?"

मैंने मल्लाह को बताया कि पिताजी को दफनाते वक्त कसे ज़िंदा मेढको को भी गाड़ दिया गया था। उसने मुझे गोद मे उठाकर छाती से लगाया और चूमा।

"अभी यह सब बातें तुम नहीं समझते, बेटे! मेढको पर रहम करने की ज़रूरत नहीं है। दरअसल भाग्य तो तुम्हारी मा के फूट गये। देखते नहीं हो, शोक से उसका कसा हाल हो गया है।"

यकायक ऊपर बड़े ज़ोरो का हल्ला गुल्ला हुआ। मैं जानता था, स्टीमर मे ऐसा होता है, इसलिए डरा नहीं। मल्लाह ने जल्दी से मुझे गोद से उतार दिया और "मुझे भागना चाहिए," कहकर तेज़ी से बाहर चला गया।

मेरा भी बाहर भागने को मन हुआ और केबिन से निकल आया। तग, अध अधेरे रास्ते मे कोई नहीं था। दरवाज़े से थोड़ी ही दूर पर

सीढ़ियों की पीतल की किनारी चमक रही थी। ऊपर बहुत-से लोग बक्स और बिस्तर लिये खड़े थे। स्पष्ट था, लोग स्टीमर से उतर रहे हैं और मुझे भी उतरना चाहिए।

जब मैं डेक पर पहुंचा, जहां बहुत-से देहाती भीड़ लगाकर खड़े थे, तो लोग मुझे देखकर चिल्लाने लगे

"यह किसका लड़का है? किसका है तू?"

"मालूम नहीं।"

बड़ी देर तक भीड़ में मैं धकियाया जाता रहा, इधर से उधर होता रहा और कभी कोई मेरे कंधे पर हाथ रख देता। आखिरकार काले बालों वाला वही मल्लाह दिखाई पड़ा। उसने कहा

"यह आस्त्राखान का है, केबिन से निकल आया है "

उसने मुझे गोद में उठा लिया और केबिन में ले आया। गठरियों के ऊपर बठाकर बोला

"खबरदार, फिर ऐसी हरकत की तो "

धीरे-धीरे ऊपर का शोर-गुल बंद हो गया। स्टीमर का हिलना डुलना और पानी की छपछपाहट भी खत्म हो गयी। एक भीगी-सी दीवार खिड़की के सामने आ गयी, जिसकी वजह से अब कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। भीतर अंधेरा छा गया। मेरा दम घुटने लगा। चारों ओर बिखरी गठरियां मानो और बड़ी होकर मुझे घेरने लगीं। मैं डर गया—कहीं मुझे इस खाली स्टीमर में इसी तरह तो नहीं छोड़ दिया जायेगा?

मैं दरवाजे पर गया। वह बाहर से बंद था। मैंने उसका पीतल का मुट्ठा घुमाने की कोशिश की, पर वह हिला नहीं। दूध की एक बोतल उठाकर मैंने भरपूर ताकत से मुट्ठे पर दे मारी। बोतल चूर चूर हो गयी और दूध मेरे पैरों और जूतों के अंदर फैल गया।

परास्त और निराश होकर मैं गठरियों के ढेर पर पड़ गया। रोते रोते मुझे नींद आ गयी।

जब आंख खुली, तो स्टीमर फिर से पानी को छपछपाता हुआ डोल रहा था और केबिन की खिड़की सूरज की तरह चमक रही थी। मेरी बगल में बैठी हुई नानी अपने बालों में कंघा कर रही थी। जोर लगाने से उसके माथे पर बल पड़ गया था। साथ ही वह अपने आप

कुछ बोल रही थी। नीली झलक लिये हुए उसके काले लम्बे घने केशो के भारी गुच्छे बादल की तरह कधे, छाती और घुटनो पर होते हुए नीचे फर्श तक लटक रहे थे। एक हाथ से उसने उन्हे धूल मे लोटने से सभाल रखा था और दूसरे से मोटी-मोटी लटो मे लकडी का टूटे दातावाला बडा-सा कघा फेर रही थी। दर्द के कारण उसका चेहरा विकृत हो गया था। काली आखें नाराजी से चमक रही थीं और बालो के सघन कुज मे छोटा-सा मुह अजीब लग रहा था।

आज वह झल्लायी हुई सी लग रही थी। लेकिन जब मैंने पूछा कि तुम्हारे बाल इतने लम्बे क्यो है, तो उसका स्वर पिछले दिन की तरह मीठा और दुलार भरा था। उसने कहा

"शायद भगवान ने मुझे सजा के रूप मे ही ऐसे केश दिये है, उन्होंने कहा, 'लो ये लम्बे बाल और इन्हीं मे उलझी रहो!' जवानी मे मै इन्हीं बालो पर नाज करती थी, लेकिन बुढापे मे ये अभिशाप बन गये हैं।"

फिर बोली "तू सो जा, बेटे। अभी अच्छी तरह सवेरा नहीं हुआ है।"

"मन नहीं करता।"

"मन नहीं करता, तो मत सो," बालो को बाधते हुए शान्त स्वर मे उसने कहा। कोच पर मा लम्बी पडी थी। नानी ने उसकी ओर देखा और फिर मुझसे पूछा

"कल तूने बोतल क्यो फोड डाली थी? बता, मगर धीरे से।"

नानी का एक एक शब्द मिठास से सना होता था हर शब्द फूल की तरह खुशनुमा और रसीला, सीधे दिमाग़ मे गड जाता था। जब वह मुस्कराती, तो काली आखो की पुतलिया फल जातीं और उनके अदर एक अवणनीय चमक दिखाई देती। मुस्कराते समय उजले दातो की मजबूत पात झलक उठती। उसके गालो का रग काला पड गया था, जिनके ऊपर अनगिनत झुरिया थीं। तो भी कुल मिलाकर चेहरे पर ताजगी और चमक थी। उसकी सुदरता को बिगाडती थी उसकी पिलपिली नाक, जिसका सिरा लाल था और नथुने फूले हुए। चादी की बनी कामदार काली डिबिया से वह नास लिया करती थी। वह काली पोशाक मे थी, लेकिन आखो से उसका आन्तरिक प्रकाश छनता था, प्यारभरी

खुशमिज़ाजी का प्याला छलका करता था। वह झुकी हुई लगभग कुबडी-सी लगनेवाली बहुत मोटी औरत थी, लेकिन उसकी गति विधि मे बडी बिल्ली जसी चुस्ती और फुर्ती थी। व्यक्तित्व भी उसका बिल्ली की तरह गुदगुदा और प्यारभरा था।

मुझे लगा कि उसके आने स पहले मैं किसी अधेरे कोने मे नींद मे पडा था, उसने मुझे जगाकर प्रकाश मे पहुचा दिया, मेरे इद गिद की हर चीज को एक धागे मे पिरो दिया, मेरे गिद रगबिरगा ताना बाना-सा बुन दिया। आते ही उसके साथ मेरा अपनापन हो गया—अभिन्न और अटूट। वह जीवन भर के लिए मेरी मित्र, मेरे हृदय के बहुत ही निकट, सुबोध और सब से अधिक प्रिय व्यक्ति हो गयी। जीवन के प्रति उसके नि स्वाथ मोह ने मेरे जीवन को नवीन प्रेरणा से ओतप्रोत कर दिया और मुझे वह शक्ति प्रदान की, जिससे मैं अपने कठिन भविष्य का सामना कर सका।

चालीस साल पहले के स्टीमरो की चाल बहुत धीमी हुआ करती थी। नीज्नी नोवगोरोद पहुचने मे हमे कई दिन लग गये, पर वे सौंदय स्नात दिन मेरे स्मृति पटल पर ताजा ह।

मौसम सुहाना था। नानी और मैं स्टीमर के खुले डेक पर सारा दिन बिताते थे। ऊपर नीला आसमान, दोनो ओर पतझड के सुनहरे तारो मे मढे हुए वोल्गा नदी के तट, और उनके बीच से गुजरते हुए हम। नदी की छाती पर हल्के कत्थई रग का स्टीमर मद गति से छप छप की आवाज करता हुआ उजली नीली जलराशि को चीरता बढ़ता जाता। उसके पीछे सलेटी रग का एक बजरा बधा हुआ था। उसकी शक्ल मुझे बडे से गोजर की याद दिलाती थी। सूरज न जाने कब ऊचे जा वोल्गा के ऊपर आसमान मे टग जाता। ज्यो-ज्यो हम आगे बढ़ते थे, पट-परिवतन होता जाता था। सामने हरियाली से लदी पहाडियां धरती के घाघरे की सिलवटो जसी लगती थीं। तटों पर गाव, क़स्बे और शहर आते और ओझल हो जाते। दूर से मुझे वे छोटे छोटे प्यारे खिलौनो से लगते, वोल्गा के वक्ष पर पतझड के सुनहले पत्ते तरते रहते थे।

नानी डेक पर कभी इस किनारे और कभी उस किनारे जा खडी होती। वह इस दृश्य की मनोरमता मे तल्लीन हो गयी थी। चेहरे पर

आनदातिरेक की अनोखी चमक, आखें उल्लास से फली हुईं। रह रहकर उसके मुह से निकल जाता था

"देख तो कितना सुदर है यह!"

अक्सर वह इतनी विभोर हो जाती कि उसे मेरे बगल मे होने का भी ध्यान न रहता। दोनो हाथ सीने पर बाधे और होठो पर मुस्कान लिये वह तटवर्ती दृश्यो को एकटक देखती जाती, आखें सजल हो उठतीं। उस वक्त मैं उसके बूटेदार काले घाघरे को पकडकर खींचता।

चौंककर वह कहती

"अरे, मैं तो मानो नींद मे सपना देख रही थी।"

"तुम रा क्यो रही हो?" मैं पूछता।

"ख़ुशी से, अपनी बुढ़ाई से, मेरे लाल!" वह मुस्कराकर जवाब देती। "मैं बूढी हो गयी हू—साठ से भी ऊपर!"

इसके बाद नास की एक चुटकी लेकर वह मुझे साधु-महात्माओ, जानवरो, नेक दिल डाकुओ या भूत प्रेतो की अदभुत कहानिया सुनाने लगती।

कहानी कहते समय उसका स्वर शान्त होता, उसमे सरसता और रहस्य का भाव आ जाता था। मुह मेरे मुह के पास होता और फली हुई पुतलिया मेरी आखो मे टक लगाये रहतीं, और ऐसे वह मानो आंखो की राह मेरे हृदय मे शक्तिदायक आसव उडेलती। वह बोलती नहीं, मानो गाती हो और ज्यो ज्यो कहानी आगे बढ़ती, उसकी बोली और भी लययुक्त होती जाती। उसकी कहानियो मे अपार आनद आता। जब कहानी ख़त्म हो जाती, तो मैं विभोर होकर कह उठता

"और सुनाओ, नानी!"

और कहानी फिर चलने लगती

"इसके बाद बौना भूत अलावघर* के नीचे दुबका रहा। बेचारा अपने नाख़ूनदार पजे मे सेवई की फास लिये देह हिलाता और रो रोकर कहता जा रहा था 'चुहियो, री चुहियो! मुझे बहुत दद हो रहा है, अब मैं नहीं बचूगा, री चुहियो!'"

---

*चारो ओर से बद ईंटो के अलावघर कमरे को गम करने के लिए ठडे देशो मे हर घर मे इस्तेमाल किये जाते हैं। उसके ऊपर चबूतरा होता है जहा लोग सो भी सकते हैं।

यह कहते हुए वह अपने घुटने को बाहो मे कस लेती और खुद भी हिलती डुलती हुई इस तरह] अपना मुह सिकोड लेती, मानो खुद ही तकलीफ मे हो।

स्टीमर के खुशमिजाज और लम्बी दाढियोवाले मल्लाह उसके चारो ओर इकट्ठे हो जाते और लगते हसी के फव्वारे छूटने। सभी नानी की कहानियो की तारीफ करते और कहानिया सुनाने का आग्रह करते

"एक और कहो, नानी!"

बाद मे वे कहते

"नानी, चलो आज हम लोगो के साथ ही खाना खाओ!"

खाने के वक्त वे वोदका से नानी की तथा खरबूजे और तरबूज से मेरी खातिर करते, लेकिन चुपके से, क्योकि स्टीमर पर एक आदमी था, जो लोगो को फल खाने से मना करता था। किसी के हाथ मे फल देखते ही वह छीनकर पानी मे फेंक देता। उसकी पोशाक पुलिस के सिपाही जसी थी, जिसमे ऊपर से नीचे तक पीतल के बटन लगे थे। वह सदा नशे मे चूर रहता था। लोग उसे देखते ही छिप जाते थे।

मा शायद ही कभी डेक पर आती। वह ज्यादातर हम लोगो से अलग ही रहना पसन्द करती थी और हमेशा की तरह प्राय मौन ही रहती। उसका लम्बा सुघड शरीर, सावला कठोर चेहरा, सुनहरे बालो की चोटियो का भारी जूडा—शक्ति और दृढता की वह मूर्ति आज भी हल्के कुहासे या चमकीले बादल की ओट से झाकती हुई सी मेरी स्मृति मे अकित है। भूरी, नानी की आखो की तरह बडी-बडी और तनी हुई आखें रुखाई से उसके चेहरे से ताकती रहतीं।

एक दिन नाराजी से उसने कहा था

"तुम क्या खिलवाड किया करती हो, मा? सब तुम पर हसते रहते हैं!"

"अगर इससे उनका जी खुश होता है, तो हसने दो।" नानी ने सरलता से जवाब दिया था।

स्टीमर नीज्नी पहुचा, तो नानी बच्चो की तरह किलकने लगी। वह किलकारी मुझे याद है। बोल उठी

"देख तो, देख तो, कितना सुदर है!"

यह कहते हुए उसने मेरा हाथ खींचकर स्टीमर के रेलिंग के पास खडा कर दिया और बोली

"वह देख! वही नीज्नी है। कितना मनोहर दृश्य है! गिरजाघरो के गुम्बदो को देख, मानो पख लगाकर आकाश मे उड रहे हो।"

नानी की आखें सजल हो उठीं। मा की ओर मुडकर उसने कहा

"देख, देख, वर्वारा। तू भूल गयी होगी नीज्नी को। आज पी ले इस छलकते प्याले को!"

मा के चेहरे पर रूखी-सी मुस्कान खेल गयी।

इस सुदर नगर के सामने दरिया के बीच स्टीमर रुक गया। चारो ओर जहाज खडे थे—जिधर देखो, मस्तूलो का जगल! एक बडी-सी नाव, जिसपर कई आदमी लदे हुए थे, स्टीमर के पास आयी और उससे लटकायी गयी सीढ़ी के साथ हुक द्वारा सलग्न हो गयी। आगन्तुक डेक पर चढ़ आये। सब के आगे आगे एक दुबला-पतला, नाटा बूढा था, जिसने काला कोट पहन रखा था। उसकी आखें हरी, नाक चिडिया की चोच की तरह नुकीली और दाढी सुनहली लाल थी।

"बाबूजी!" चिल्लाकर मा उधर दौडी और बूढे से चिमट गयी। उसने अपने छोटे छोटे लाल हाथो मे मा का माथा थाम लिया और गालो को थपथपाते हुए भर्राये गले से कहा "मेरी बुद्धू बिटिया? हा! वही तो है अह अह "

नानी लट्टू की तरह चारो ओर घूम रही थी—कभी इसको और कभी उसको चूमती चिपटाती हुई। फिर वह मुझे उन लोगो के पास ले जाकर बोली

"यह तेरा मिखाईल मामा है। यह याकोव है। यह है नताल्या मामी। और ये दोनो लडके तेरे ममेरे भाई है, दोनो का नाम साशा है। और यह तेरी ममेरी बहन कतेरीना है। यही है हम लोगो का कुनबा—देख, कितने लोग हैं!"

नाना ने नानी की ओर मुडकर पूछा

"और तुम कैसी हो, वर्वारा की मा?"

उन्होंने तीन बार एक दूसरे को चूमा।

इसके बाद नाना ने यकायक इस भीड मे से मुझे खींच निकाला और मेरे सिर पर हाथ रखकर चिल्लाये

-615

"अरे, यह कौन है?"

"मैं आस्त्राखान का हू, केबिन से "

मा की ओर घूमकर नाना ने पूछा

"क्या कह रहा है यह?" और जवाब का इतजार किये बिना ही बोले

"हू-ब-हू बाप पर गया है," और फिर सब को नाव मे चलने के लिए कहा।

नाव पर से हम लोग किनारे आये। एक ओर के ऊचे तट पर बनाये गये रास्ते के साथ-साथ पीली मुरझायी घास उगी हुई थी। बीच मे पत्थर की सडक थी, जिससे हम लोग ऊपर चढे।

सब से आगे मेरे नाना और उनकी बगल मे मा थी। नाना मा के कधो तक ही आते थे और तेज तथा छोटे-छोटे कदम बढा रहे थे। मा सिर झुकाकर उन्हे ऐसे देख रही थी, मानो हवा मे तर रही हो। उनके पीछे दोनो मामा चुपचाप चल रहे थे। एक ओर थे मिखाईल मामा—उनके केश काले और कुडलहीन थे, दूसरी ओर याकोव मामा थे—नाना की तरह दुबली देह और घुघराले, चमकीले भूरे बालो वाले। उनके पीछे कुछ मोटी औरतें थीं, जो रग बिरगे कपडे पहने हुए थीं। उनके साथ छ लडके-लडकिया का झुड था। सभी मुझसे उम्र मे बडे और सबके सब गुम-सुम थे। मैं नानी और छोटी नताल्या मामी के साथ चल रहा था। मामी का चेहरा पीला और आखें नीली थीं। उसका पेट बेतरह निकला हुआ था। वह हाफ रही थी और हर दो कदम पर दम लेने के लिए ठहरकर कर रही थी

"ओफ, अब मुझसे एक डग भी नहीं चला जायेगा!"

नानी ने कहा

"ये लोग तुम्हें अपने साथ लाये ही क्यो हैं? कसा बेअक्ल है यह कुनबा!"

मुझे यह सब लोग पसद नहीं आये—न बच्चे, न बडे। उनके बीच मैं अपने को पराया-सा अनुभव कर रहा था। मुझे ऐसा लग रहा था कि नानी ने भी अपना विशिष्ट व्यक्तित्व खो दिया है और मुझसे दूर हो गयी है।

नाना मुझे खास तौर से नहीं रुचे। मेरे अतस्तल से आवाज उठी यह शख्स दोस्त नहीं, दुश्मन है। उनके प्रति मेरे हृदय मे चौकन्नापन और कुतूहल का एक विचित्र भाव उत्पन्न हो गया। मै उनकी गति विधि पर विशेष ध्यान रखने लगा।

चढाई खत्म हो गयी। दाहिने घाट के ठीक ऊपर एकमजिला मकान था, नीचा-सा। उससे सटकर गली निकलती थी। मकान गदे गुलाबी रग से रगा हुआ था। उसकी खिडकिया बाहर की ओर उभडी हुई थीं और छत बहुत नीचे तक झुकी हुई थी। बाहर से मकान बडा दिखाई पडता था, पर भीतर कमरे छोटे छोटे, अधियारे और सामानो से खचाखच भरे थे। उन्हीं तग कोठरियो मे कुनबे के लोग घाट पर स्टीमर के झल्लाये हुए मुसाफिरो की भाति एक दूसरे से रेल पेल करते हुए रहा करते थे। बच्चे अनचाही गौरया की तरह उन कोठरियो मे इधर से उधर फुदका करते थे। पूरे मकान मे एक अजीब और अप्रिय-सी गध बसी हुई थी।

आगन कोठरियो की ही तरह बेढगा था। ऊपर तारो पर कपडो के बडे थान सूख रहे थे। चारो ओर गाढ़े रगीन पानी से भरे बडे-बडे कडाहे रखे थे। इनमे भी कपडो के थान पडे हुए थे। आगन के एक कोने मे एक छोटा-सा नीचा ओसारा टूटी फूटी हालत मे खडा था। उसके अदर बने चूल्हे मे से आग की रोशनी दिखाई दे रही थी और इसपर रखी चीज उबल रही थी, जिसमे से बुद-बुद की आवाज आ रही थी। आड से कोई आदमी बडे जोर से कुछ विचित्र शब्द बोल रहा था

"सदल, सन्दूरी रग, तूतिया "

२

इस तरह मेरा नया जीवन शुरू हुआ—घटनापूर्ण और अवर्णनीय रूप से अनोखा—जिसमे तेजी से उतार चढाव आये। मुझे उसका हर पन्ना याद है, मानो वह किसी प्रतिभाशाली गल्पकार की कही हुई सच्ची धसकभरी कहानी हो। उन बीते दिनो पर नजर दौडाता हू, तो यह विश्वास ही नहीं होता कि वे घटनाए सचमुच घटी थीं। बहुत-सी चीजो को न मानने और अविश्वास से अस्वीकार कर देने को जी

होता है। ऐसा था मलिन और हृदयहीन इस "बेग्रक्ल कुनबे" का वास्तविक जीवन।

पर सत्य दया से अधिक महत्व रखता है। और आज मैं अपना नहीं, वरन् दम घोटनेवाले उस भयकर वातावरण की कहानी लिखने बैठा हू, जिसमे साधारण रूसी जनता रहा करती थी और आज भी रहती है।

मेरे नाना का मकान बैर और वैमनस्य के विषले धुए से भरा हुआ था। हर आदमी के दिल मे दूसरे के प्रति वैमनस्य तथा घृणा का भाव था। बडे लोगो का दिमाग़ तो इस धुए से बिल्कुल विषाक्त हो ही चुका था, बच्चे भी उसके असर से अछूते न थे। नानी की कहानियो से मुझे बाद मे ज्ञात हुआ कि मेरी मा ऐसे वक्त इस घर मे रहने आयी थी, जब मेरे मामा लोग नाना से जायदाद का बटवारा कर देने की माग कर रहे थे। मा के अप्रत्याशित आगमन से यह माग और भी तेज हो गयी। मामा लोगो को डर था कि वह अपने दहेज का माग करेगी, जो "अपनी मनपसन्द" शादी करने के कारण नाना ने विवाह के वक्त उसे नहीं दिया था। उन लोगो का कहना था कि दहेज की रकम भी उन्हीं लोगो के बीच बाट दी जाये। दोनो भाइयो के बीच इस बात को लेकर बहुत दिनो से झगडा चल रहा था कि कौन शहर मे कारखाना खोलेगा और कौन ओका नदी के पार की कुनाविनो बस्ती मे।

हम लोगो को आये थोडे ही दिन हुए थे कि एक रोज खाने के समय रसोईघर मे बडे जोर से झगडा हो गया। यकायक दोनो मामा खडे हो गये और लगे मेज की दूसरी तरफ बैठे नाना की ओर उगलिया नचाकर बडे जोर से गरजने कडकने। वे कुत्तो की तरह दात किटकिटा रहे थे। नाना ने जोर से मेज पर अपने हाथ का चमचा दे मारा, उनका चेहरा तमतमा उठा और गूजती आवाज मे चिल्लाये

"मैं दोनो को घर से निकाल दूगा। दर दर भीख न मागो तुम लोगो ने, तो कहना!"

पर नानी वेदनाविकृत चेहरे से बोली

"बाबू, जो कुछ है, बाट दो इन लोगों को, हटाओ! तुम्हारी परेशानी दूर हो जायगी।"

नाना ने लाल ग्राखें निकाल उसकी ग्रोर देखा ग्रौर गरजकर बोले

"चुप रह! तू ही इन्हे बिगाडती है।"

मुझे बडा ग्रजीब लगा—इतना छोटा-सा ग्रादमी ग्रौर इतने जोर से चिल्ला सकता है कि कानो के पर्दे फट जायें!

मा मेज़ से उठकर खिडकी के पास चली गयी। उसने इधर पीठ कर ली।

मिखाईल मामा ने ग्रचानक ग्रपने भाई के मुह पर एक तमाचा जड दिया। दूसरे मामा जोर से गुर्राकर उनसे गुथ गये। दोनो मे फ़र्श पर पटकापटकी शुरू हो गयी। वे एक दूसरे को पीट रहे थे, गुर्रा रहे थे, गालिया दे रहे थे ग्रौर हाफ रहे थे।

बच्चे यह दृश्य देखकर सिसकने लगे। गर्भवती नताल्या मामी गला फाडकर रो उठी। मा उसे पकडकर बाहर ले गयी। बच्चो की धाई—खुशमिजाज, चेचकरू येव्गेनिया ने उन्हे रसोईघर से बाहर खदेड दिया। इधर कुर्सिया गिर रही थीं। ग्राखिर कारखाने का नौजवान ग्रौर चौडे, मजबूत कधो वाला ग्रप्रेंटिस इवान मिखाईल मामा की पीठ पर चढ बठा ग्रौर गजे, दाढीवाले मिस्तरी ग्रिगोरी इवानोविच ने, जिसकी नाक पर धुधली-सी ऐनक होती थी, एक तौलिया लेकर उनके हाथ बाध दिये।

मामा ग्रपनी काली खशखशी दाढी को जमीन पर रगड रहे थे, ग्रजीब खरखरी-सी ग्रावाजें निकाल रहे थे ग्रौर नाना मेज़ के चारो ग्रोर इधर से उधर भागते हुए चिल्ला रहे थे

"छि, यह सगे भाई हैं—शर्म नहीं ग्राती है इन्हें!"

झगडा ग्रारम्भ होते ही मै डर के मारे ग्रलावघर पर चढ गया था। मैं ग्राश्चर्यचकित होकर वहीं से नीचे का दृश्य देख रहा था। नानी याकोव मामा के चेहरे का खून साफ कर रही थी ग्रौर मामा रो रोकर जोरो से पर पटक रहे थे। नानी हताश स्वर मे कह रही थी

"कब ग्रक्ल ग्रायेगी तुम नालायको को? ग्रादमी हो या जगली पशु!"

नाना ग्रपनी फटी कमीज़ को ठीक कर रहे थे ग्रौर नानी पर बरस रहे थे

"बुड्ढी डायन! तेरे ही पेट की औलाद हैं ये बनमानुस!"

याकोव मामा बाहर चले गये, तो नानी कमरे के देव प्रतिमावाले कोने मे झुककर खडी हो गयी और रोकर बोली

"हे प्रभु, हे मां मरियम! मेरे बच्चों को सदबुद्धि दो!"

नाना खडे मेज को देख रहे थे, जहा हर चीज बिखरी पडी थी। उन्होंने शान्त स्वर मे नानी से कहा

"अपने लाडलो पर कडी नजर रखो, नहीं तो वे किसी दिन वर्वारा को नोच खायेंगे "

"ईश्वर जाने तुम कैसी बातें कर रहे हो! अपनी कमीज उतारो टाके लगा दू!" नानी बोली और दोनो हथेलियो में उनका चेहरा लेकर माथा चूम लिया। नाना ने, जो उसके आगे बच्चे से लग रहे थे, उसकी छाती मे अपना सिर छिपा लिया।

"लगता है, जायदाद बाट ही देनी चाहिए।"

"हा, जरूर बाट देनी चाहिए।"

दोनो बडी देर तक आपस मे बाते करते रहे। शुरू मे मेल मिलाप से, पर शीघ्र ही नाना परो से फर्श कुरेदने लगे, जैसे मुर्गे लडने के पहले करते हैं और उगली नचाकर नानी को धमकाने लगे। वह फुफकारते हुए बोले

"मै तुम्हे खूब समझता हू। तुम्हें वे दोनो हमसे ज्यादा प्यारे हैं। लेकिन याद रखो, तुम्हारा मिखाईल एक नम्बर का पाखडी है और याकोव है परले सिरे का नास्तिक। वे बात की बात मे हमारी सारी जायदाद उडा डालेगे, कानी-कौडी भी बच जाये तो कहना!"

अलावघर पर असावधानी से हिलने डुलने के कारण इस्तरी पट्टियो पर झनझनाती हुई नीचे गिर पडी। जूठा डालने की बाल्टी मे जोरो का छपाक हुआ। नाना उछलकर पट्टी पर चढ गये, झटके से मुझे नीचे खीच लिया और इस तरह ताकने लगे, मानो पहली बार मुझे देख रहे हो। बोले

"अलावघर पर तुझे किसने छिपाया? तेरी मा ने?"

"मैं खुद चढा था।"

"झूठ बोलता है।"

"मैं झूठ नहीं बोल रहा। मुझे डर लगा, इसलिए ग्रलावघर पर चढ़ गया।"

मुझे ढकेलकर सर पर एक हल्की-सी चपत देते हुए बोले "बिल्कुल बाप जसा है! भाग बाहर यहा से।"

मैं तो ख ुद भी यही चाहता था।

मैंने यह ग्रनुभव किया कि नाना ग्रपनी पनी हरी ग्राखें मुझपर जमाये रहते हैं। यह मैं साफ महसूस करता था ग्रौर उनसे डरता था। मुझे याद है कि मैं हमेशा उन झुलसनेवाली ग्राखो से बचने की कोशिश किया करता था। मुझे लगता कि नाना क्षुद्र प्रकृति के ग्रादमी हैं। वह सभी से टेढ़ी बात करते हैं ग्रौर लोगो को चिढाने ग्रौर तग करने मे उन्हे मजा ग्राता है। उनका तकिया कलाम था

"ऊह! तुम भी क्या ग्रादमी हो!"

ग्रौर उनकी वह लम्बी "ऊह" मेरा ख ून सद कर देती । ऐसे लगता, मानो ग्रथाह जल मे ग्रसहाय गिर पडा हू।

शाम की चाय के समय फिर सारा परिवार एक जगह जमा होता। नाना, मामा लोग ग्रौर कमशाला के कारीगर रसोईघर मे ग्राते, थके हारे ग्रौर उनके हाथ रगो से रगे ग्रौर तेजाब से जले तथा बाल फीते से बधे होते। उस वक्त उनकी शक्ले रसोईघर मे रखी देव प्रतिमाग्रो जसी लगतीं। इस खतरनाक ग्रवसर पर नाना मेरे ठीक सामने बठते ग्रौर सब से ज्यादा मुझी से बोलते। उनके पोते ग्रौर पोतिया इसी कारण मुझसे डाह किया करते थे। नाना की हर हरकत बडी चुस्त ग्रौर दुरुस्त होती थी। उनकी साटन की कामदार वास्कट पुरानी ग्रौर घिसी हुई थी, सूती कमीज मे शिक्नो की भरमार थी ग्रौर पतलून मे घुटनो पर पवद लगे थे। फिर भी वे ग्रपने बेटो से ग्रधिक साफ-सुथरे नजर ग्राते थे, यद्यपि मामा का पहनावा कहीं ग्रधिक रईसाना था—सूट, कलफदार क़मीज ग्रौर गले मे रेशमी रूमाल।

मेरे ग्राने के थोडे ही दिनो बाद उन्होने मुझे प्रायना याद कराने का काम शुरू कर दिया। दूसरे बच्चे मुझसे उम्र मे बडे थे। वे हमारे घर की खिडकी से दिखाई देनेवाले उस्पेंस्की गिरजाघर के पादरी से लिखना पढना सीखते थे।

मेरी सीधी और भीरु नताल्या मामी मुझे पढाती थी। उसका चेहरा बच्चो की तरह भोला था और आखें ऐसी स्वच्छ थीं कि चाहो तो आर पार देख लो।

नजदीक बठकर उसे एकटक निहारना मुझे बहुत अच्छा लगता था। पर मेरी टकटकी से वह झेंपने लगती थी। आखें नीची और गर्दन तिरछी करके वह अस्फुट स्वर मे कहती

"हा, इसको पढ़ो—'प्रभु, तने' "

"'तने' माने?"

"सवाल मत पूछो," वह नीची नजर से इधर ताक्ती हुई जवाब देती। "सवाल पूछने से कठिनाई बढ जाती है। बस जसे मै बोलती जाती हू, वसे ही दुहराते जाओ। कहो 'प्रभु तने' "

मेरी समझ मे नहीं आया कि पूछने से कठिनाई बढ क्यो जाती है। 'तने' शब्द ने मेरे लिए रहस्यमय अथ धारण कर लिया और दुहराते वक्त मैंने उसे जान-बूझकर विकृत कर दिया

"प्रभु, तिसने "

पर मेरी गोरी चिट्टी मामी, जो मालूम होता था कि मोम की तरह गली जा रही है, धय न खोती। सुधार कर कहती

"कहो, 'तने' "

मगर मुझे न मामी सरल मालूम हुई, न उसका सिखाया पाठ। मैं धीरज खो बठा, जिसका परिणाम यह हुआ कि प्राथना याद करना दुष्कर हो गया।

एक दिन नाना ने मुझसे पूछा

"अलेक्सी, अच्छा आज दिन भर तू कहा था? यह तो तेरे माथे का गुमटा ही बता रहा है। भोडे लडको के खेल मे सिर टकराते देर नहीं लगती। प्रभुवाली प्राथना याद हो गयी?"

मामी अपनी मद आवाज मे बोली

"उसे जल्दी याद नहीं होता।"

नाना अपनी लाल भौंहो पर बल डालकर व्यग्यपूर्वक हसे और बोले

"ऐसी बात है तो एक दिन इसकी मरम्मत करनी होगी।"

मेरी ओर घूमकर उन्होंने पूछा

"पिताजी ने कभी तेरी मरम्मत की थी?"

मैं उनका मतलब नहीं समझा, इसलिए चुप रहा। मेरी मा ने कहा

"मक्सिम कभी बच्चे को मारते नहीं थे और मुझे भी उसे छूने को मना कर दिया था।"

"क्यो?"

"वे कहते थे कि मार-पीटकर कभी कुछ नहीं सिखाया जा सकता।"

नाना ने चिढ़कर कहा

"यह मक्सिम हर बात मे मूख था। ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दे।"

उनकी बात मुझे बुरी लगी। इसे उन्होने ताड लिया।

"तू क्यो मुह बना रहा है?" अपने लाल, चमकीले बालो पर हाथ फेरते हुए बोले

"सनीचर के दिन साशा का बखिया उधेडा जायेगा, क्योंकि उसने अगुश्ताना आग मे डाल दिया था।"

"कैसे बखिया उधेडा जायेगा?" मैंने पूछा।

सब लोग हस पडे और नाना ने जवाब दिया

"घबरा मत। दो दिन मे तुझे भी मालूम हो जायेगा कि बखिया कसे उधेडा जाता है।"

मै कोने मे छिप गया और सोचने लगा "बखिया तो रगाई के लिए आये कपडो का उधेडते हैं। मगर लगता है मरम्मत करना, मारना और बखिया उधेडना एक ही चीज को कहते हैं। लोग मारते तो घोडो, कुत्तो और बिल्लियो को हैं। इसके अलावा आस्त्राखान मे पुलिस के सिपाही पारसियो को मारते थे। यह मैंने अपनी आखो से देखा था, लेकिन छोटे बच्चो को मारते मैंने किसी को नहीं देखा था। हा, मेरे मामा लोग कभी-कभी अपने बच्चो को एकाध चपत या थप्पड लगा दिया करते थे, लेकिन बच्चे इसकी परवाह नहीं करते थे। माथा सहलाकर थोडी देर बाद वे फिर खेल मे मगन हो जाते थे। कभी कभी मैं उनसे पूछता था कि चपत लगने से दद तो नहीं होता। वे हमेशा बहादुरी से यही जवाब देते

"बिल्कुल नहीं।"

अंगुश्ताने का क़िस्सा मुझे मालूम था। बात यह थी कि चाय के बाद रात के भोजन का समय होने तक मिस्तरी और मेरे मामा रंगे हुए कपड़ों को जोड़कर सीते थे। सिलाई के बाद उनमें दस्ता व सेमुल टांक दिये जाते थे। मिस्तरी ग्रिगोरी को कम सूझता था। उससे मज़ाक करने के लिए मिखाईल मामा ने अपने नौ साल के भतीजे को चुपके से सिखाया कि मोमबत्ती की आग में मिस्तरी का अंगुश्ताना गरम कर दे। साशा ने चिमटी से अंगुश्ताने को आग में लाल कर ग्रिगोरी की बग़ल में रख दिया। ख़ुद वह अलावघर की आड़ में छिप गया। उसी वक़्त इत्तफ़ाक़ से नाना वहाँ आ गये और सिलाई करने के लिए वही अंगुश्ताना उठा लिया।

यकायक बड़े ज़ोर का हल्ला उठा। मैं रसोईघर की ओर दौड़ा। नाना वहाँ हास्यास्पद ढंग से उछलते-कूदते और जली हुई उंगलियों को कान पर रखकर ज़ोर से चिल्ला रहे थे

"यह किस काफ़िर की करतूत है?"

मिखाईल मामा अंगुश्ताने को मेज़ पर ढुलकाकर फूंक रहे थे। ग्रिगोरी मिस्तरी अपनी सिलाई में लीन थे, जैसे कुछ हुआ ही न हो। मोमबत्ती की फड़फड़ाती लौ उनके गंजे सिर पर छाया डाल रही थी। याकोव मामा भी दौड़े आये। वहाँ का दृश्य देखकर वह हँसी न रोक सके और अलावघर की आड़ में छिप गये। नानी जली उंगलियों पर लेप करने के लिए कच्चा आलू कद्दूकश करने लगी।

मिखाईल मामा बोले

"यह याकोव के बेटे की कारस्तानी है।"

"तुम झूठ बोलते हो," कहते हुए याकोव मामा कूदकर अलावघर की बग़ल से निकले।

एक कोने से उनके बेटे ने चिंघाड़कर कहा

"ठीक, झूठ बोल रहे हैं। उन्होंने ख़ुद मुझे ऐसा करने को कहा था।"

दोनों मामाओं के बीच तू तू मैं मैं होने लगी। नाना फ़ौरन शान्त हो गये। उंगली पर कद्दूकश कि[illegible] हुए [illegible] का लेप करने के बाद बिना एक शब्द बोले वह [illegible] गये।

सभी ने कहा कि [illegible] मामा की है।

स्वभावतः, चाय के समय मैंने सवाल किया—क्या मामा का भी बखिया उधेड़ा जायेगा?

नाना ने तिरछी नजर से मुझे देखा और बड़बड़ाये

"हां, यह करना अच्छा रहता।"

मिखाईल मामा मेज पर मुट्ठी पटककर मेरी मां से बोले

"वर्वारा! अपने पिल्ले को सभालो! नहीं तो किसी दिन इसकी गर्दन मरोड़ दूंगा!"

मां बोली

"है हिम्मत, तो छूकर देख लो किसी दिन!"

सब लोग चुप हो गये।

मां बहुत कम बोलती, पर उसका जवाब मुंहतोड़ होता। किसी की हिम्मत न पड़ती कि फिर उससे मुंह लगता।

मैं जानता था कि सभी मेरी मां से डरते हैं। नाना भी उससे भिन्न स्वर में बात करते थे। औरों के मुकाबले मां से बात करते समय उनकी आवाज मद्धिम हो जाती थी। इससे मुझे बड़ा संतोष होता था। अपने ममेरे भाइयों से मैं गर्व से कहता था

"मेरी मां के आगे कोई नहीं टिक सकता।"

वे भी इसे कबूल करते थे।

लेकिन अगले सनीचर को एक ऐसी घटना घटी, जिसने मां के बारे में मेरा यह विश्वास डिगा दिया।

हुआ यह कि सनीचर आने से पहले मैं भी बुरी तरह फंस गया।

कपड़ों की रंगाई मुझे बड़ी अच्छी लगती थी और मैं बड़े मामा को टब लगाकर यह काम करते देखा करता था। पीले कपड़े को काले पानी में डाल दिया और वह जम्बुकी—गहरा नीला हो गया। भूरे कपड़े को लाल पानी में डालकर निकाल लिया और वह गहरा लाल हो गया—शहतूती। लगता था यह सब कुछ बहुत साधारण, पर इसका रहस्य समझ में नहीं आता था।

खुद भी कुछ रंगने को मेरा बड़ा मन हुआ। एक दिन याकोव मामा के लड़के साशा से मैंने अपनी हार्दिक इच्छा प्रकट की। साशा बड़ा भद्र और गम्भीर लड़का था। उसका काम था सदा बड़े लोगों का हुक्म को

रहना और उनका कोई न कोई काम करते रहना। नाना को छोड
सभी कहते थे कि याकोव का बेटा साशा बडा फुर्तीला और नेक है
पर बूढे नाना उसे हिकारत से देखते थे। कहते थे

"बडा खुशामदी टट्टू है। ऊह "

याकोव मामा का साशा सावला और दुबला था। उसकी आ
केकडे की तरह बाहर निकली हुई थीं। वह जीभ दबाकर बडी जल्द
जल्दी बोलता था, जिससे बात आधी उसके मुह मे ही रह जाती थी
बोलते समय वह गदन नीची और नजर तिरछी रखता था, मानो छि
जाने के लिए कोई कोना ढूढ़ रहा हो। साधारणत उसकी भूरी आ
स्थिर रहती थीं, लेकिन उत्तेजित होने पर आखो की सफेदी सहि
डोलने लगती थीं।

मुझे वह अच्छा नहीं लगता था। मिखाईल मामावाला साशा मु
उससे कहीं अधिक पसन्द था, यद्यपि वह ढीला-ढाला और ऐसा लडक
था, जिसकी तरफ दूसरो का ध्यान नहीं जाता था। शान्त प्रकृति औ
अपनी विनम्र मा की तरह उदास आखो और सुखद मुस्कान वाल
था वह। उसके दात बडे भद्दे थे। ऊपर के जबडे मे उगकर वे दोहरं
कतार मे मुह से बाहर निकल आये थे। साशा की उगलिया सद
पिछली कतार के दातो मे उलझी रहती थीं। कोई साथी उन्हें छूक
देखना चाहता, तो बेचारा साशा कभी आपत्ति नहीं करता था। मग
दातो को छोड मुझे उसमे कोई आकर्षण नहीं मालूम होता था। लोग
से भरे इस घर मे साशा सदा एकाकी रहता। किसी अधरे कोने मे
या नाम की खिडकी के दासे पर वह चुपचाप बठा रहता – एकदा
अकेला। जब हम दोनो साथ होते, तो न मैं बोलता न वह। दोनं
सटकर खिडकी के दासे पर बठे हुए यह देखा करते कि कसे सध्य
के लाल आकाश के नीचे उस्पेंस्की के बडे गिरजे के सुनहले गुम्बद के
चारो ओर डोमकौवे मडराते हैं। वे उडते और आकाश को बेधते ऊप
चले जाते हैं और फिर पख समेटकर हवा मे डुबकी मारते हैं। जब
आसमान मे कालिमा छाने लगती, तो वे सभी एक साथ पख फलाकर
उड जाते और अपने पीछे छोड जाते सूनापन। ऐसे दृश्य मे तन्मय होन
पर भला कौन निस्तब्धता भग करना चाहता? दोनो ही मौन रहते,
हृदय उस समय एक टासभरे आनद से सराबोर होता।

इसके विपरीत, याकोव मामा का साशा हर चीज के विषय मे बुजुर्गों की तरह बहुत-सी बाते कर सकता था। उसे जब मालूम हुआ कि मैं भी रगरेजी करना चाहता हू, तो झट बोला कि इतवार के दिन बिछाया जानेवाला सफेद मेजपोश आलमारी से निकालकर उसे गहरे नीले रग मे रग डालो!

"जानते हो, उजले कपडे पर रग बडा बढिया चढता है," उसने बडी सजीदगी से कहा।

मैंने वह भारी मेजपोश आलमारी से निकाल लिया। लेकिन जसे ही मैंने उसका एक कोना "जम्बूकी" वाले कडाहे मे डाला कि इवान ने दौडकर मुझे ढकेल दिया और हाथ से मेजपोश छीन लिया। भीगे कोने को अपनी मजबूत हथेलियो से निचोडते हुए उसने मेरे ममेरे भाई को, जो ओसारे मे खडा होकर सारा तमाशा देख रहा था, पुकारा

"जल्दी से दादी को बुला लाओ।"

फिर अपना रूखे, काले बालो वाला सिर मेरी तरफ हिलाते हुए बोला

"देखना, अब तुम्हारी कसी दुर्गति होगी!"

नानी फौरन दौडी आयी, यह काड देखकर अवाक रह गयी और हास्यास्पद ढग से मुझे डाते हुए रो भी पडी

"अरे मेमने के बच्चे! आफत की दुम! यह क्या किया तूने?"

इसके बाद वह इवान से अनुनय करने लगी

"इवान! देख, इसके नाना को खबर न होने पाये। मैं मामला पर पर्दा डाल दूगी। कुछ दिनो बाद बात आयी गयी हो जायेगी।"

इवान स्वय उद्विग्न था। उसने रग बिरगे धब्बो वाले पेशबद से अपना हाथ पोछते हुए कहा

"मुझे क्या पडी है ऐसा करने की? पर तुम्हारा साशा भडाफोड कर देगा।"

"उसे मै कुछ पसे दे दूगी," नानी ने मुझे घर के भीतर ले जाते हुए कहा।

सनीचर को शाम की प्रार्थना के ठीक पहले कोई मुझे रसोईघर मे लिवा ले गया। वहा अधेरा और चारो ओर चुप्पी थी। बरामदे और कमरो के दरवाजे कसकर बद कर दिये गये थे। खिडकी के बाहर

पतझड की शाम का सफेद कुहासा छाया था और बूदाबादी हो रही थी। अलावघर के काले मुह के पास बेंच पर इवान परेशान-सा बैठा था। उसके चेहरे पर असाधारण उद्विग्नता थी। नाना कोने मे पानी से भरे टब के पास खडे थे और उसमे से चिक्ने, छिले बेंत निकालकर उन्हे "सररर" की आवाज के साथ हवा मे घुमाकर देख रहे थे। नानी एक ओर अधेरे मे खडी जोर-जोर से सुघनी सूघती हुई बडबडा रही थी

"निर्दयी कही के! इसमे आनद आता है इनको "

याकोव का साशा रसोईघर के बीचोबीच एक स्टूल पर बैठा मुट्ठियो से आखें मल रहा था और परायी, किसी बूढे भिखमगे की सी आवाज मे जोर-जोर से रोकर कह रहा था

"प्रभु ईसा के नाम पर माफ कर दीजिये "

मिखाईल मामा का साशा और उसकी बहन कुर्सी के पीछे एक दूसरे से सटे यो खडे थे, मानो लकडी के दो खम्भे हो।

नाना हथेली पर लम्बा भीगा बेंत सटकारते हुए बोले

"पहले अपनी करनी का मजा चख ले, फिर माफ कर दूगा उतार पतलून!"

उनका स्वर शात था। न तो उनकी आवाज, न चरमराती कुर्सी पर हिलते डुलते साशा के रुदन और न ही अधेरे कोने मे नानी के पावो की रगड ही नीची, कालिख पुती छतवाले इस अधियारे रसोईघर की उस अविस्मरणीय निस्तब्धता को बेध पा रही थी।

साशा उठा, पतलून की पेटी खोलकर उसे घुटनो तक खिसका दिया और इसके बाद लडखडाते पावो से बेंच पर पट लेट गया। यह भयानक दृश्य था। मेरे पाव भय से कापने लगे।

लेकिन उससे भी भयानक दृश्य तब उपस्थित हुआ, जब इवान ने एक लम्बे तौलिये को उसकी गर्दन पर और कांखो के नीचे से गुजारकर उसे बेंच से बाध दिया और उसके दोनो पर दबाकर खडा हो गया।

नाना ने कहा

"अलेक्सेई, इधर आ! तुझी को पुकार रहा हू! देख, खलिया उधेडना इसे कहते हैं। एक "

कहकर उन्होने एक बेंत साशा की नगी देह पर मारा। वह चीख उठा।

"ढोंग नहीं कर," नाना बोले, "अभी कहां चोट लगी है? इस बार देखना!"

इस बार बेंत का दाग त्वचा पर साफ उभड आया—एक भद्दा, लम्बा, लाल निशान। साशा हठात "ऊई मा" कर उठा।

नाना ने दनादन बेंत चलाना शुरू किया

"यह ले! यह बढ़िया लगा? नहीं? अच्छा तो यह देख, यह है अगुश्ताना!"

जब उनका हाथ ऊपर उठता, मेरे कलेजे मे एक कसक-सी उठती और जब हाथ नीचे आता, तो मुझे लगता कि मै भी धम से नीचे गिर पड़ा।

साशा की ममभेदी चिल्लाहट असह्य थी।

"अब कभी नहीं करूगा। मेजपोश के बारे मे मैंने ही तो बताया था आपको। मैंने ही तो बताया था आपको! मैंने ही तो "

नाना ने बहुत शान्त भाव से, मानो भजनावली पढते हुए कहा

"चुगली खाने से तेरी जान नहीं बच सकती। चुगलखोर की ही पहले मरम्मत की जाती है लो, यह मेजपोश की चुगली के लिए!"

नानी ने दौडकर मुझे अपने पीछे छिपा लिया। बोली

"खबरदार, जो अलेक्सेई को हाथ लगाया। मैं तुम्हारे जसे निदयी को उसे छूने भी न दूगी!"

वह दरवाजे को लातो से पीटने लगी और चिल्लायी

"वर्वारा! वर्वारा!"

नाना ने झपटकर नानी को ढकेल दिया और मुझे घसीटकर बेंच के पास ले गये। मैं छूटने के लिए छटपटाने लगा, उनकी लाल दाढी खींच ली तथा उगली को दाता से काट लिया। गुस्से से गरजते हुए उन्होने मुझे कसकर पकड लिया और मुह के बल जोर से बेंच पर दे मारा। उनकी पागलो जसी चिघाड मुझे याद है

"बाधो इसे! वरना जान से मार दूगा।"

और याद है मा का सफेद चेहरा और विशाल आखें। वह बेचनी से बेंच के चारो ओर दौड रही थी और खरखरी सी आवाज मे कह रही थी

"पिताजी! नहीं मारो! छोड दो इसे!"

नाना ने पीटते-पीटते मुझे अधमरा कर दिया। मै बेहोश हो गया। उसके बाद मैंने खाट थाम ली। मुझे उन दिनो की स्पष्ट याद है। एक छोटे-से कमरे मे, जिसमे सिफ एक खिडकी थी, मैं एक चौडे गरम पलग पर पेट के बल पडा हुआ था। कमरे के कोने मे, जहा बहुत सी देव प्रतिमाए रखी थीं, एक छोटा-सा लाल दीपक रात दिन जला करता था।

बीमारी के वे दिन मेरी जिदगी के महत्त्वपूण दिन थे। मुझे ऐसा लगा कि उन थोडे-से दिनो मे मै बरबस बडा हो गया और मेरे चरित्र मे एक नयी विशेषता आ गयी। हृदय दूसरो के प्रति गहरी सवेदना से परिपूण हो गया। ऐसा मालूम हुआ कि किसी ने कलेजे पर की खाल छील दी है। अब अपने या दूसरो के दुख और हृदय को लगनेवाली ठेस से ऐसा जान पडता, मानो किसी ने ताजे घाव को छू दिया हो।

सबसे अधिक हैरानी तो मुझे नानी और मा की बातचीत सुनकर हुई। लम्बी चौडी, सावली नानी उस छोटे-से कमरे मे मा के ऊपर बाज की तरह झपटी, उसे देव प्रतिमाओ वाले कोने मे ले जाकर घेरा और फुफकारकर बोली

"तूने उसे जबदस्ती क्यो नहीं छुडा लिया?"

"मैं डर गयी थी," मा ने उत्तर दिया।

"छि, वर्वारा! शम आती है तुझे! ऐसी लम्बी चौडी औरत होकर तुझे डर लगता था? मैं बूढ़ी हू, फिर भी नहीं डरती!"

"बस करो, मा! मुझे खुद ही बहुत बुरा लग रहा है!"

"तेरे मन मे उसके लिए जरा ममता नहीं है। उस अनाथ पर तुझे दया नहीं आती!"

"मैं खुद जीवन भर के लिए अनाथ हू, मा!" मा स्वर मे बोली।

इसके बाद दोनों कोने मे पडे सदूक पर बठकर रोने लगीं मेरी मा ने कहा

"अलेक्सेई के ही कारण मैं यहा ठहरी हुई हू। वह न होता, तो मैं इस घर की हवा भी पास न फटकने देती। इस नरक का अब मुझसे बर्दाश्त नहीं होता, मां। मुझमे शक्ति नहीं है "

"मेरी बिटिया! मेरे दिल के टुकडे   ओफ!" नानी तरल स्वर मे बोली।

अब मुझे मालूम हो गया। मा को मैंने ग़लत ही शक्तिमयी समझा था। औरो की तरह वह भी नाना से डरती थी। और इस मकान मे, जहा का जीवन उसकी बर्दाश्त के बाहर था, वह मेरे ही कारण रह रही थी। यह सोच मेरा जी बठ गया। उसके थोडे ही दिनो बाद मा कहीं, किसी के यहा मिलने मिलाने चली गयी।

एक दिन अचानक मानो छत से टपक पडे हो, मेरे नाना मुझे देखने आये। वह पलग के सिरे पर बठकर बफ जसी सद उगलियो से मेरा माथा छूने लगे।

"क्सी तबीयत है, जनाब? बोल न! गुस्सा नहीं रखते मन में!"

मेरे जी मे आया कि बुड्ढे को एक लात दू, लेकिन हिलने डुलने से दद होता था। उनके बाल पहले से अधिक लाल लग रहे थे। वह पलग पर बठकर सिर हिला रहे थे और दीवारों की ओर इधर से उधर देख रहे थे, मानो नजर मिलाते हुए झेंपते हो। कुछ मिनटो के बाद उन्होंने जेब से मीठे आटे का बना एक बकरा, दो मीठी रोटिया, एक सेब और कुछ मुनक्का निकाला और इन सभी चीजो को मेरे मुह के पास तकिये पर रखकर बोले

"देख, मैं तेरे लिए उपहार लाया हू।"

इसके बाद झुककर उन्होने मेरा माथा चूम लिया और लगे बातें करने। बात करते समय वह अपने छोटे, खुरदरे और पीले रग से रगे हुए हाथ से, जो उनके पछियों जसे टेढ़े, नुकीले नाख़ूनो मे ख़ास तौर पर दिखाई दे रहा था, मेरे बालो को सहलाने लगे।

"तुझे ज्यादा मार पड गयी। असल मे तेरे दात काटने और नाख़ून गडाने से मैं आपे से बाहर हो गया। ख़र, इस बार ज्यादा पड गयी, तो अगली बार उसका अवश्य ख़्याल रखा जायेगा। एक बात याद कर ले। घर के लोगो की मार का बुरा नहीं मानना चाहिए। वे भले के लिए मारते है। मगर बाहर के आदमी को कभी हाथ न लगाने देना चाहिए। घर के लोगो की बात और है। छुटपन मे मैंने कम मार नहीं खायी है। तू भयानक सपने मे भी नहीं सोच सकता,

अलेक्सेई, कि मेरी कसी ठुकाई हुआ करती थी। यह मार देखकर भगवान भी रो देता होगा, लेकिन उसी मार ने मुझे आदमी बना दिया। जानता है, मैं बिना बाप का था और मेरी मां भीख मांगकर गुजर करती थी। लेकिन देख आज मैं क्या हू—कारखाने का मालिक और इतने आदमी मेरे हुक्म पर चलते हैं।"

अपने दुबले-पतले गठे शरीर को मुझसे सटाकर वह आसानी और फुर्ती से वजनी और जोरदार शब्दो को एक दूसरे से जोडते हुए अपने बचपन की कहानी कहने लगे।

उनकी हरी आखो मे चमक थी। केश उत्तेजना से खडे थे। वह जोर-जोर से कह रहे थे

"तू यहा भाप से चलनेवाले स्टीमर से आया था। पर अपनी जवानी मे हमने अपनी भुजा की शक्ति से वोल्गा के प्रवाह के विरुद्ध बजरों को चलाया है, बजरा रहता पानी की धार मे और हम होते किनारे पर। नगे पर, तट के नुकीले रोडो और चट्टानो पर बजरे को खींचते हुए। भोर से रात तक यही श्रम चलता। सूरज की किरणो से माथा तप जाता। ऐसा मालूम होने लगता कि लोहे का खौलता कडाह है। देह धनुष की तरह तन जाती। हड्डी हड्डी चरमरा उठती। लेकिन चलना था कि चलते ही चले जा रहे हैं। रास्ता दिखाई नहीं दे रहा था। माथे का पसीना आखो मे भर आता, लगता कलेजा अब फटा तब फटा। मुह से बार बार अस्फुट कराह निकल जाती। ओफ, अलेक्सेई! तुम लोगो ने तक्लीफ नाम की चीज देखी ही नहीं! चलते चलते कधे की रस्सी यकायक ढीली पडती और हम, थकान से चूर, गिर पडते मुह के बल जमीन पर। लेकिन गिर पडने मे आनद था, राहत थी, क्योकि उसका अर्थ था शक्ति की आखिरी बूद का निकल जाना। बेशक दम लो, बेशक दम तोड दो। यही थी हमारी जिदगी। प्रभु ईसा आखें खोलकर देख रहे थे और हम बिता रहे थे ऐसा ही जीवन। तीन बार बजरा टानते हुए मै वोल्गा के एक छोर से दूसरे छोर तक हो आया—सिम्बीस्क से रीबिस्क तक, सरातोव से यहा तक और आस्त्राखान से मकार्येव के मेले तक—हजारो कोस! लेकिन चौथे साल मालिक ने मुझे तरक्की दे दी। उसने मेरी असाधारण क्षमता को चीन्हा और मुझे बजरे के मजदूरो का मुखिया बना दिया।"

कहानी आगे बढ रही थी और साथ ही नाना का आकार मेरी आखो मे मेघ की तरह फलता जा रहा था। वह दुबला-पतला, नाटा बुड्ढा किसी पुरानी कहानी का अतुलनीय बलशाली नायक बन गया, ऐसा नायक, जिसने अकेले अपनी भुज शक्ति से नदी के प्रवाह पर मटमले रग का विशाल बजरा टानकर चढ़ा दिया था

कहानी कहते-कहते नाना पलग से नीचे उतरकर प्रदशन भी करने लगते—बुर्लाक* लोग किस तरह रस्सी टानते हैं या बजरे से पम्प द्वारा पानी निकालते हैं। बीच मे मद्धिम लय मे वह कोई अपरिचित गीत गाने लगते। फिर उछलकर पलग पर आ बठते, मानो जवानी की उमग लौट आयी हो। उस वक्त वह मुझे अदभुत जीव मालूम होते। उनका स्वर अधिकाधिक गम्भीर और विश्वासप्रद होता जाता। कहानी चलती जा रही थी

"लेकिन उस अकथनीय कष्ट मे भी जीवन का उल्लास हमारा साथ न छोडता। गमियो की शाम को बजरा जिगुली पहाडियो के करीब रात के लिए ठहर जाता और हम लोग हरियाली से लदी एक पहाडी के नीचे डेरा डाल देते। उस वक्त मौज की अनिवचनीय घडी आरम्भ हो जाती। अलाव लगाकर हम लोग उसके गिद बठ जाते। आच पर दलिये की देगची चढा दी जाती और तब कोई बुर्लाक बिरहा की हूकभरी तान छेड देता। फिर क्या था? गान की तान मे हम सभी शामिल हो जाते। उस वक्त वहा ऐसा समा बधता कि सुननेवाले का रोम रोम पुलकित हो उठता। खुद वोल्गा झूम उठती। मतवाले घोडे की तरह उसकी धार उफनने और लरजने लगती। ऐसा मालूम पडता कि वह उमग मे भरकर आकाश को छूना चाहती है। हम सभी तन्मय हो यह तक भूल जाते कि चिंता और उद्विग्नता किस चिडिया का नाम है। खाना पकानेवाला आग पर चढ़े दलिये को भी भूल जाता। वह उफनकर गिरने लगता, तब पकानेवाले के सिर पर धौल जमाकर कोई बोल उठता, 'अबे, गीत मे मस्त, चूल्हे का भी ख्याल कर।'"

कई बार लोग दरवाजे पर आकर नाना को पुकार गये, लेकिन मैंने आग्रह किया

---

*बुर्लाक—बजरा खींचनेवाला।

"अभी मत जाओ!"

नाना हसते हुए कहते

"कह दो प्रतीक्षा करें, आता हू।"

शाम तक वह मुझे कहानिया सुनाते रहे और जब प्यार से विदा लेकर चले गये, तो मुझे एहसास हुआ कि वह क्षुद्र या भयानक नहीं है। इसी आदमी ने मुझे इतनी बेरहमी से पीटा था, यह याद आने पर मुझे बहुत दुख होता। लेकिन मैं मार को भूल नहीं सका।

नाना के आने से दूसरो का रास्ता भी खुल गया। अब सवेरे से शाम तक कोई न कोई मेरी चारपाई पर बठा रहता और वे सभी तरह-तरह से मेरा मन बहलाने की कोशिश करते। मुझे याद है उनके प्रयत्न सदा सफल नहीं होते थे। नानी सबसे ज्यादा आती थी, वही रात को मेरे साथ सोती थी। आनेवालो मे जिस आदमी ने मेरे दिल को सबसे ज्यादा मोह लिया, वह था इवान। वह शाम को आया-हट्टा-कट्टा, गठा हुआ शरीर और चौडी छाती, काले घुघराले बालों वाला बडा-सा सिर। वह छुट्टी के दिनवाली खास पोशाक पहने हुए था—सुनहरे रग की रेशमी क़मीज, मुलायम सूती पतलून और चरमर करते हुए चमडे के जूते। उसके बाल मुलायम और चमकदार थे। घनी भौंहो के नीचे धनुषाकार आखो मे ज्योति थी। होठो के ऊपर भीगती मसे, जिनकी छाह मे सफेद दात झलक रहे थे। देव प्रतिमाओ के नीचे सदा जलनेवाले लाल दीये की मद ज्योति मे उसकी रेशमी कमीज आभा दे रही थी।

आस्तीन उठाकर उसने अपनी बाह दिखायी। उसपर बेंत की मार के अनगिनत लाल निशान पडे हुए थे। बोला

"देखो तो, कसे सूजी हुई है। अब तो यह काफी अच्छी हो गयी है। उस वक्त इसे देखते तो! असल मे तुम्हारे नाना आपे से बाहर हो रहे थे। उस वक्त शायद वह तुम्हें खत्म ही कर देते, इसीलिए मैं बेंत के नीचे अपनी बाह रखने से बेंत के टूटने का इतजार करने लगा। सोचा कि जब तक वह दूसरा लायेंगे, तब तक तुम्हारी नानी या मा को तुम्हें वहा से हटा देने का मौका मिल जायेगा। मगर देर से भिगोकर रखा गया बेंत लचीला था और टूटा नहीं। फिर भी कई

बेंत तुम्हें नहीं लगे, तुम मेरी बाह पर उनकी सख्या गिन सकते हो। आखिर मैं भी तो चलता पुरजा हू।"

उसने प्यारी और रेशमी हसी का ठहाका लगाया । एक बार फिर अपनी सूजी हुई बांह की ओर देखकर बोला

"मुझको तुम्हारी हालत पर इतना तरस आ रहा था कि लगा, दम ही घुट जायेगा। मै समझ गया कि तुम्हारी जान की खर नहीं, मगर बुड्ढा गुस्से मे पागल होकर बेंत चलाता ही चला जा रहा था।"

यह कहकर उसने घोडे की तरह अपने नथुने फुलाये और सिर पीछे तानकर मेरे नाना के बारे मे तरह-तरह की बातें कहने लगा। उसकी बातो मे ऐसी बालोचित सरलता थी कि मैं लट्टू हो गया।

मैंने कहा कि तुम मुझे बहुत प्यारे लगते हो। उसने भी उसी अविस्मरणीय सरलता के साथ जवाब दिया

"मैं भी तुम्हे प्यार करता हू, इसी लिए तो बेंत की मार मैंने अपने ऊपर झेल ली। कोई दूसरा होता, तो क्या उसके लिए भी ऐसा करता? हर्गिज नहीं "

इसके बाद वह मुझे गुप्त सीख देने लगा। ऐसा करते समय उसकी सशक दृष्टि लगातार दरवाजे की ओर लगी हुई थी। बोला

"दूसरी बार मार खाने की नौबत आये, तो एक काम करना। बदन को हर्गिज अकडाये मत रखना। बदन को अकडाये रखने से दुगनी चोट लगती है। देह उस वक्त बिल्कुल ढीली कर देनी चाहिए ताकि बेंत पडते वक्त रूई के गाले की तरह मुलायम रहे। इसके अलावा सास नहीं रोकनी चाहिए। खूब जोर से सास चलने देनी चाहिए और कलेजे की पूरी ताकत लगाकर चिल्लाना चाहिए। इतनी बातें याद रखना।"

"तो क्या मेरी फिर पिटाई होगी?" मैंने पूछा।

इवान ने शान्त स्वर मे जवाब दिया

"और क्या? एक ही बार मे बस नहीं हो गया। अभी न जाने कितनी बार पिटाई होगी "

"मगर मेरा कसूर क्या है?"

"वह तुम्हारे नाना कसूर ढूढ़ लेंगे "

इसके बाद फिर उसने आग्रहपूर्वक सीख देनी शुरू की

"अगर चोट सीधी पडे, तो चुपचाप बदन को ढीला करके पड़े रहो और हिला डुलो मत। अगर मारनेवाला चमडी उधेडने के ख्याल से बेंत सरकाकर देह पर उसे खींचे, तो तुम भी झट उसकी ओर सरक जाओ। जिस तरफ बेंत खींचा जाये, उसी ओर देह सरका दो। समझ गये न? तब कम चोट आती है।"

फिर कनखी से आख मारकर उसने कहा

"इस मामले मे मैं पुलिस वालो की भी नाक काट सकता हू। मेरे बदन पर इतने बेंत बरस चुके हैं कि छिली हुई चमडी से दस्ताने तयार हो जाये!"

उस वक्त उसके हसोड चेहरे को देखकर मुझे बरबस शाहजादा इवान और घोघाबसत इवानुश्का वाली कहानिया याद आ गयीं, जो मुझे नानी ने सुनायी थीं।

३

चगा होने के बाद मै अच्छी तरह समझ गया कि इवान का हमारे घर मे खास स्थान है। नाना जसे अपने बेटो पर अक्सर बिगडते रहते थे, उस तरह इवान पर नहीं। उसकी अनुपस्थिति मे जब भी उसकी चर्चा चलती, तो वह सर हिलाकर और आखें मटकाकर कहते

"इवान पूरा शतान का बच्चा है, लेकिन उसकी उगलियो मे कमाल है। वह बेजोड है।"

मेरे मामा लोग भी इवान के साथ मेल से रहते थे। ग्रिगोरी मिस्तरी की तरह उससे कभी मजाक नहीं करते थे। बेचारे मिस्तरी को लगभग हर रोज उनके बेहूदा मजाको का शिकार होना पडता था। कभी वे उसकी कची की बेंट चुपके से गरम कर देते, कभी कुर्सी मे काटी खोस देते, या कभी गलत रग के कपडे सटाकर रख देते। कम सूझने की वजह से बेचारा सब को एक ही मे सी देता था और उसे नाना की डाट सहनी पडती थी।

एक दिन भोजन के बाद मिस्तरी रसोईघर की बेंच पर सो रहा था। उन लोगा ने चुपके से उसके चेहरे पर गहरा लाल रग पोत दिया। कई दिन तक उसका चेहरा बदर जसा बना रहा उजली

दाढी की पृष्ठभूमि मे उसके चश्मे के काले शीशे धुधली-सी आभा दिया करते थे, बीच मे रगी हुई लाल नाक ऐसे लगती, जसे जीभ लटक रही हो।

बुढढे को छकाने के लिए मेरे मामा लोग हर रोज कोई न कोई नयी बात ढूढ निकालते, लेकिन वह कुछ भी न बोलता। केवल अपने आप बुदबुदाता रहता और कची, इस्तरी, अगुश्ताना या चिमटा उठाने के पहले उगलियो को थूक से अच्छी तरह तर कर लेता। यह ऐसी आदत बन गयी कि भोजन के वक्त भी काटा या छुरी उठाने के पहले वह उगलियो को थूक से भिगो लेता। लडके इसपर खूब हसते। हाथ जलने पर उसके चौडे चेहरे पर पानी की लहर की तरह सिकुडनो का गोल घेरा फल जाता और भौंहो को धनुषाकार बनाता हुआ गजी खोपडी के ऊपर गायब हो जाता।

नाना का अपने बेटो के ऐसे "मजाक" के बारे मे क्या ख्याल था, यह मुझे याद नहीं, लेकिन नानी मुक्का तानकर उन्हे खूब डाटती थी

"बेहया, बदमाश कहीं के!"

इवान के पीठ पीछे मेरे मामा लोग उसकी खूब शिकायत करते और उसे चोट्टा और कामचोर आदि बताते।

मैंने नानी से एक दिन इसका कारण पूछा। वह बोली

"दोनों इस ताक मे है कि रगरेजी के उनके अलग अलग कारखाने बनने पर इवान उन्हीं के यहा नौकरी करे, इसलिए वे एक दूसरे को यह जताने की कोशिश करते हैं कि वह किसी काम का नहीं है। दोनो बडे धूर्त है। साथ ही उन्ह यह भी डर है कि इवान उनके पास जाने के बजाय, यहीं, तेरे नाना के साथ रहना पसद करेगा। तेरे नाना के मन मे कुछ और ही चालाकी है। वह इवान को लेकर तीसरा कारखाना खोल सकते है। अगर ऐसा हुआ, तो तेरे मामाओ के लिए तो अच्छा नहीं होगा।

हसते हुए उसने फिर कहा

"इन सबो की धूर्तता देखकर भगवान का भी हसी आती होगी। तेरे नाना उन्हे चिढाने के लिए एक और शिगूफा छोड देते हैं। वह कहते हैं कि मै तो इवान को रगरूटी से मुक्ति का प्रमाणपत्र खरीद दूगा, जिससे उसे फौज मे न जाना पडे, क्योंकि मुझे तो खुद उसकी

बडी जरूरत है। इसपर तेरे मामा और जल भुनकर खाक हो जाते हैं, क्योंकि प्रमाणपत्र खरीदने मे ढेर-सा रुपया लग जायेगा, जो वे अपनी गाठ से निकालना नहीं चाहते।"

स्टीमर-यात्रा के दिनो की तरह अब मैं फिर नानी के साथ रहने लगा था। हर रोज रात को वह मुझे कहानिया सुनाया करती। ये कहानिया या तो परियो की होतीं या खुद नानी के जीवन का। वे भी परियो की कहानियो से कम दिलचस्प न थीं। पर जब वह घर के झगडो का, जैसे नाना की जायदाद के बटवारे या नया मकान खरीदने के नाना के इरादे का जिक्र छेड देती, तो उसका स्वर व्यगात्मक और निरपेक्ष हो जाता, मानो वह गृहस्थी की मालकिन नहीं, कोई पडोसिन हो।

उसी से मुझे मालूम हुआ कि इवान के मा-बाप का पता नहीं है। वसत ऋतु की एक रात को पानी बरस रहा था, उसी दिन वह फाटक के पास की बेंच पर पडा मिला था। नानी ने रहस्यभरे स्वर मे कहा

"चादर मे लिपटा वह बेंच पर या ही पडा था—पाले से ऐसा सद कि आख भी नहीं खोल सकता था।"

"लोग बच्चो को इस तरह फेंक क्यो देते हैं?" मैंने सवाल किया।

नानी ने जवाब दिया

"बाज बाज माओं को दूध नहीं उतरता और न बच्चे का खिलाने के लिए और कुछ होता है, तो ये पता लगाती हैं कि किस घर मे बच्चा होकर मर गया है। वहीं वे अपने बच्चे को ले जाकर छोड आती हैं।"

केशो मे कघा फेरते हुए वह एक क्षण को रुक गयी और फिर छत ताकते हुए विषादपूर्ण स्वर मे बोली

"यह सब गरीबी के कारण होता है, बेटे! कुछ लोग इतने गरीब होते हैं कि उनकी दुर्दशा का वर्णन करना सम्भव नहीं। इसके अलावा शादी के बिना बच्चा होना कलक समझा जाता है। तेरे नाना का कहना था कि बच्चे को पुलिस मे दे दिया जाये, मगर मैंने कहा, नहीं, भगवान ने इसे हमारे मरे हुए बच्चो की जगह भेजा है मैंने अपने गर्भ से अठारह सतानो को जन्म दिया। अगर वे बचते, तो आज

अठारह घरो का कुनबा होता हमारा—पूरा एक महल्ला   चौदह ही वय की उम्र मे मेरी शादी हुई थी। पद्रहवा पूरा होने के पहले ही मेरी पहली सतान पदा हुई, लेकिन भगवान को मेरी गोदी के बच्चे बहुत प्यारे थे। एक एक कर वह उन्हें उठाता गया। सब फरिश्ते बन गये। मुझे दु ख भी होता और ख ुशी भी।"

कुछ दिन पहले एक देहाती सेर्गाच के जगल से एक भालू पकडकर हमारे आगन मे लाया था। रात की पोशाक मे खुले लम्बे केशो मे लिपटी नानी मुझे उसी भालू जसी लग रही थी।

"भगवान ने चुनकर अच्छो अच्छो को उठा लिया। जो सब से नालायक थे, उन्हें ही छोड दिया," उसने हसते हुए कहा और बफ जसे गोरे खुले सीने पर सलीब का निशान बनाया। "इवान को पाकर मुझे बडी ख ुशी हुई, क्योकि तेरे जसे निबल, असहाय बच्चो पर मुझे बडी ममता होती है। मैंने उसे पाल लिया और बाकायदा बपतिस्मा भी करा दिया। वही बालक आज बढकर गबरू जवान हो गया। बचपन मे मै उसे गुबरैला कहा करती थी, क्योकि वह गुबरले की तरह जमीन पर रेंगता और भन भन किया करता था। तू उसके साथ मेल से रहा कर और उसे प्यार किया कर, क्योकि वह दिल का बडा अच्छा है।"

यह कहने की जरूरत न थी, क्योकि मैं इवान को पहले ही प्यार करने लगा था। उसके आश्चयजनक करतबो पर मैं सदा मुग्ध रहता था।

शनिवार की शाम को नाना बच्चो को हफ्ते भर के दौरान की गयी शरारतो की सजा देकर प्राथना के लिए गिरजाघर चले जाते, तो रसोईघर मे जशन का ऐसा समां छा जाता कि बयान से बाहर। इवान अलावघर के पीछे से बहुत से तिलचटे पकड लाता और उन्हे तागे की लगाम डालकर कागज की स्लेज मे बाध देता। फिर "घोडो" की वह चौकडी खाने की मेज पर, जिसे रगड रगडकर बहुत अच्छी तरह साफ किया गया होता था, दौडने लगती थी।

छोटी-सी लकडी से तिलचटो को हाकते हुए इवान उत्तेजित आवाज मे कहता "यह बडे पादरी साहब की चौकडी है। उन्हीं को लाने जा रही है।"

इसके बाद एक तिलचटे की पीठ पर कागज चिपकाकर उसे गाडी के पीछे दौडा देता और कहता

"पादरी साहब का थला घर ही पर छूट गया था। बेचारे चू
को वही लाने के लिए दौडाया गया है।"

इसके बाद एक और तिलचट्टे को लेकर वह उसके पर बाध देता,
जिसकी वजह से वह सिर के बल घिसटकर चलने लगता था। ह मे
से तालिया पीटकर वह घोषणा करता

"और यह हैं छोटे पादरी साहब। बेचारे शाम की प्रार्थना के
लिए शराबखाने से चले जा रहे हैं।"

इवान को चूहे पालने का बडा शौक था। उन्हे वह तरह-तरह की
कसरत और खेल सिखाता था। तिलचटो के बाद अक्सर चूहा की
कसरत शुरू हो जाती। एक चूहा पिछली टांगो पर खडा होकर आदमी
की तरह चलने लगता, उसकी लम्बी दुम पीछे लोटती और गोल आख
मसखरो की तरह मटमटाती होतीं। अपने चूहो को वह बहुत प्यार करता
था। उन्हे अपनी छाती से चिपकाये रखता, अपने मुह से उन्हे चीनी
फकाता और चूमकर बडे इतमीनान से हम लोगो को समझाता था

"चूहा बडा बुद्धिमान और नेक होता है। घर मे जो बौने भूत
रहते हैं, वे चूहो को बडा प्यार करते हैं। जो उनके चूहो को खाना
देता है, उसे वे किसी तरह की तक्लीफ नहीं देते "

इवान ताश और पसो के बहुत-से खेल जानता था। बच्चो के
वह बच्चो की तरह हिलमिल जाता था। उसकी किलकारी बेजोड थी
एक दिन ताश मे उसे लगातार 'चोर' बनना पडा। आखिर मे
रोनी सूरत बनाकर भाग खडा हुआ। बाद मे उसने नाक सुडकते
मुझसे कहा

"मैं सब कुछ जानता हू। वे लोग इशारेबाजी कर रहे थे अ
मेज के नीचे चुपके से एक दूसरे को पत्ता थमा देते थे। ऐसा भी
खेल होता है? धोखेबाजी मे मैं खुद भी किसी से कम नहीं हू

उसकी उम्र १९ साल की थी, लेकिन उसका शरीर हम
भाइयो को मिलाकर भी इक्कीस पडता था।

छुट्टियो के दिन शाम को जब नाना और मिखाईल मामा
से मिलने मिलाने चले जाते थे, तब इवान का जौहर देखने
मिलता। घुघराले, बिखरे बालो] वाले याकोव मामा गितार
रसोईघर मे आ जाते । नानी नाश्ते-पानी का इतजाम कर देती।

के सामानो की कमी न होती। हरी बोतल मे, जिसपर लाल फूल बने हुए थे, वोदका ढाली जाती। इवान अपनी इतवारवाली पोशाक मे लट्टू की तरह थिरकना शुरू कर देता। मिस्तरी ग्रिगोरी भी चुपके से कमरे मे आ जाता। उसके काले चश्मे मे रोशनी प्रतिबिम्बित होती रहती। हम लोगो की धाई येव्गेनिया भी आ धमकती। लाल चेचकरू चेहरेवाली येव्गेनिया घडे की तरह गोल-मटोल थी, उसकी छोटी-छोटी आखो मे चालाकी झलकती थी और गले का स्वर गम्भीर मद्धिम था। कभी कभी उस्पेंस्की गिरजाघर के अत्यधिक बालो वाले छोटे पादरी भी आ जाया करते थे। उनके अलावा कुछ और अजनबी लोग, जिन्हे देखकर मुझे न जाने क्यो तरह-तरह की मछलियो की याद आया करती थी, इस महफिल मे शरीक हुआ करते थे।

हर आदमी खूब खाता, खूब पीता और रह रहकर लम्बी सासे छोडता। बच्चो को उपहार और हल्की मीठी शराब का एक एक जाम भी दिया जाता। धीरे-धीरे पूरे मजमे पर उल्लास का रग छा जाता। रसोईघर मे हसी-खुशी का हुडदग मच जाता।

याकोव मामा बडे प्यार से अपने गितार के कान एठते और सुर ठीक हो जाने पर हमेशा यही कहते

"अच्छा तो अब शुरू करता हू।"

गदन झटककर वह घुघराले पटो को पेशानी के पीछे फेंक देते, गितार पर झुकते और कलहस की तरह गदन आगे बढ़ाकर तारो पर उगलिया फेरने लगते। उनके गोल चेहरे पर उस वक्त गम और फिक्र का नाम निशान न रहता। उसकी जगह पूरी मुखाकृति पर एक स्वप्निल भाव फल जाता। चचल, सजीव आखो पर कुहासा-सा छा जाता। तारो को धीरे धीरे झनझनाते हुए वह कुछ ऐसी भावपूर्ण धुन बजाता, जिसे सुन हर कोई मगन हो जाता, खडा हो जाता।

उनका सगीत पूण निस्तब्धता की पृष्ठभूमि मे ऊचाई से गिरनेवाले झरने की तरह प्रवाहित होता। वह फश और दीवारो को प्लावित कर देता। सब का दिल उदासी और बेचनी से भर जाता। कलेजे मे एक हूक-सी उठती—अपने लिए, सारी दुनिया के लिए। बडे लोग भी मानो बच्चे हो जाते—निश्चल, निस्तब्ध, गहरी उदासी मे डूबे, सगीत मे तमय।

मिखाईल मामा का सारा ऐसे अवसरो पर खास तौर स तल्लीन
हो जाता। वह सुध-बुध खो देता, गिटार की ओर उसकी टकट
बध जाती, पूरी देह ढाचा की ओर झुक जाती, मुह खुल जाता और
होठ के कोनो से लार की धारा बहने लगती। तन्मयता के आलम म
वह कभी कभी कुर्सी से भहरा पडता। मगर गिरने के बाद भी वह
सभल न पाता—उसी तरह फर्श पर मुह खोले और आखें बाये ब
रह जाता।

सभी जादू मे बधे-से छककर सगीत-सुधा का पान करते। केवल
मेज पर रखा समोवार ही गिटार की दर्दीली ताना मे खलल डाले
बिना सम स्वर से खद-बद करता रहता। रसोईघर की दोन
खिडकियां पतझड की नीरव रात्रि के अधेरे को एकटक निहारती होतीं।
कभी-कभी कोई शीशे को धीरे-से थपथपा देता। मेज पर बरछी के
अनी की तरह नुकीले सिरेवाली चर्बी की दो बत्तिया अपनी पीली लौ
फेंक रही होतीं।

याकोव मामा अपने ही सगीत की सुधा मे डूब जाते। ऐसा लगत
कि उनके दात बट गये और गहरी नींद सो गये। केवल उगलिया ह
अपना अलग जीवन जीती होतीं। दाहिने हाथ की उगलिया तारो क
झनझनातीं और बायें हाथ की उगलियां चिडियो की तरह गिटार
खूटियों पर फुदकतीं।

दो एक प्याली शराब पी लेने के बाद उनके मुह से अप्रिय
की लम्बी तान की तरह गीत फूट पडते थे,

जो कहीं याकोव नन्हा सा पिल्ला
नींद हराम करता सबकी भौं भौं भौं चिल्ला
ओ मेरे देवता!
जी मेरा ऊबता!
भक्तिन कोई चली आती गली मे पाव पाव
कौआ कदम कदम पर करता काव काव,
जी मेरा ऊबता!
चूल्हे के पीछे झिल्ली झनकारे झी झी,
तिलचटो के मारे प्राण हैं दुखी,
जी मेरा ऊबता!

पतलून सूखने डालकर ऊघा कोई भिखमगा
हुआ दूसरा लेकर चपत! —क्या करे बिचारा नगा!
जी मेरा ऊबता!
ओ प्यारे देवता!

मामा के गीत मेरे कलेजे को चीर देते! खासकर जब उन्होने भिखमगेवाली पक्ति गायी, तो मेरी आखो से झर झर आसू बहने लगे।

इवान भी सगीत मे तल्लीन हो जाता। उसकी उगलिया अपनी काली घुघराली लटो मे उलझी रहतीं, नजर कमरे के किसी कोने मे टिकी रहती और सास जोर-जोर से चलती। कभी कभी वेदनापूर्ण स्वर मे वह चिल्ला उठता

"ओफ, अगर मैंने भी गला पाया होता, तो इसी तरह गाता!"

ऐसे वक्त नानी नि श्वास छोडकर कहती

"याकोव, अब बस कर! कलेजा मथकर रख दिया तूने! इवान, अब तू नाच!"

नानी के कहते ही गाना रुक जाता हो, ऐसी बात न थी। मगर ऐसा भी होता कि गायक हथेली रखकर तारो की झकार शात कर देता और फिर मुट्ठी बाधकर एक बार ऐसे हाथ फेंकता, मानो कोई नि शब्द और निराकार वस्तु भूमि पर डाल दी हो और जोर से चिल्ला उठता

"बहुत हो चुका दर्दभरा गाना। अब जरा इवान का नाच हो जाये।"

इवान उठ खडा होता। एक बार नजाकत से अपने कपडों और बालो को सवारता और तब अपनी पीली क़मीज को सीधी करके लच-कीली चाल से कमरे के बीच आता। वह सकुचित स्वर मे याकोव से कहता

"भया, जरा बाजा और तेज रखना।"

और यह कहकर लाज से लाल हो जाता।

इसके बाद नृत्य आरम्भ हो जाता। गिटार के तार जोरो से झनझना उठते, एडियों की थिरकन आरम्भ हो जाती, मेज और आलमारियो मे रखी रकाबिया खनखना उठतीं, और इवान कमरे के

बीच बाजे की लय पर पक्षी की तरह फुदकने लगता। उसकी ब
बाल के डैने की तरह डोलतीं और पाव ऐसे थिरकते कि उनपर न
न टिक पाती। घूमते घूमते वह सहसा घुटनो के बल बैठ जाता।
उसी आसन मे एक बार लट्टू की तरह चारो ओर घूम जाता। रे
क़मीज़ छतरी की तरह फूल जाती और तालमय नृत्य प्रवाह से स
कमरा थिरक उठता।

इवान अथक और आत्मविभोर होकर नाचता। ऐसा लगता
कमरे का दरवाज़ा खुल जाये, तो वह उसी तरह सडक और पूरे
मे नाचता हुआ न जाने कहा चला जायेगा

"और!!" याकोव मामा अपने परो से ताल देते हुए ज़ोर
चिल्लाते!

वह ज़ोर से सीटी बजाते और अपनी कर्कश आवाज़ मे यह
अलापने लगते

घिस न जायें जूते कहीं, मैं इस डर से मौन
भगवान, मैं इस डर से मौन,
ऐसी जोरू छोडके, भाग न जाये कौन?

सभी लोग इस गाने की लय-ताल के साथ झूमने और कुछ
ऐसे चीखने चिल्लाने भी लगते, मानो उन्हे चिंगारी छू गयी
दाढीवाली मिस्तरी भी गजे सिर पर उगलियो से ताल देना शुरू
देता। एक बार ऐसी ही अवस्था मे उसने मुह के पास मुह लाक
दाढी से मेरे कधा को बुहारते हुए अदब से कहा, मानो मैं ब
नहीं, बडा आदमी हू

"अलेक्सेई मक्सिमोविच! अगर इस वक्त तुम्हारा बाप मौ
होता, तो वह इस मजलिस मे और जान डाल देता। बडी म
तबीयत का आदमी था वह। उसकी याद है तुम्हें?"

"नहीं।"

"वह और तुम्हारी नानी, ये दोनो मिलकर मजलिस चमका दि
करते थे। अच्छा, एक मिनट ठहरो "

यह कहकर ग्रिगोरी खडा हो गया। लम्बा, दुबला-पतला

देव प्रतिमा की याद दिलाता था। आदरपूवक नानी के सामने झुककर उसने असाधारण रूप से गम्भीर आवाज मे कहा

"अकुलीना इवानोव्ना! हमपर कृपा करो, अब तुम्हारा एक नाच हो जाये! याद है, मक्सिम साव्वातेयेविच के साथ तुम किस तरह नाचा करती थीं? आज एक बार हम लोगो की खातिर भी!"

नानी उसका आवेदन सुनकर शरमा गयी। हसते हुए बोली

"ग्रिगोरी इवानोविच, तुम्हें भी क्या सूझी है? मेरा नाच? सब लोग हसी उडायेंगे "

सभी आग्रह करने लगे। यकायक वह युवती की तरह उछलकर खडी हो गयी, घाघरे का बल दुरुस्त कर उसने रीढ़ सीधी की और अपने बडे-से सिर को पीछे की ओर तानकर चचल जलधार की तरह कमरे मे थिरक उठी। बोली

"हा, तो याकोव! शुरू करो कोई धुन! हसने दो हसनेवालो को!"

याकोव मामा ने पीठ सीधी की और कुछ-कुछ आखें मूदकर बाजे पर एक धीमी धुन छेड दी। इवान एक क्षण के लिए रुका और फिर बाजे की ताल पर नानी के चारो ओर फुदकने लगा। नानी के पर थिरक रहे थे, मानो हवा मे उड रहे हो। फली बाहे अदा से घूम रही थीं, भौंहें तनी हुई थीं और काली काली आखें दूर किसी अज्ञात वस्तु पर टिकी हुई थीं। मुझे यह हास्यास्पद लगी और हसी आ गयी। हसी सुनकर सभी के लाल नेत्र एक क्षण के लिए मुझपर गड गये। ग्रिगोरी ने उगली दिखाकर मुझे चेतावनी दी।

"इवान, एडिया बजाना बन्द करो।" मिस्तरी ने मुस्कराते हुए इवान से बठ जाने को कहा और वह फौरन दहलीज पर जा बठा।

अब धाई येव्गेनिया की बारी थी। वह मन्द, मधुर स्वर मे गा उठी

बाकुरिया बुनती रही ललन हफ्ते भर
जाना भी ना, कसे आ गया सनीचर
कनगुरिया कम छागना कगना हो आया,
कुम्हलाया मुखडा, हा! कितना मुरझाया!

नानी नाच क्या रही थी, मानो कहानी कह रही थी। लीजिये, वह धीरे धीरे बढ़ रही है, सोच मे डूबी, डोलती और बगल से चारो

ओर देखती हुई। उसका समूचा बड़ा शरीर अनिश्चय से झिझक र
है, वह फूंक फूंककर क़दम रख रही है। यकायक कोई चीज सा
आ गयी और वह रुक गयी—चकित और भय कम्पित। दूसरे ही
मुद्रा बदल गयी—चेहरे पर प्यारभरी मुस्कान की आभा बिखर ग
और फुदककर वह एक ओर हो गयी, मानो किसी के लिए रास्ता छ
दिया हो। फिर नयी मुद्रा—मस्तक झुका हुआ, मानो कान लगा
किसी का स्वर सुन रही है, मुखड़े पर आनंद की ज्योति, इसके
थिरकना फिर आरम्भ, लट्टू की तरह। शरीर सीधा, मानो च
यौवन फिर लौट आया हो और इतनी मनमोहक कि आंख हटाना अस
हो गया।

येव्गेनिया धाई का गीत सप्तम सुर मे जारी था

इतवार!—बजा गिरजे का घंटा टन-टन!
पौ फटी!—नाचने लगे झूम छुम छन-छन!
दिन भर दोनो थिरके, नाचे रजनी भर—
कितनी जल्दी आ गया सोम का वासर!

नाच खत्म हुआ और नानी समोवार की बग़ल मे आ बैठी। र
'वाह', 'वाह' कर रहे थे और नानी सकोच से गड़ी जा रही
उलझे केशो को सभालते हुए उसने कहा

"बस बस, रहने दो! नाच वास्तव मे किसे कहते है, यह
लोगो ने अभी देखा नहीं है। बालाख्ना मे, जहा मेरा नहर था,
लड़की थी। मैं उसका और उसके मा-बाप का नाम भूल गयी
लेकिन वह इतना बढ़िया नाचती थी कि दर्शको के नयनो मे ख़ुशी
आसू छलक आते थे। उसे नाचते देख लिया कि जशन की ख़ुशी मि
गयी दिल मे कोई चाह बाकी नहीं रह जाती थी। मैं पापिन उस
नाचना देखकर डाह से जल मरती थी।"

येव्गेनिया धाई ने बड़ी सजीदगी से टीका की

"गाने और नाचनेवालो का दुनिया मे सब से ऊचा स्थान है।
और लगी राजा दाऊद का एक गीत गाने।

याकोव मामा ने इवान के कधा पर हाथ रखते हुए कहा

"अगर तुम किसी मधुशाला मे नाचते, तो लोगो को अपनी सुध-बुध न रहती।"

इवान ने शिकायत की

"काश, मैं गा सकता! भगवान गला दे दे, तो मैं दस साल बिना रुके गाता चला जाऊगा, उसके बाद चाहे मठ मे जाकर सयासी बन जाऊ!"

हर आदमी वोदका के दौर चलाता जा रहा था—खासकर ग्रिगोरी। नानी उसे जाम पर जाम देते हुए साथ ही चेताती भी जा रही थी

"सभलकर ग्रिगोरी, नहीं तो आख बिल्कुल जाती रहेगी।"

ग्रिगोरी ने जवाब दिया

"कोई हर्ज नहीं! दुनिया मे सब कुछ देख चुका हू। अब आखो की जरूरत ही क्या रह गयी है?"

वह नशे मे धुत नहीं होता था, लेकिन जबान खुल जाती थी और मुझसे लगभग हमेशा मेरे पिता के बारे मे ही बातें किया करता था।

"मेरे दोस्त बडा ही दिलदार आदमी था मक्सिम साव्वातेयेविच "

नानी ने भी सिर हिलाकर समथन करते हुए कहा

"भगवान ने उसे अपने हाथो से गढ़ा था "

मुझे यह सभी कुछ बडा दिलचस्प मालूम होता, मै सभी कुछ जानने को बहुत उत्सुक रहता और इस पूरे वातावरण से हृदय पर एक प्रकार की शान्त और अमिट उदासी छा जाती। वास्तव मे उदासी और उल्लास अभिन्न पडोसी की भाति सबो के हृदय मे निवास करते थे। कभी उदासी के बादल हठात छट जाते और आनद का सूरज चमकने लगता और कभी अचानक आनद छिप जाता और उसकी जगह उदासी भर जाती। यह विलक्षण क्रम रहस्यमय ढग से चलता रहता था।

एक दिन याकोव मामा, जो बहुत नशे मे नहीं थे, अपनी कमीज फाड़ने और अपने घुघराले बालो, बदरग मूछो तथा नाक और लटकते होंठो को नोचने लगे।

आखो से आसुओ की अविरल धारा बह चली और लगे चिल्ला-चिल्लाकर कहने

"यह भोग मुझी को भोगना वदा था क्या भगवान!!"

सिसकिया भरते हुए वह अपने गाल, माथा और छाती पीटते और बोलने लगे

"मै पापी हू, नालायक हू, मेरे लिए नर्क मे भी जगह नहीं है!"

ग्रिगोरी ने चिल्लाकर कहा

"बिल्कुल ठीक! अब सूझी है!"

नानी ने, जो खुद भी थोडे से नशे मे थी, बेटे का हाथ थामते हुए कहा

"बस याकोव, बस! भगवान बडा ही दयालु है। वह सभी को सदबुद्धि देता है।"

थोडी शराब पी लेने के बाद नानी और भी नेक हो जाती या- हसती हुई काली आखो से प्यार की सुधा बरसने लगती, जो सभी को सराबोर कर देती। उष्णता से अपने लाल हुए चेहरे पर रूमाल से हवा करती हुई पतली, सगीतमय आवाज मे वह कहने लगती

"हे भगवान, सब कुछ कितना अच्छा है! देखो तो, यह सब कितना मनोहर है।"

यही थी नानी के अतस्तल की पुकार। यही था उसके जीवन का नारा।

अपने मस्त मामा का रोना धोना देख मैं आश्चर्यचकित हो गया। नानी से मैंने उनके रोने और छाती पीटने का कारण पूछा।

"सभी कुछ जानना चाहता है तू तो! अभी कुछ दिन और सब्र कर। सभी चीजो मे नाक घुसेडने लायक अभी तेरी उम्र नहीं हुई है" वह अ्यमनस्क-सी होकर बोली।

पर मेरा कुतूहल और भी बढ गया। मैंने कारखाने मे जाकर इवान से भी यही सवाल किया। उसने भी हसकर और मिस्तरी की ओर कनखियों से देखकर मेरा सवाल टाल दिया और गुस्से का दिखावा करके बोला

"भागो यहा से, नहीं तो मैं कडाहे मे डालकर रग दूगा।"

मिस्तरी एक नीचे चूल्हे के पास खडा था, जिसपर तीन कडाहे चढे हुए थे। लम्बी-सी काली लकडी लेकर वह एक कडाहे मे कुछ चला रहा था। बीच-बीच मे रग मे डूबे एक कपडे को वह उसी लकडी

से ऊपर उठा रहा था और धीरे-धीरे उसमे से रग निचुड जाने दे रहा था। चूल्हे की तेज आग का अक्स चमडे के उसके पेशबन्द पर पड रहा था, जो तरह-तरह के रगो से तर होने के कारण पादरियो के जरीदार चोग़े की तरह चमक रहा था। कडाहो मे रग का पानी बुद बुद कर रहा था। उनसे कड़वा, गधयुक्त धुआ दरवाजे के बाहर होता हुआ आगन मे फल रहा था, जहा जाडे का रग छाया हुआ था।

मिस्तरी ने चश्मे के नीचे से अपने लाल, जाला पडे नेत्रो से मेरी ओर देखा। इवान की ओर मुडकर वह रुखाई से बोला

"देख रहा है, चूल्हे मे लकडी नहीं है!"

इवान लकडी लाने चला गया, तो ग्रिगोरी ने चन्दन से भरे एक बोरे पर बठकर कहा

"यहा आओ।"

मुझे गोद मे बैठाकर, अपनी मुलायम और गरम दाढ़ी मेरे गालो पर फेरते हुए उसने जो बात बतायीं, उन्हे मै कभी नहीं भूल सकूगा। बोला

"तुम्हारे मामा ने अपनी पत्नी को पीटते-पीटते मार डाला था। उसकी आत्मा अब उसे चन नहीं लेने देती। समझ गये न? तुम्हें यह बातें जान लेनी चाहिए और होशियार रहना चाहिए, वरना अनथ हो सकता है।"

नानी की तरह ग्रिगोरी से बात करना आसान था, पर उसकी बातें बडी डरावनी होती थीं। ऐसा लगता कि उसे दिव्य दृष्टि प्राप्त है—जब वह चश्मे के पीछे से अपनी आख घुमाता है, तो उससे कुछ भी छिपा नहीं रहता।

उसकी कहानी जारी रही।

"जानते हो, वह उसे मारता कसे था? चारपाई पर उसे सिर से पाव तक रजाई से ढककर मुक्के, घूसे और घुटनो से मारना शुरु करता था। हर रात यही होता था। एक दिन इसी मे वह खत्म हो गयी। वह ऐसा क्यो करता था? यह तो शायद वह खुद भी नहीं जानता।"

इवान लकडी का गट्ठा लेकर आ गया और आग के पास हाथ सेकने लगा, लेकिन ग्रिगोरी ने उधर ध्यान दिये बिना कहानी जारी रखी

"सभवत यह उससे ईर्ष्या करता था। यह बडी गुणवती स्त्री थी, इसी लिए उसने उसे मार डाला। काशीरिन खानदानवालों की यही खुसूसियत है—वे किसी की अच्छाई नहीं बर्दाश्त कर सकते। वे उसके गुण से डाह करेंगे, पर यह नहीं होगा कि उसका अनुकरण करें इसलिए वे उसे मिटा ही डालते हैं। अपनी नानी से पूछना कि कि तरह इन लोगो ने तुम्हारे बाप की जान ही ले ली थी। वह तुम्हें सारी बा कह देगी, क्योंकि वह झूठ बर्दाश्त नहीं कर सकती और न इन लो के साथ है। तुम्हारी नानी, सच पूछो तो, महात्मा है, चाहे शरा भी पीती है और नसवार भी सूघती है। फिर भी देवी जसी है। तु कसकर उसका दामन थामे रहना, बेटे "

उसने मुझे गोद से उतार दिया। इस भयानक कहानी से मे खून सद हो गया और मैं चुपके से आगन मे निकल गया। ड्योढी दाखिल होने से पहले इवान मेरे पास आया और मेरे सिर पर हा रखकर कानो मे फुसफुसाया

"डरने की जरूरत नहीं है उससे। वह बडा भला आदमी है आख मिलाकर बाते किया करो उससे, क्योंकि उसे ऐसा करनेवा पसद हैं।"

यह सब कुछ बहुत अजीब था और मै परेशान हो उठा। कि दूसरे ढग की जिदगी से अपरिचित था, पर मुझे धुधली याद थी मेरे मा-बाप का जीवन और तरह का था। उनकी बातचीत और उन दिल बहलाव का रवया ही दूसरा था। दोनो सदा साथ उठते-बठ और साथ टहलने जाते थे, मानो कबूतरो का जोडा हो। शाम व दोनो घर मे खिडकी के पास बठकर गीत गाते और हसी दिल्लगी कि करते थे। अक्सर पडोसी बाहर खडे होकर उनका गीत सुनने लग थे। लोगो के ऊपर को उठे हुए चेहरे मुझे जूठी रकाबियो की या दिलाते थे। लेकिन यहा का रग कुछ और ही था। लोग बहुत क हसते थे और हमेशा यह भी स्पष्ट नहीं होता था कि वे किस बात प हस रहे हैं। यहा तो अक्सर एक दूसरे पर चीखते चिल्लाते थे, धमकाते थे या कोनो मे बठकर फुसफुसाते थे। बच्चे भी थे कि मौन, व्यक्तित्व शून्य, वर्षा द्वारा भूमि से चिपकायी गयी धूली की तरह। मुझे लगता कि मैं इस घर मे अजनबी हू। वातावरण हजार सुइयो की तरह देह

मे चुभा करता था। हर चीज सशक और सदिग्ध मालूम होती थी— सदा चौकस चौकना रहना पड़ता था।

इवान के साथ मेरी गाढ़ी दोस्ती हो गयी। नानी भोर से बडी रात गये तक घर के कामो मे व्यस्त रहती थी। मैं दिन भर इवान के पीछे लटकन बना घूमा करता था। नाना जब बेंतो से मेरी ख़बर लेते थे, तो वह मेरी रक्षा करता था और दूसरे रोज़ अपनी सूजी उगलिया दिखलाकर कहता था

"बेकार की कोशिश है। तुम्हारी चोट कम नहीं होती और मुफ्त मेरी भी दुर्गति बन जाती है। अब यह आख़िरी बार है। अब मार पडेगी, तो मै हाथ नहीं अडाऊगा।"

लेकिन मार का वक्त आता, तो वह अपनी बात भूल जाता और फिर मुझे बचाने की व्यर्थ कोशिश मे अपनी दुर्गति करा बैठता। मैं पूछता

"तुमने तो कहा था कि अब की बार ऐसा नहीं करोगे?"

"चाहता तो नहीं था, फिर भी अपना हाथ अडा ही दिया बस, अपने आप ही ऐसा हो गया"

इसके कुछ ही दिन बाद इवान के बारे मे मुझे और बाते मालूम हुईं, जिनसे उसके प्रति मेरी श्रद्धा तथा दिलचस्पी और भी बढ गयी।

हर शुक्रवार को वह हफ्ते भर का सामान लाने के लिए हाट जाया करता था। उस दिन ख़ास तौर से घर का चौडा स्लेज निकाला जाता था। इवान उसमे शराप को जोतता। शराप गहरे भूरे रग का आख़्ता घोडा था, एक नम्बर का बदमाश। उसे मीठा बहुत पसद था और नानी उसे बहुत चाहती थी। इवान भेड की खाल का अपना छोटा कोट पहनता था हरे पटके से उसे कसकर बाधता था और सिर पर बहुत बडी-सी टोपी पहनकर वह हाट रवाना होता था। कभी-कभी उसके लौटने मे बडी देर हो जाती थी। उस वक्त सबो की बदहवासी देखते ही बनती थी। लोग बार-बार खिडकी पर जाकर झाकते थे। खिडकी का शीशा पाले से जम जाता था। पर फूकने से आर-पार देखने लायक जगह बन जाती थी। झाकनेवाले से कोई पूछता था

"आ रहा है क्या?"

"नहीं, अभी नहीं!"

"सभवत यह उससे ईर्ष्या करता था। यह बडी गुणवती स्त्री थी, इसी लिए उसने उसे मार डाला। काशीरिन खानदानवालों की यही खुसूसियत है – ये किसी की अच्छाई नहीं बर्दाश्त कर सकते। वे उस गुण से डाह करेंगे, पर यह नहीं होगा कि उसका अनुकरण करें। इसलिए वे उसे मिटा ही डालते हैं। अपनी नानी से पूछना कि किस तरह इन लोगो ने तुम्हारे बाप की जान ही ले ली थी। वह तुम्हे सारी बात कह देगी, क्योंकि वह झूठ बर्दाश्त नहीं कर सकती और न इन लोगो के साथ है। तुम्हारी नानी, सच पूछो तो, महात्मा है, चाहे शराब भी पीती है और नसवार भी सूघती है। फिर भी देवी जसी है। तुम कसकर उसका दामन थामे रहना, बेटे "

उसने मुझे गोद से उतार दिया। इस भयानक कहानी से मेरा खून सर्द हो गया और मैं चुपके से आगन मे निकल गया। ड्योढी मे दाखिल होने से पहले इवान मेरे पास आया और मेरे सिर पर हाथ रखकर कानो मे फुसफुसाया

"डरने की जरूरत नहीं है उससे। यह बडा भला आदमी है। आख मिलाकर बातें किया करो उससे, क्योंकि उसे ऐसा करनेवाले पसद हैं।"

यह सब कुछ बहुत अजीब था और मैं परेशान हो उठा। किसी दूसरे ढग की जिंदगी से अपरिचित था, पर मुझे धुधली याद थी कि मेरे मा-बाप का जीवन और तरह का था। उनकी बातचीत और उनके दिल-बहलाव का रवया ही दूसरा था। दोनो सदा साथ उठते-बठते और साथ टहलने जाते थे, मानो कबूतरो का जोडा हो। शाम को दोनो घर मे खिडकी के पास बठकर गीत गाते और हसी दिल्लगी किया करते थे। अक्सर पडोसी बाहर खडे होकर उनका गीत सुनने लगते थे। लोगों के ऊपर को उठे हुए चेहरे मुझे जूठी रकाबियो की याद दिलाते थे। लेकिन यहा का रग कुछ और ही था। लोग बहुत कम हसते थे और हमेशा यह भी स्पष्ट नहीं होता था कि वे किस बात पर हस रहे हैं। यहा तो अक्सर एक दूसरे पर चीखते चिल्लाते थे, धमकाते थे या कोनो मे बठकर फुसफुसाते थे। बच्चे भी थे कि मौन, व्यक्तित्व शून्य, वर्षा द्वारा भूमि से चिपकायी गयी धूलो की तरह। मुझे लगता कि मैं इस घर मे अजनबी हू। वातावरण हजार सुइयो की तरह देह

मे चुभा करता था। हर चीज सशक और सदिग्ध मालूम होती थी—सदा चौकस चौकन्ना रहना पडता था।

इवान के साथ मेरी गाढी दोस्ती हो गयी। नानी भोर से बडी रात गये तक घर के कामो मे व्यस्त रहती थी। मैं दिन भर इवान के पीछे लटकन बना घूमा करता था। नाना जब बेंतो से मेरी ख़बर लेते थे, तो वह मेरी रक्षा करता था और दूसरे रोज अपनी सूजी उगलिया दिखलाकर कहता था

"बेकार की कोशिश है। तुम्हारी चोट कम नहीं होती और मुफ्त मेरी भी दुर्गति बन जाती है। अब यह आखिरी बार है। अब मार पडेगी, तो मैं हाथ नहीं अडाऊगा।"

लेकिन मार का वक्त आता, तो वह अपनी बात भूल जाता और फिर मुझे बचाने की व्यर्थ कोशिश मे अपनी दुर्गति करा बैठता। मैं पूछता

"तुमने तो कहा था कि अब की बार ऐसा नहीं करोगे?"

"चाहता तो नहीं था, फिर भी अपना हाथ अडा ही दिया बस, अपने आप ही ऐसा हो गया "

इसके कुछ ही दिन बाद इवान के बारे मे मुझे और बाते मालूम हुईं, जिनसे उसके प्रति मेरी श्रद्धा तथा दिलचस्पी और भी बढ गयी।

हर शुक्रवार को वह हफ्ते भर का सामान लाने के लिए हाट जाया करता था। उस दिन ख़ास तौर से घर का चौडा स्लेज निकाला जाता था। इवान उसमे शराप को जोतता। शराप गहरे भूरे रग का आख़्ता घोडा था, एक नम्बर का बदमाश। उसे मीठा बहुत पसद था और नानी उसे बहुत चाहती थी। इवान भेड की खाल का अपना छोटा कोट पहनता था हरे पटके से उसे कसकर बाधता था और सिर पर बहुत बडी-सी टोपी पहनकर वह हाट रवाना होता था। कभी-कभी उसके लौटने मे बडी देर हो जाती थी। उस वक्त सबो की बदहवासी देखते ही बनती थी। लोग बार-बार खिडकी पर जाकर झाकते थे। खिडकी का शीशा पाले से जम जाता था। पर फूकने से आर पार देखने लायक जगह बन जाती थी। झाकनेवाले से कोई पूछता था

"आ रहा है क्या?"

"नहीं, अभी नहीं!"

नानी सब से अधिक व्यग्र हो उठती थी। बेटो और पति की ओर मुखातिब होकर वह कहती

"तुम लोगो के राज मे किसी दिन एक भले आदमी और एक अच्छे घोडे की जान जायेगी। तुम्हें न हया है, न ईश्वर का डर। जितना उसने दिया है, उससे तुम्हे सतोष नहीं। तुम लोगो जसा लालची और बेअक्ल ढूढे नहीं मिलेगा। ईश्वर ने किसी दिन इसका दण्ड न दिया तो कहना!"

नाना त्योरी चढाकर बुदबुदाने लगते थे

"बस करो! बस यह आखिरी बार है।"

कभी-कभी इवान दोपहर को ही लौटता। नाना और मामा लोग उसके स्वागत के लिए आगन मे दौड पडते। पीछे-पीछे होती नानी—ज़ोर-ज़ोर से नास सुडकती और नाचनेवाले भालू की तरह डोलती डगमगाती-सी। न जाने क्यो ऐसे अवसरो पर वह फूहडो जसी हरकतें करने लगती। बच्चे भी भागकर आ जाते। फिर तो स्लेज से सामान उतारने का आनदप्रद काम आरम्भ हो जाता। मुर्ग़े-मुर्ग़ियां, बत्तखें और कलहस, सूअर के पूरे के पूरे छौने, मछली, और मास के तरह-तरह के टुकडे। स्लेज इनसे लदा हुआ होता।

अपनी छोटी-छोटी तेज़ आखो से स्लेज पर नज़र दौडाते हुए नाना कहते

"जो-जो कहा था, सभी कुछ ले आये हो न?"

"सभी कुछ जो-जो कहा था," उल्लसित इवान आगन मे इधर से उधर उछलते तथा दस्ताना लगे अपने हाथो को रगडते हुए जवाब देता।

"दस्तानो को इस तरह मत रगडो। उन्हे ख़रीदने मे पसा लगता है," नाना डाटते हुए कहते, और फिर पूछते, "पसे कुछ बचे भी हैं?"

"नहीं।"

धीरे धीरे स्लेज की परिक्रमा करते हुए नाना कहते

"सामान तो मालूम होता है ढेर-सा लाये हो तुम। बिना पसा दिये तो नहीं ख़रीदा है कुछ? हां, मेरे घर मे ऐसा काम नहीं होना चाहिए। समझ गये!"

यह कहकर मुह बिचकाये, वह जल्दी-से वहा से टल जाते।

इसके बाद मामा लोग ग्रानद से स्लेज के पास जाते ग्रौर मुर्ग-मुगिया, मछली, बछडे की टाग या मास के ग्रय बडे-बडे टुकडो को हाथ से उठाकर उनका वजन ग्रदाजने की कोशिश करते।

खुशी से सीटी बजाते ग्रौर चिल्लाते हुए वे शाबाशी देते

"वाह! क्या चुनकर सामान लिया है!"

मिखाईल मामा ऐसे ग्रवसरो पर खास तौर से ग्रानद विभोर हो जाते। वह स्लेज के चारो तरफ इस तरह नाचने लगते, मानो उनके परो मे स्प्रिग लगे हो। नाक को कठफोडे की चोच की तरह लम्बी करके वह सारे सामान सूघते ग्रौर चटखारे भरते जाते। उनकी बेचन ग्राखें ग्रानदातिरेक से ग्रधमुदी हो जातीं। वह नाना की ही तरह दुबले पतले ग्रौर शक्ल सूरत मे भी उनसे मिलते-जुलते थे। फक इतना था कि उनका कद थोडा लम्बा था ग्रौर बाल कोयलो की तरह काले थे। पाले से ठिठुरे हाथो को ग्रास्तीन मे घुसाते हुए वह पूछते

"बुढऊ ने कितने रूबल दिये थे?"

"पाच।"

"पर सामान तो कम से कम पन्द्रह रूबल का होगा! तुमने खच कितने किये?"

"चार रूबल, दस कोपेक।"

"यानी, ६० कोपेक तुम्हारी जेब मे हैं। सुन रहे हो, याकोव? पसा बनाने का यह बढिया ढग है!"

याकोव मामा केवल कमीज पहने पाले से जमे नीले ग्राकाश की ग्रोर ग्राखें झपकाते। हसी की हलकी किलकारी भरते ग्रौर धीमे स्वर मे इवान से कहते

"एक-एक ग्रद्धा तो ग्राज रहेगा न?"

नानी घोडे का साज खोल डालती। साज खोलते वक्त शराप को पुचकारती हुई कहती

"मेरे बेटे! मेरे लाल! दुलरग्रा! क्या है रे? खेलने का मन है? जा खेल! खेलने को भगवान भी नहीं मना करता!"

विशालकाय शराप ग्रपने ग्रयाल हिलाता, सफेद दातो से नानी के कधे खुजलाता ग्रौर उसका रेशमी रूमाल झटक लेता। उसकी ग्राखो

मे आनंद होता और पपनियो से पाले की बूदें झाडते हुए धारे से हिनहिनाने लगता।

"समझ गयी। रोटी चाहिए तुझे," कहते हुए नानी एक नमकीन डबलरोटी उसके मुह मे ठूस देती, नीचे बोरी रख देती और उसका चबाना निहारने लगती।

इवान खुद भी बछडे की तरह नटखट था। वह कहता

"यह घोडा कमाल का है, नानी। ऐसा फुर्तीला जानवर नही देखा "

"भाग यहां से! जानता नहीं कि आज के दिन तू मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता?" नानी जोर से डांटती।

नानी ने मुझे बतलाया कि इवान हाट जाता है, तो खरीदारी से ज्यादा चोरी करता है। कुछ देर चुप रह और फिर उदास होकर वह बोली

"तेरे नाना उसे पांच रूबल देते हैं, तो तीन खच करता है और दस का सामान दुकानदारो की नजर बचाकर मार लाता है। दुष्ट को चोरी करने मे आनंद आता है। पहली बार चोरी की तो पकड मे नहीं आया और घर पर सभी हसने और शाबाशी देने लगे। तभी से उसको बुरी आदत पड गयी है। तेरे नाना की जवानी इतनी गरीबी मे बीती है कि बुढ़ापे मे वह मक्खीचूस हो गये हैं। उन्हें पसे अपने बेटो से भी ज्यादा प्यारे हैं। टेंट से पसा निकाले बिना कुछ घर मे आ जाये, तो उन्हें अच्छा लगता है। रहे मिखाईल और याकोव "

हाथ झटकार वह चुप हो गयी। फिर नास की डिबिया पर नजर गडाकर बोली

"यह तो अधी बुढिया द्वारा तयार किये गये लसवाला मामला है, हम उसके नमूने को समझ ही कहा सकते हैं, लेकिन इवान की बडी दुर्गति लिखी है। एक बार पकडा गया, तो लोग पीटते-पीटते जान ही ले लेगें "

वह फिर चुप हो गयी और फिर धीमे-से बोली

"ओह, नियम तो हमारे यहा बहुत-से हैं, लेकिन सचाई नहीं है "

दूसरे दिन मैंने इवान से बडे आग्रह से कहा

"अब चोरी मत करना। लोग पीटते-पीटते जान ही ले लेंगे "

"लोग मुझे पकड नहीं पायेंगे – मै बेलाग निकल भागूगा। मै एक नम्बर का चालाक हू और मेरा घोडा भी खूब तेज है," उसने हसते हुए कहा। पर दूसरे ही क्षण माथे पर बल पड गया और बोला

"मै जानता हू चोरी बुरी चीज है और खतरनाक भी, लेकिन म तो ऊब से बचने के लिए ऐसा करता हू। मेरे पास बचता भी कुछ नहीं। हफ्ते भर के अन्दर जो बचता है, सब तुम्हारे दोनो मामा खींच लेते हैं। मैं उसकी परवाह भी नहीं करता – ले जायें वे ही सब पैसा। मेरे लिए तो यही काफी है कि पेट भरा रहे।"

यकायक उसने मुझे उठाकर प्यार से ऊपर उछाल दिया और बोला

"तुम्हारा बदन दुबला और हल्का है, पर हड्डी खूब ठोस है। बडे होने पर तगडे जवान निकलोगे। तुम गितार बजाना सीख लो। अपने मामा याकोव से कहना, सिखा देंगे। मुश्किल यह है कि अभी तुम्हारी उम्र बहुत कम है। बित्ते भर के छोकरे हो, पर मिजाज अभी से बुलद है। अच्छा बताओ, तुम्हारे नाना तुम्हें पसद आते हैं? नहीं न?"

"मालूम नहीं।"

"इस पूरे काशीरिन खानदान मे बुढिया को छोड, मुझे कोई पसद नहीं। इन लोगो को शतान ही चाह सकता है।"

"और मुझे?"

"तुम काशीरिन नहीं हो। तुम तो पेशकोव हो। वह दूसरा ही खून हुआ। अलग खानदान "

यकायक उसने मुझे जोरो से चिमटा लिया और व्यथाभरे स्वर मे बोला

"हे भगवान! काश कहीं मुझे गाना आता! मैं अपने गीतो से लोगो का कलेजा छलनी कर देता! अच्छा, अब जाओ यहा से! बहुत सा काम है "

मुझे जमीन पर उतारकर उसने एक मुटठी कीले मुह मे डाल लीं और लकडी के एक वर्गाकार तख्ते पर कुछ भीगे काले कपडो को गाडने लगा।

थोडे ही दिनो बाद इवान इस दुनिया से चल बसा।

बात यो हुई आगन मे फाटक के पास, चारदीवारी से टिकाकर बलूत की एक विशाल सलीब रखी हुई थी, जिसका निचला सिरा खूब मोटा था। बहुत दिनो से यह पडी हुई थी वहा। यहा आने के पहले दिन ही इसकी तरफ मेरा ध्यान गया था। उस वक्त वह नयी और पीले रग की थी। लेकिन पतझर के महीनो मे वर्षा से उसका रग काला पड चुका था। उसमे से बलूत की तीखी गंध आती थी। उस छोटे-से आगन मे, जो यो ही कूडे-कबाड से भरा पडा था, उस सलीब के कारण बडी असुविधा होती थी।

याकोव मामा उसे अपनी पत्नी की क़ब्र पर गाडने के लिए लाये थे। उन्होंने शपथ ली थी कि पत्नी की पहली बरसी के दिन उसे खुद उठाकर कब्रिस्तान ले जायेंगे।

बरसी, जाडे के प्रारम्भ मे, शनिवार के दिन पडी। उस दिन बडी ठड थी। खूब हवा चल रही थी और बर्फ उड उडकर छत से नीचे गिर रही थी। नानी, नाना और तीनो पोते पहले ही गाडी से कब्रिस्तान चले गये थे, जहा बरसी मनायी जानेवाली थी। बाकी लोग आगन मे थे। मुझे किसी कसूर की वजह से घर ही पर छोड दिया गया था।

दोनो मामाओ ने, जो एक ही तरह के भेड की खाल के काले कोट पहने हुए थे, सलीब के ऊपरी सिरे को उठाया। उसकी एक बांह याकोव के और दूसरी मिखाईल के कधे पर रखी गयी। ग्रिगोरी तथा एक अजनबी आदमी ने उसका निचला मोटा हिस्सा, जो बेहद भारी था, बडी मुश्किल से उठाकर इवान के चौडे कधे पर रख दिया। इवान लडखडा गया, पर दोनों टागो को जमाकर उसने अपने को सभाल लिया।

"ले जायेगा?" ग्रिगोरी ने पूछा।

"कह नहीं सकता। बडी भारी है।"

मिखाईल मामा ग्रिगोरी पर बरस पडे। डाटकर बोले

"अबे अधे! फाटक तो खोल जल्दी से। शतान कहीं का।"

याकोव मामा बोले

"इवान, तुम्हे शर्म आनी चाहिए। देखो, हम दोनो ही तुमसे दुबले पतले हैं।"

लेकिन ग्रिगोरी ने फाटक खोलते हुए इवान को फिर चेताया
"सभलकर जाना, भाई! ज्यादा जोर न पड जाये। भगवान
र करे!"
सडक पर मिखाईल मामा फिर बिगडे
"गजा उल्लू कहीं का! कम्बख्त!"
सलीब बाहर निकल गयी और आगन मे खडे सभी लोग हसने
I जोर-जोर से बातें करने लगे, मानो सलीब हट जाने से भारी बोझ
का हो गया।
ग्रिगोरी इवानोविच हाथ पकडकर मुझे कारखाने मे ले गया और
ना
"हो सकता है आज नाना तुम्हे बेंत न मारें। वह बहुत खुश
ते थे "
ऊन के एक ढेर पर, जो रगाई के लिए रखा था, मुझे बठाकर
ने मुझे उसी मे लपेट दिया और तब कडाहो मे से आती हुई भाप
सूघते हुए उसने एकाग्रचित्त होकर कहना शुरू किया
"बेटे! तुम्हारे नाना को मैं सतीस वप से जानता हू। जब यह
रोबार शुरू हुआ था, उसी वक्त मैंने उसे देखा था और अब इसका
त्मा भी देख रहा हू। मैं और तुम्हारे नाना बडे दोस्त थे। दोनो ने
लकर यह धधा शुरू किया था। बल्कि मिलकर ही इस कारोबार
I योजना बनायी थी। तुम्हारे नाना बडे चलते पुरजे हैं। वह
रखाने के मालिक बन बठे और मैं जसा था, वसा ही रह गया।
र भगवान हम सब से ज्यादा चलता पुरजा है। उसकी एक मुस्कान
र बडे-बडे होशियार भी मूख की तरह आख झपकाते रह जाते हैं।
न्हें अभी दुनिया का दस्तूर नहीं मालूम है, लेकिन उसे जान लेना
I उचित है, क्योकि वेबाप के लडके की जिदगी आसान नहीं है।
म्हारा बाप मक्सिम साव्वातेयेविच हीरा आदमी था। वह सब कुछ
मझता था, इसी लिए तुम्हारे नाना उसे नहीं चाहते थे और उन्होने
राबर उससे दूर ही का सरोकार रखा "
बूढे के प्यार भरे शब्द मुझे अच्छे लग रहे थे। आग की लाल,
नहली लपटें चूल्हे मे थिरक रही थीं और कडाहो मे से दूधिया रग
ी भाप बादल की तरह उडकर ढालू छप्पर के लकडी के पटरों पर

पाले की तरह जम रही थी। बीच की टेढ़ी-मेढ़ी सेंध से फीते की तरह नीले आसमान का एक टुकड़ा दृष्टिगोचर हो रहा था। हवा रुक गयी थी। कहीं सूरज चमक रहा था और आंगन में ऐसा मालूम हो रहा था, मानो बारीक पिसा हुआ शीशा बिखेर दिया गया हो। सड़क पर स्लेजों के दौड़ने की चर-चर की आवाज आ रही थी। पड़ोस के मकानों की चिमनियों से चक्कर काटता हुआ धुआं आकाश में उठ रहा था। छत पर हल्की परछाइयां तैर रही थीं, मानो वे भी अपनी कहानी कह रही हों।

लम्बा, सूखा ग्रिगोरी उबलते हुए रंगों को कड़ाहे में चलाते हुए मुझे उपदेश देता जा रहा था। लम्बी दाढ़ी और बड़े-बड़े कानों की वजह से वह जैसे कहानियों का नेकदिल जादूगर लगता था।

"हमेशा नजर मिलाकर लोगों से बात करो। आंखें चार करने से तुम पर झपटनेवाला कुत्ता भी ठिठककर रह जाता है "

भारी चश्मा उसकी नाक के सिरे पर बैठा हुआ था, जिससे नाना की तरह उसकी नाक का सिरा भी नीला पड़ गया था।

"क्या मामला है?" कहकर वह हठात रुक गया। कान लगाकर दो क्षण बाहर की आवाज सुनने के बाद उसने पैरों से झटके से चूल्हे के मुंह पर तवा गिरा दिया और भागकर आंगन के पार हो गया। मैं भी पीछे दौड़ा।

इवान रसोईघर के फर्श के बीचोबीच चित पड़ा था। खिड़की से रोशनी की दो मोटी किरणें कमरे में आ रही थीं। एक इवान के सिर और छाती पर और दूसरी उसके पैरों पर प्रकाश फेंक रही थी। उसके माथे पर विलक्षण आभा थी। भौंहें तनी हुई थीं। कमान जैसी आंखें कालिख लगी छत को घूर रही थीं। काले होंठ जरा-जरा कांप रहे थे। उनसे गुलाबी फेन बह रहा था। मुंह के कोनों से रक्त की एक पतली धारा गालों और गर्दन पर होती हुई फर्श पर ढुलक रही थी। देह के नीचे फफककर खून निकल रहा था। टांगें जमीन पर अशक्त, लम्बी पड़ी थीं। चौड़ा पतलून जमीन से सटा हुआ था। साफ जाहिर हो रहा था कि वह खून से तर है। बालू से रगड़कर साफ किया गया फर्श सूरज की रोशनी में चमक रहा था। खून के छोटे-छोटे सोते प्रकाश रेखाओं को चीरते और फर्श को रंगते हुए दरवाजे की ओर बह रहे थे।

इवान निश्चल पडा था। केवल फले हुए हाथो की उगलिया फश को खुरच रही थीं। रग से दगीले उसके नाखून सूरज की रोशनी मे चमक रहे थे।

येव्गेनिया धाई ने बगल मे बठकर उसके हाथ मे मोमबत्ती रखनी चाही, पर वह पकड न सका। मोमबत्ती ज़मीन पर गिर पडी और उसकी लौ खून मे बुझ गयी। धाई ने उसे उठाकर पोछा और फिर उसकी बेचन उगलियो मे उसे पकडाना चाहा। रसोईघर मे उत्तेजना का अवरुद्ध वातावरण छाया हुआ था, जिसने अधड की तरह ठेलकर मुझे दरवाज़े के बाहर कर दिया, पर मैंने कसकर चौखट थाम ली।

याकोव मामा सिर हिलाते हुए सूखे गले से बोले

"ठोकर खा गया।"

वह खुद भी बदहवास हो रहे थे—चेहरा मुरझाया हुआ और फक था और लगातार अपनी धुधलायी हुई आखें झपका रहे थे। बोले

"वह गिर पडा और लकडी पीठ पर गिर पडी। अगर हम भी झट से सलीब न फेंक देते, तो हम भी कुचल जाते।"

"मतलब यह कि तुम्हीं लोगो ने उसे कुचल दिया," ग्रिगोरी ने भर्रायी आवाज़ मे कहा।

याकोव ने जवाब दिया

"हमने—वह कसे "

"हा, तुम्हीं लोगो ने!"

खून की धारा बहती ही जा रही थी—अविरल, अविराम। दरवाज़े के पास एक छोटा-सा गढ़ा था, जो लबालब हो चुका था। उसकी सतह धीरे-धीरे और ऊची होती जा रही थी। इवान बेहोशी मे कुछ बडबडा रहा था। मुह से गुलाबी फेन निकलना जारी था और शरीर मानो शन शन गलता जा रहा था, जसे धीरे धीरे चपटा होता हुआ धरती के साथ एकाकार हो रहा हो।

याकोव मामा ने अस्फुट स्वर मे कहा

"मिखाईल घोडा लेकर पिताजी को लाने गिरजाघर चला गया और मैं जल्दी से उसे गाडी मे लादकर यहा ले आया नसीब अच्छा था कि मैं निचले, भारी भाग की ओर नहीं था, नहीं तो यही हाल मेरा होता!"

धाई ने एक बार फिर इवान के हाथ पर मोमबत्ती रख दी। धा
और मोम की बूंदें उसकी हथेलियों पर टपक पड़ीं।

ग्रिगोरी ने रुखाई से कहा

"बेढंगी हो तुम तो! मोमबत्ती उसके सिर की बगल में रखनी
चाहिए।"

"हां," वह बोली।

"टोपी उतार लो सिर से!"

धाई ने टोपी खींच ली और इवान का सिर हल्की-सी खट
साथ फर्श पर आ टिका। सिर एक तरफ हो जाने से मुंह से खून
तेज़ी से गिरने लगा, मगर केवल एक कोने से। न जाने कितनी
यह क्रम चलता रहा—भयावना, खून सद कर देनेवाला। पहले
सोचा था कि इवान थोड़ी देर आराम करने के बाद उठ बैठेगा
अपनी आदत के मुताबिक़ कहेगा

"ओफ! कैसी गर्मी है "

इतवार के दिन भोजन के बाद झपकी लेकर उठने पर वह
ही किया करता था। पर आज वह पड़ा ही रहा—तिल तिल
गलता हुआ, मिटता हुआ। सूरज पश्चिम की ओर बढ़ चला
किरण रेखाएं छोटी होकर केवल खिड़कियों तक रह गयीं। इवान
मुंह और हाथ काले पड़ गये। उंगलियों का कम्पन खत्म हो गय
और मुंह से झाग का आना भी खत्म हो गया। उसके सिर के
तीन मोमबत्तियां रख दी गयी थीं। उनकी सुनहली लौ में उसके
बाल, नाक का उठा कोना और खून से दर्शीले दांत दिखाई पड़
थे। प्रकाश की कांपती छाया उसके धूमिल कपोलों के साथ खेल रही थ

धाई बग़ल में बैठी बिसूर रही थी।

"मेरे लाल! आंखों का तारा! तू सभी के मन का मोती था,
वह आप ही आप बक रही थी।

वातावरण सद और डरावना था। मैं मेज़ के नीचे जा छिपा
बाद को नाना अपना खालदार कोट पहने, धड़धड़ाते हुए पहुंचे। पीछे
पीछे कालरों पर छोटी-छोटी पूंछें लगा बड़ा कोट पहने नानी, मिखाईल
मामा, बच्चे और बहुत-से दूसरे लोग भी आये।

फ़र्श पर अपना कोट फेंककर नाना चिल्लाये

"मार डाला हरामजादो ने लडके को। कितना काबिल था! पाच साल मे सोना हो जाता, सोना!"

फर्श पर पडे कपडो ने इवान को आड मे कर लिया। मैंने चाहा, दूसरी तरफ हो जाऊ। बस नाना के सामने आ गया। उन्होने मुझे एक लात लगाकर किनारे कर दिया और अपनी छोटी-सी लाल मुट्ठी दिखाकर मामा लोगो को धमकाते रहे

"तुम लोग भेडिये हो, भेडिये!"

यह कहते हुए वह भहराकर बेंच पर बैठ गये। उसे जोर से पकड-कर वह पतली रोनी आवाज मे कहने लगे

"मैं जानता था, वह तुम सबकी आखो का काटा है पर इवान! तू कैसा बेवकूफ निकला? अब हम क्या करे? मै पूछता हू, अब हम क्या करें? घोडा बूढा है और साज भी बिक गया वर्वारा की मा! लगता है भगवान रूठ गये हैं हम लोगा पर! बोलो न वर्वारा की मा। क्या कहती हो?"

नानी आते ही इवान की बगल मे जमीन पर बैठ गयी थी और उगलियो से बार-बार उसका चेहरा, केश और छाती टटोल रही थी। वह उसकी आखो मे फूकती थी और उसके हाथो को उठाकर मलती थी। मोमबत्तिया उसकी हरकत से नीचे गिर पडी थीं। अंतत वह जोर लगाकर उठ खडी हुई—चमकती, काली पोशाक मे एक विशाल, काली प्रतिमा की तरह। काली आखो को डरावने ढग से नचाते हुए उसने कहा

"निकल जाओ यहा से, अभागो!"

नाना को छोड सभी छूमतर हो गये।

इवान को चुपचाप दफना दिया गया।

४

मैं एक चौडे-से पलग पर, बडी रजाई मे कई तह लिपटा हुआ लेटा था और नानी की प्रार्थना को सुन रहा था। वह घुटनो के बल बैठी हुई थी। एक हाथ छाती पर था और दूसरे से वह बीच-बीच मे सलीब का निशान बनाती थी।

अहाते मे पाले के कडकने की आवाज सुनाई पड रही थी। खिड़ की पर जमे पाले से चित्र बने हुए थे। चित्रों के बीच से हरापन लिये चांदनी झांक रही थी। किरणो से नानी का बडी नाकवाला दयालु चेहरा और काली आखें चमक रही थीं। उसके मस्तक और केश रेशमी कपडे से ढके हुए थे। चांदनी के धीमे प्रकाश मे कपडा धातु की तरह दमक रहा था। नानी की काली पोशाक कधो से झूलती हुई चारों तरफ जमीन पर लोट रही थी।

प्रार्थना खत्म करके उसने कपडे उतारे, ढग से तहाकर उन्हें कोने मे पडे सदूक पर रख दिया और तब वह पलग पर आयी। मैं ऐसे पडा रहा मानो गहरी नींद मे हू।

"नटखट कहीं का! मुझी से दिल्लगी!" वह प्यार से बोली। "लाल दुलारे! मै जानती हू तू सोया नहीं है। जरा मुझे भी रजाई दे।"

मैं जानता था आगे क्या होगा। अत चेहरे पर बरबस मुस्कराहट आ गयी। वह बोली

"अच्छा! बूढ़ी नानी से ही मजाक! ठहर!"

उसने रजाई का कोना पकडकर इतनी फुर्ती और जोर से खींचा कि मै हवा मे उछल गया और कलया खाता हुआ धम से परदार तोशक पर गिरा। नानी 'हो-हो' कर हसने लगी।

"क्यो, कसी रही नटखट? आयी अक्ल ठिकाने?"

कभी-कभी वह बहुत ही देर तक प्रार्थना करती रहती, मैं सचमुच ही सो जाता और मुझे उसके पलग पर आने का पता न चलता।

जिस दिन घर मे लडाई झगडा होता, उसी दिन प्रार्थना ज्यादा लम्बी होती। नानी दिन भर की घटनाओ की पूरी सूची ही प्रभु के सामने पेश कर देती। घुटनो के बल बठी हुई विशालकाय नानी तेज अस्फुट स्वर मे प्रार्थना आरम्भ करती। पर धीरे धीरे स्वर गम्भीर शिकायत का रूप धारण कर लेता। जसे

"प्रभु! तू स्वय जानता है कि सभी अपना ही लाभ खोजते हैं। मिखाईल बडा है, उसी को शहर मे रहना चाहिए। नदी पार की जगह नयी है, कोई नहीं जानता कि वहा धधा चलेगा कि नहीं। इस

से बडे को वहा भेज देना बेइसाफी होगी, लेकिन बाबू याकोव को अधिक चाहते हैं। बेटो को दो नजर से देखना क्या उचित है? पर बूढा हठी है। प्रभु, तू उसे थोडी अक्ल दे दे न!"

काली प्रतिमाओ पर अपनी विशाल, आभायुक्त आखें एकटक जमाये हुए वह अपने प्रभु को सलाह देती

"प्रभु, किसी रोज सपने मे उन्हे जायदाद बाटने का उपाय सुझा दो।"

इसके बाद छाती पर सलीब का चिह्न बनाकर वह अपना चौडा मस्तक जमीन पर बिछे कालीन से छुआती और फिर सीधी होकर वसे ही सुझाव देते हुए बोलना आरम्भ करती

"और खुशी की दो बूदें तू वर्वारा के लिए भी भेज। उसने कौनसा कसूर किया है, प्रभु, कि तू उसपर इतना नाराज हो गया है? क्या वह दूसरो से बुरी है? अभी वह जवान है, हट्टी कट्टी है, उसे इतने कष्ट मे मत रख! और ग्रिगोरी की आखो का ख्याल रखना, प्रभु! दिनोदिन उसकी रोशनी मद होती जा रही है। एक आख जाती रही, तो बेचारा दर दर का भिखारी हो जायेगा। यह क्या अच्छा लगेगा, प्रभु? बाबू के कारोबार मे ही उसने अपनी सारी जिदगी गुजार दी है लेकिन वह क्या उसकी मदद करेंगे? हरगिज नहीं। ओ प्रभु ईश्वर! "

छाती पर सर झुकाये, बाहो को लटकाये वह बहुत देर तक मौन रहती, मानो उसे नींद आ गयी हो।

अन्त मे भौंहो पर बल डालकर कहती

"बस। अपने भक्तो पर कृपा कर और मुझे क्षमा कर। तू भली भाति जानता है, मैं मूर्ख और अभागिन हू, मेरा मन पापी नहीं है, पर अज्ञान मुझसे अपराध कराता है।"

इसके बाद लम्बी सास लेती और आनदपूर्ण तुष्टि के साथ कहती

"लेकिन तुझसे यह सब कहना ही बेकार है। तू तो आप ही सारी बातें जानता है और सब कुछ समझता है।"

नानी का प्रभु मुझे बडा अच्छा लगता था, क्योकि उसमे बडी आत्मीयता थी। अक्सर मैं कहता था

"मुझे प्रभु के बारे मे बताओ।"

वह अपने प्रभु की चर्चा खास ही ढग से करती। वह बठ जाती।
आंखें बद कर लेती और मीठे स्वर मे, शब्दो को विचित्र रूप से
तौलते हुए बोलती। प्रभु की प्रशसा सुनाने का उसका वह ढग मुझ
आज भी याद है। सिर के ऊपर रूमाल डालकर तन्मयता से वह मेरी
आंख लगने तक कहती जाती

"स्वग के एक पहाड पर भगवान का आसन है। उसके चारों।
फूलो का स्वगिक बाग है। उनका नीलमणि का सिहासन रुपहले ला
वृक्षों के नीचे टिका हुआ है। उन वृक्षों मे सदा फूल लगे रहते
क्योकि स्वग-लोक मे शरद या पतझड नहीं हुआ करती। बारहों म
फूल खिले रहते हैं और सन्त-महात्माओ का मन उत्फुल्ल करते र
हैं। बफ के गालों, ढेरो मधु-मक्खियो या धवल कपोतो के उडते समूह
भाति चारो ओर से फरिश्ते भगवान को घेरे रहते हैं। वे निरतर स्
लोक से धरती और धरती से स्वग-लोक की ओर उडा करते हैं।
उन्हें हम प्राणियो की सारी खबर पहुचाते हैं। सभी प्राणियो का अ
अलग अलग फरिश्ता होता है—तेरा अलग, मेरा अलग और तेरे न
का अलग, क्योकि भगवान अपने सभी जीवो के लिए समान ह। ं
फरिश्ता उडकर प्रभु को खबर देता है 'अलेक्सेई ने आज अपने न
को मुह चिढ़ाया है,' और वह फौरन आज्ञा देते हैं, 'अच्छा तो अ
बुड्ढा अलेक्सेई को बेंत लगावेगा।' इसी तरह सभी आदमियो का, स
चीजो का फसला होता रहता है। जिसकी जसी करनी वसी भरनं
किसी को दु ख, किसी को सुख। सारी व्यवस्था ऐसी ख़ूबसूरती
चलती है कि फरिश्ते आनद से अपने डने फडफडाते हैं और गीत ग
जाते हैं, 'प्रभु, तेरी महिमा अपरम्पार है।' और प्रभु मुस्कराते ज
हैं, मानो कह रहे हो, 'मेरे प्यारे बच्चो, नाचो ख़ुशी से।'"

और नानी ख़ुद मुस्कराने और सिर हिलाने लगती थी। मैं पूछता

"तुमने यह सब देखा है?"

"मैंने देखा नहीं है। पर जानती हू," विचार मग्न होकर व
जवाब देती।

ईश्वर, स्वग और फरिश्तो की चर्चा करते समय वह छोटी-सी और
विनम्र हो जाती, मुखाकृति से बुढ़ापे के चिह्न गायब हो जाते और अ
आखो से मधुर ज्योति प्रवाहित होने लगती। मैं उसकी रेशम-सी

मुलायम भारी लटो को अपनी गर्दन मे लपेटकर विमुग्ध और निश्चल पडा रहता था। जादूभरी इन कहानियो को कितनी बार भी क्यो न सुनता, तृप्ति न होती। वह कहती जाती।

"मनुष्य भगवान को नहीं देख सकता, देखे तो अधा हो जाये। केवल सन्त लोग भर नजर उसे देख सकते है। पर फरिश्तो को मैंने देखा है। आदमी का हृदय स्वच्छ रहे, तो फरिश्ते दिखाई पडने लगते हैं। एक बार प्रार्थना के वक्त मैं गिरजाघर मे थी। देखती क्या हू कि वेदी पर दो फरिश्ते खडे हैं। दोनो कुहासे की तरह थे, ऐसे कि आर पार देख ले। चमक उनमे ऐसी थी कि नजर न ठहरे। दोनो के जालीदार पख जमीन तक लटक रहे थे। वेदी के पास कभी इधर कभी उधर घूमकर वे बूढे पादरी इल्या की मदद कर रहे थे। पादरी जब प्रार्थना के लिए अपने कमजोर हाथो को उठाते थे, तो वे दोनो तरफ से उनकी कुहनियो के नीचे टेक लगा देते थे। पादरी इल्या बहुत बूढ़े थे, आखो की ज्योति मद थी, चलते हुए लडखडाने लगते थे। इसके कुछ ही दिन बाद वे स्वर्ग सिधार गये। दोनो को देखकर मेरा कलेजा बासो उछलने लगा। आखो से अविरल आसू बह चले। सच, वह दृश्य ही वर्णनातीत है। भगवान के स्वर्ग मे सभी चीजें कमाल की हैं और उसी तरह धरती की भी!"

"क्या हमारे घर की हर चीज भी कमाल की है?"

"हा, हर चीज, हर जगह। धन्य है मा मरियम," नानी ने सलीब का निशान बनाते हुए जवाब दिया।

इस उत्तर ने मुझे हैरानी मे डाल दिया। इस घर की भी सभी चीजें अनूठी हैं, यह विश्वास कर लेना कठिन था, खासकर जब कि वमनस्य का विषाक्त वातावरण बढ़ता ही जा रहा था।

मुझे याद है, एक दिन मिखाईल मामा के कमरे का दरवाजा खुला था। मैं उधर से गुजरा, तो मेरी नजर नताल्या मामी पर पडी, जो सिर से पैर तक सफेद पोशाक पहने थी और छाती पर एक हाथ रखे इधर से उधर दौडती हुई बडी ही डरावनी तथा मद आवाज मे रो रोकर कह रही थी

"हे भगवान, मुझे उठा ले! किसी तरह मुझे यहा से उबार।"

उसका दु ख समझने मे मुझे कठिनाई नहीं हुई। इस तरह ग्रिगोरी

की वेदना भी आसानी से मेरी समझ मे आ जाती थी, जब वह बुदबुदाकर कहता था

"अधा होने पर दर दर, भीख मागता फिरूगा और इस जीवन से तो वही बेहतर होगा ।"

मैं चाहता था कि वह जल्दी से ही अधा हो जाये। तब मैं उसका हाथ थामकर शहर मे घुमाऊगा और हम दोनो भीख मागकर जीवन का गुजारा करेगे। एक दिन मैंने अपने मन की बात उसे बता भी दी दाढ़ी मे जरा मुस्करा वह बोला

"बिल्कुल ठीक, दोनो साथ निकलेगे। मै शहर मे सब को सुनाकर कहूगा—यह रगरेजी के कारखाने के मालिक वासीली काशीरिन का नाती है। लोगो को खूब मजा आयेगा ।"

नताल्या मामी के होठ अक्सर सूजे रहा करते थे तथा उसके पीले चेहरे पर भावशून्य आखो के नीचे नीले दाग दिखाई दिया करते थे।

मैंने नानी से पूछा

"मामा उसे मारते हैं क्या?"

"हा! चुपके चुपके वह उसे मारता है। दुष्ट कहीं का। तेरे नाना बिगडते है, इसलिए रात को यह काम करता है। बडा गुस्सल है वह! और तुम्हारी मामी है एकदम दब्बू ।"

इसके बाद उत्साह से सुनाने लगती।

"लेकिन अब पहले जैसी मार नहीं पडती। अब तो कभी मुह पर एक थप्पड जड दिया या गाल पर कनचप्पड जमा दिया, या झोटा पकडकर दो चार बार झकझोर दिया। पहले की बात और ही थी। मार पडती, तो पूरी दुर्गति बना दी जाती थी। एक बार ईस्टर के पहले दिन तेरे नाना ने मुझे सबेरे पीटना शुरू किया और शाम तक कोडा या जो कुछ भी हाथ मे आता था, उसी से मारते थे, फिर थोडी देर सुस्ताते थे और सुस्ताकर फिर मारना शुरू करते थे। सूर्यास्त तक यही क्रम चलता रहा।"

"क्यो इतना मारा था?"

"अब याद नहीं है। एक बार मारते-मारते मुझे अधमरा कर दिया और इसके बाद पाच दिन तक खाना भी नहीं दिया। उस दफा तो मैं मरते-मरते बची। फिर एक बार ।"

इस तरह की बातो से मेरी हैरानी का ठिकाना न रहता था। नानी नाना से दुगनी थी। नाना उन्हें किस तरह मार पाते थे, यह मेरी समझ ही मे न आता।

"क्या नाना तुमसे ताकतवर हैं?" मैने पूछा।

"नहीं, ताकतवर तो नहीं हैं, लेकिन बडे है। इसके अलावा वह मेरे पति हैं। मेरे साथ वह जो बुरा बर्ताव करते हैं, उसका बदला उनसे भगवान लेगा और उसने मुझे उनकी सब बात सहन करने का हुक्म दिया है।"

जिस वक्त वह देव प्रतिमाओ और उनकी वेदी को झाडकर साफ करती थी, तो मै उसे बडे गौर से देखा करता था। मुझे बडा अच्छा लगता था। हमारे घर की देव प्रतिमाए बडी बढिया थीं। उनमे मोती और नग जडे हुए थे और चादी का काम किया हुआ था। नानी उन्हें बडी सावधानी से साफ करती। एक प्रतिमा को सामने रखकर वह सलीब का निशान बनाती और चूमकर कहती

"ओह, कैसा सुदर मुखारविद है! पर धूल और कालिख जम गयी है। प्रभु की माता! सर्वशक्तिमयी! आनददायिनी! अलेक्सेई, तू भी देख इधर—कैसी सुदर मीनाकारी है। कितना बारीक काम है। कैसी प्यारी-प्यारी सूरते हैं, पर हर कोई अलग अलग खडी है। इस प्रतिमा को कहते हैं बारह पर्व, बीच मे जो है, वही है पयोदोरोव्स्काया कुमारी—भगवान की जननी, वह ममता की मूर्ति है। और इसका नाम है—मा, मेरी कब्र पर न रो "

प्राय मुझे ऐसा लगता कि नानी प्रतिमाओ के साथ उतनी ही सजीदगी और आत्मीयता के साथ खेलती है, जितनी हमारी डरपोक ममेरी बहन कतेरीना अपनी गुडियाओ से।

फरिश्तो के अलावा नानी की पिशाचो शैतानो से भी मुलाकात होती थी, कभी किसी अकेले से, कभी झुण्ड के झुण्डो से। एक दिन उनकी भी कहानी सुनाने लगी

"लेंट* के दिनो मे एक बार मैं रुडोल्फ के घर के पास से जा रही थी। चादनी रात थी, चारो ओर उजाला। यकायक देखती क्या

---

*चालीस दिनो का उपवास, जो ईस्टर को समाप्त होता है।

हू कि छप्पर पर चिमनी के पास एक काला पिशाच पर फलाकर बैठा हुआ है–बहुत बडी, पूरी देह मे लम्बे-लम्बे बाल। दोनो सींग चिमनी के पास सटाये वह ज़ोर-ज़ोर से कुछ सूघ रहा था। वह अपने पावो को रगड रहा था और छत पर दुम फटफटा रहा था। मैंने झट सलीब का निशान बनाया और प्रभु का नाम जपने लगी 'फिर ईसा का जन्म होगा और ईश्वर के शत्रु परास्त होगे।' यह सुनते ही एक हलकी सी चीख के साथ वह आगन मे कूद पडा। मैं ताज्जुब में थी कि आया कैसे। हो न हो रुडोल्फ के यहा आज मास वास पकाया जा रहा है। वह खुश होकर यही सूघ रहा था "

पिशाच के छप्पर से आगन मे कूदकर भागने की कल्पना से मैं मुस्कराने लगा। नानी भी मेरे साथ हसने लगी। फिर बोली

"वे बडे नटखट होते हैं–छोटे बच्चो की तरह। एक बार लगभग आधी रात के वक्त मैं ग़ुसलखाने मे कपडे धो रही थी। यकायक चूल्हे का दरवाजा झटके से खुल गया और उसमे से उनकी पूरी सेना निकल पडी–छोटे-छोटे, मुन्नी भर के, तिलचटो के समान। कोई लाल था, कोई हरा, कोई काला। मैं दरवाजे की ओर भागी। पर सबों ने रास्ता रोक लिया। मै ग़ुसलखाने मे ही गिरफ्तार। चारो तरफ से घेर लिया उन्होने मुझे। पूरा ग़ुसलखाना उनसे भरा हुआ था। कुछ पाव के नीचे, कुछ ऊपर चढ़े हुए। कोई चुटकी भरता, कोई काटता और ऐसे दबा रहे थे कि हिलना डुलना मुश्किल था। मेरी अक्ल ही गुम–यह भी नहीं सूझा कि सलीब का निशान बनाऊ। वे मुलायम, गरम गरम और रोएदार थे, जसे बिल्ली के बच्चे। पिछली टागो पर खडे होकर वे चारो ओर लुढक पुढक रहे थे। उनके दात चूहो जसे दमक रहे थे। छोटी हरी हरी आखें चमक रही थीं। वे अपने सिरो को, जिनके ऊपर सींग फूटने ही वाले थे, डोला रहे थे और सूअर के छौनों की सी छोटी दुमो को ऐंठ रहे थे हे भगवान! उस दिन मेरे ऊपर जो गुजरी, मैं ही जानती हू। मै मूर्छित हो गयी। जब मूर्छा टूटा, तो मोमबत्ती करीब-करीब जल चुकी थी, टब का पानी ठडा हो चला था और धुले हुए कपडे फर्श पर बिखरे पडे थे। मैंने मन मे सोचा 'बुरा हो तुम पिशाचो का "

मैंने आखें बन्द कर लीं। मुझे लगा कि भूरे पत्थर के चूल्हे का मुह खुला हुआ है और उसके अन्दर से झबरीले और रग बिरगे छोटे छोटे पिशाचो की पूरी फौज निकली आ रही है। निकलकर वे गुसलखाने मे भर गये और मोमबत्ती को फूकने और शरारती ढग से अपनी गुलाबी जीभ बाहर निकालने लगे। कहानी से हसी आती थी और भय भी होता था। नानी थोडी देर मौन रहकर सिर हिलाती रही, लेकिन शीघ्र ही कल्पना के घोडे फिर दौडने लगे

"और मैंने ऐसे आदमियो को भी देखा है, जिनके ऊपर पिशाच सवारी करते हैं। एक बार जाडे की रात थी। बडे जोरो की हवा चल रही थी और बर्फ गिर रही थी। मैं द्यूकोव नाला पार कर रही थी। याद है न, मैंने एक बार तुझे बताया था कि उसी जगह जमे हुए पोखर के गढे मे याकोव और मिखाईल ने तेरे बाप को डुबोकर मार डालने की कोशिश की थी। मैं उसी जगह थी। सडक से नाले मे उतरी ही थी कि यकायक जोर से सीटी की आवाज आयी, चीख चिल्लाहट सुनाई दी। देखती क्या हू कि तीन काले घोडो वाली एक गाडी पीछे से सरपट दौडी चली आ रही है। कोचवान की जगह पर गोल-मटोल बडा सा पिशाच बठा था, तिरछी लाल टोपी पहने। सीट पर खडा होकर लगाम की जगह लोहे की जजीर से वह घोडो को हाक रहा था। दोनो हाथ उठे हुए थे। घोडे नाला पार नहीं कर सके, पर सीधे, बर्फ उडाते पास के पोखर की ओर दौडे। गाडी पर शैतानो पिशाचो की पूरी मडली सवार थी। वे जोर जोर से सीटी बजा रहे थे और चिल्लाते हुए अपनी टोपिया उछाल रहे थे। धडाधड सात गाडिया मेरी बग़ल से गुज़र गयीं। सातो मे काले घोडे जुते थे। वास्तव मे वे घोडे नहीं, ऐसे लोग थे, जिनपर माता पिता का श्राप पडा था। पिशाच ऐसे ही लोगो को पकडते हैं। उन्हे रात भर गाडी मे घुमाते और जशन मनाते हैं। शायद वह पिशाचो की बारात थी "

नानी इतने सहज विश्वास के साथ बोलती थी कि उसकी कहानी पर यकीन न करना असम्भव था।

लेकिन इन कहानियो से भी मजेदार ईसा की माता सम्बन्धी उसके पद्य थे, जिनमे कहा जाता था कि ईसा की माता कसे बडी मुसीबतें कठिनाइयां सहकर 'डाकुओ की रानी' येंगालिचेवा के पास गयी थी

और उसे र्सातया को लूटने और सताने से मना कर दिया था, या भक्त अलेक्सेई और सूरमा इवान की कविताए, बुद्धिमती वसिलीसा का आख्यान, या यवरा-पादरी और सत गोडसन के किस्से। मार्ता पोसादनित्सा, डाकू-सरदार मामा उस्ता, मिस्र की पापिन मरिया और डाकू की माता के दुःख की कहानियां बड़ी डरावनी थीं। किस्से कहानियो और कविताओं का उसके पास अक्षय भण्डार था।

आदमियो से उसे डर नहीं लगता था—नाना से भी नहीं। न उसे पिशाचों और भूत प्रेतों का भय सताता था। लेकिन तिलचटा से वह थर थर कांपती थी। दूर पर भी तिलचटा होता, तो उसे पता लग जाता। प्राय वह रात मे मुझे उठाकर भयकम्पित स्वर मे कहती थी

"अलेक्सेई! जरा उठ, प्यारे बेटे! देख तिलचटा रेंग रहा है। ईसा के लिए उसे मार डाल!"

नींद मे ही उठकर मैं मोमबत्ती जलाता और दुश्मन की खोज में घोडा बनकर जमीन पर रेंगने लगता। अक्सर दुश्मन का पता न मिलता। तब मैं नानी से कहता

"यहा तिलचटा नहीं है।" वह रजाई मे मुह छिपाये, निश्चल पडी, वहीं से कहती

"है, जरूर है। और ध्यान से देख। तेरे पाव पडती हू। वह छिपा हुआ है।"

और उसी की बात सच निकलती। अक्सर तिलचटा चारपाई से बहुत दूर बैठा मिलता।

तब नानी कहती

"मार दिया? धन्य भगवान! तू युग-युग जी, मेरे लाल।" यह कहते और अत्यन्त प्रसन्न होते हुए वह मुह पर से रजाई हटा देती।

अगर तिलचटा न मिलता, तो उसे नींद न आती। रात मे जरा-सी आहट होते ही वह रजाई के अदर सिहर उठती और अपने आप बोलने लगती

"वह देख, दरवाजे के पास चल रहा है वह घुसा, ट्रंक के नीचे घुसा अब "

मैं पूछता

"तुम तिलचटा से इतना डरती क्यो हो?"

उसका जवाब समझदारी का होता था

"तिलचटो से लाभ ही क्या है? वे काले पिशाचो की तरह केवल हमेशा इधर से उधर रेंगते रहते हैं। भगवान ने सभी जीवो को किसी न किसी प्रयोजन से बनाया है। गोजर से पता चलता है कि मकान मे सर्दी समा गयी है। खटमलो से दीवारा की गदगी का भास होता है। देह मे चिल्लड दिखाई पडने से समझ लो कि बीमार पडोगे। सबो का स्पष्ट प्रयोजन है, लेकिन तिलचटे? जाने ये किसलिए बने हैं? क्या प्रयोजन है इनके अस्तित्व का?"

एक दिन नानी घुटनो के बल बठी घुलमिलकर भगवान से बातचीत कर रही थी। तभी नाना ने भडाक से दरवाजा खोला और भर्राये हुए गले से चिल्लाये

"वर्वारा की मा! दौडो! ईश्वर का प्रकोप! कारखाने मे आग लग गयी है।"

"क्या हुआ? क्या हुआ?" कहती नानी उठी। दोनो अधेरे, बडे बठकखाने मे पर पटक्ते हुए भागे।

नानी ने चिल्लाकर कठोर, दृढ आवाज मे आदेश दिया

"येव्गेनिया, देव प्रतिमाए उतार ले! नताल्या! लडको को झटपट कपडे पहना दे।"

नाना बिसूरने लगे

"हाय किस्मत "

मैं रसोईघर मे दौडा! आगन की ओर वाली खिडकी सोने की तरह दमक रही थी और कमरे के फश पर सुनहली छाया नाच रही थी। याकोव मामा नगे परो मे जूता डालकर छायावाली जगह पर उछलने लगे, मानो तलवे जल रहे हो। वह चिल्ला रहे थे

"यह मिखाईल की करतूत है। वही आग लगाकर भागा है।"

नानी ने आकर उन्हे डाटा

"कुत्ता कहीं का!" और इतने जोर से दरवाजे के बाहर ढकेल दिया कि वह गिरते गिरते बचे।

खिडकी के शीशे पर जमे हुए पाले के पार कारखाने का जलता छप्पर दिखायी पड रहा था। लपटें खुले दरवाजे के अदर नाच रही

थीं। शांत रात्रि मे आग के धूम्रहीन लाल शोले उठ रहे थे। केवल खूब ऊचाई पर धुए का एक बादल हवा मे लटक रहा था। आकाश गंगा अपने स्थान पर स्पष्ट लक्षित हो रही थी। चारो ओर फली बर्फ लाल लाल दिख रही थी। बाहर की ओर बनी कोठरियो की दीवारें हिल रही थीं, मानो लरजकर आगन के उस कोने मे गिर पडना चाहती हो, जिधर आग जोर से जल रही थी। कारखाने की चौडी दरारें लपटो से प्रकाशित हो रही थीं और कभी कभी वे पिघली तथा टढ़ी हुई कीलो के बीच से बाहर निकल पडती थीं। आग के लाल, सुनहले फीते साप की तरह छप्पर के सूखे काठ के पल्लो पर चढ़ जाते थे, जहा पकी मिट्टी की बनी चिमनी आकाश मे सिर उठाये हवा मे धुए की लहरे छोड रही थी। खिडकी के शीशे पर हल्की चिटक अथवा कोमल सरसराहट की हल्की प्रतिध्वनि सुनाई पड जाती थी। आग बढ़ रही थी। उसके भव्य तेज से सौंदर्य परिपूरित होता हुआ कारखाना गिरजाघर की देव प्रतिमाओ वाली वेदी के समान लग रहा था, जो बरबस अपनी ओर खींच लेती है।

मैंने सिर पर भेड की खाल का भारी कोट रख लिया और परों मे किसी का जूता डाल लडखडाता हुआ ड्योढ़ी मे पहुचा और वहा से बाहरी ओसारे मे। उस जगह पहुचकर मैं स्तम्भित रह गया। आग की लौ से आखें चकाचौंध हुई जाती थीं, लपटो की गरज और नाना, मामा तथा ग्रिगोरी की चिल्लाहट से कानो के परदे फट रहे थे। नानी का करतब देखकर तो मै भय से सन्न हो गया। उसने सिर पर एक खाली बोरा डाला, घोडे के साज के झूल से अपने को लपेटा और चिल्लाती हुई जलते हुए कारखाने मे घुस गयी

"तेजाब! तेजाब! तुम लोग मूर्खों की तरह खडे क्या देख रहे हो? तेजाब के बरतन मे आग पहुची, तो सारा घर उड जायेगा "

नाना चीखे

"ग्रिगोरी, रोको उसे रोको! ओफ गयी!"

लेकिन नानी बात की बात मे लौट आयी—धुए मे लिपटी, सिर हिलाती और गधक के तेजाब का भारी मटका उठाये।

वह धुए से खास रही थी। भर्राये गले से चिल्लायी

"अस्तबल से घोड़े को बाहर निकाल लो। झूल खींच लो! जल्दी! देख नहीं रहे हो इसमे आग लग गयी है।"

ग्रिगोरी ने जलता झूल नानी के कधो से जल्दी से खींच लिया और फावडा लेकर कारखाने मे बर्फ फेंकने लगा। मामा कुल्हाडा हाथ मे लिये इधर से उधर कूद रहे थे। नाना नानी के पीछे दौड रहे थे और उसके ऊपर बर्फ के ढेले डालते जा रहे थे। नानी ने बर्फ के ढेर मे मटका गाड दिया और आंगन के फाटक को खोलने के लिए दौडी। पडोस से लोग दौडे आ रहे थे। नानी उनसे अनुनय करने लगी

"अबार को बचाओ, पडोसी भाइयो! आग थोडी देर मे अबार तक पहुच जायेगी और वहा से घास के ढेर को धर लेगी। हमारा पूरा घर स्वाहा हो जायेगा। उसके बाद तुम्हीं लोगो की बारी आयेगी। छप्पर काट डालो और घास के गट्ठो को बगीचे मे फेंक दो। ग्रिगोरी! बर्फ उठाकर ऊपर फेंको। जमीन पर पडी पडी यह क्या करेगी? याकोव! तू इधर से उधर क्यो नाच रहा है? लोगो को फावडे और कुल्हाडे लाकर दे! जुट जाओ, भलेमानसो! भगवान तुम्हारी मदद करेगा!"

नानी आग ही की तरह आकर्षक लग रही थी। लपटें मानो उसी की ओर दौड रही थीं। उसके प्रकाश मे वह छाया की तरह आगन मे चारो ओर दौड रही थी। कोई जगह न थी, जहा वह मौजूद न हो। कोई चीज उसकी पनी दृष्टि से बच नहीं पा रही थी। हर आदमी को वह हुक्म दे रही थी।

शराप दौडता हुआ आगन मे आया और अपनी पिछली टागो पर खडा होने लगा, जिससे नाना इधर उधर डोलने लगे। उसकी भयभीत आखें आग की रोशनी मे लाल गोलो की तरह चमक रही थीं। उसका भडकना देख नाना उसकी लगाम छोडकर एक ओर को होते हुए चिल्लाये

"वर्वारा की मा! तुम्हीं सभालो इसे!"

शराप पिछली टागो पर खडा था। नानी उसके पेट के पास जाकर खडी हो गयी—हाथ फैलाये, निश्चल! घोडा दयनीय ढग से हिनहिनाया और एकबारगी शात हो गया। आग की ओर वह अब भी भयभीत नेत्रो से देख रहा था।

नानी ने लगाम हाथ मे ले ली और उसकी गर्दन थपथपाते हुए बोली

"डर मत! तुझे खतरे मे छोड दूगी मैं? अरी ओ, चुहिया मेरी ..."

'चुहिया', जो नानी से तिगुना ऊचा था, गौ की तरह उसके पीछे फाटक की ओर चला गया। लपट से लाल नानी का चेहरा देख वह हिनहिनाने लगा।

येव्गेनिया धाई बच्चो को बाहर ले गयी। सभी ओढनों मे बडलों की तरह लिपटे थे। नाना को पुकारकर उसने कहा

"वासीली वासील्येविच! अलेक्सेई का पता नहीं है ..."

"तुम भागो यहा से! भागो!" नाना ने कहा। मैं बाहरी ओसारे की सीढियो की बगल मे छिप गया, ताकि येव्गेनिया मुझे भी वहा से न ले जाये।

कारखाने का छप्पर भहराकर गिर पडा। शहतीर दिखाई पडने लगे, जिनसे धुआ और शोले निकल रहे थे। अदर रह रहकर विस्फोट के साथ लाल, हरी और नीली लपटें फूट पडती थीं। उनकी लपलपाती जीभ आगन की ओर बढती थी, जहा खडी भीड बर्फ फेंककर उसे बुझाने की कोशिश कर रही थी। कडाहो से खदखदाहट की डरावनी आवाज आ रही थी तथा भाप और धुआ उठ रहा था, जिससे आगन मे अजीब गध भर गयी थी और आखो से पानी आ रहा था। मैं सीढियो की बगल से निकला, तो नानी के परों से टकरा गया।

"भाग यहा से," नानी चिल्लायी, "भाग, नहीं तो कुचलकर यहीं रह जायेगा।"

कलगी लगा ताम्बे का टोप पहने हुए एक घुडसवार धडधडाता हुआ आगन मे घुस आया। उसके कत्थई घोडे के मुह से झाग निकल रहा था। कोडा फटकारते हुए वह चिल्लाया

"हटो! रास्ता छोडो।"

आगन घटियो की अविरल और मधुर टनटनाहट से भर गया। ऐसा भान हुआ कि मेला लगा है। नानी ने ढकेलकर मुझे ओसारे म कर दिया और बोली

"सुना नहीं रे? भाग, मैं कहती हू।"

उसकी बात टालना इस वक्त असम्भव था। मै रसोईघर मे चला गया और फिर खिडकी से देखने लगा। पर बाहर खडे लोगो की काली भीड के कारण आग आड मे पड गयी थी। सिर्फ जाडे की काली टोपियो और हैटो के बीच ताम्बे के टोपो की चमक दिखाई पड रही थी।

जल्दी ही पीट-पीटकर और पानी डालकर आग बुझा दी गयी। पुलिस के सिपाहियो ने तमाशा देखनेवालो को भगा दिया। नानी रसोईघर मे आयी। बोली

"यहा कौन है? तू? क्या कर रहा है? सोया नहीं। डर लग रहा है क्या? अब डरने की बात नहीं। आग बुझ गयी "

मेरी बग़ल मे बठकर मुह से कुछ बोले बिना वह झूमने लगी। रात का अधियारा और सन्नाटा लौट आया था, जिससे हृदय को ढाढ़स बधा, पर आग बुझ जाने का मुझे अफसोस होने लगा।

इसके बाद नाना दरवाजे पर आये। उन्होने वहीं से पुकारा

"वर्वारा की मा!"

"हा!"

"जल गयी न?"

"नहीं! कोई बात नहीं!"

उन्होने दियासलाई निकालकर जलायी। उसकी नीली लौ मे उनका काली गिलहरी जसा कालिख पुता चेहरा प्रकाशित हो उठा। दियासलाई से मेज पर पडी मोमबत्ती जलाकर वह धीरे से नानी की बगल मे बठ गये।

नानी भी कालिख से सनी हुई थी और उसके शरीर से धुए की गध आ रही थी। उसने कहा

"नहा लो।"

नाना ने लम्बी सास लेकर कहा

"भगवान बडा कृपालु है। कभी कभी वह तुझको ज्ञान दे देता है "

नानी के कधो को थपथपाते हुए वह मुस्कराकर बोले

"दो ही क्षण के लिए सही, पर कभी कभी ज्ञान की रोशनी भेज ही देता है प्रभु! "

नानी भी हसी, उसने कुछ कहना चाहा था कि नाना माथे पर बल डालकर बोले

"ग्रिगोरी की अब छुट्टी करनी ही होगी। उसी की लापरवाही का यह नतीजा है। बुड्ढा किसी काम का नहीं रहा। याकोव ओसारे मे बठा है, रो रहा है, बुद्धू। जाकर चुप कराओ उसे "

नानी बाहर चली गयी। वह अपनी जली उगलियो को फूक रही थी। मेरी तरफ नजर घुमाये बिना ही नाना कहने लगे

"देखा न आज अपनी नानी को? बूढी है, टूट चुकी है, फिर भी कसा जौहर दिखाया उसने! बाक़ी जितने हैं सब नाकारे–ऊह!"

वह झुक गये और थोडी देर तक चुप रहे। इसके बाद उठकर मोमबत्ती के जले टुकडो को उगलियों से अलग करते हुए बोले

"डर लग रहा था तुझे?"

"नहीं।"

"हा, डरने की कोई बात नही "

खींच खाचकर उन्होने अपनी क़मीज उतारी और कोने मे लगे हुए पानी के नल के पास चले गये। परों को पटकते हुए वहीं से ज़ोर से बोले

"घर मे आग लग जाने से बडी मूर्खता कुछ नहीं। जिसके घर मे आग लगे, उसे मूर्ख या चोर क़रार देकर बीच चौक मे कोड़े लगवाने चाहिए। यही सजा दी जाये, तो किसी के घर मे आग नहीं लगेगी " फिर मेरी ओर मुडकर बोले

"तू किसलिए बठा है? जाकर सो!"

मैं चला गया। पर उस रात सोना नहीं बदा था। पलग पर चढ़ा ही था कि किसी की मर्मभेदी चीख से घर गूज उठा। मैं कूदकर नीचे आया और रसोईघर की ओर दौडा। क़मीज के बिना नाना हाथ में मोमबत्ती लिये रसोईघर के बीच खडे थे। वह फर्श पर पर रगड रहे थे और उनके ऐसा करने से मोमबत्ती की लौ हिल रही थी।

"वर्वारा की मां! यह याकोव की चीख तो नहीं?" उन्होंने हाफते हुए पुकारा।

मैं कूदकर अलावघर पर चढ़ गया और कोने मे दुबककर बठ रहा। घर में फिर से आग लगने के वक्त जसी दौड धूप होने लगी। मर्मभेदी चीख की प्रतिध्वनिया नियमित रूप से उठकर दीवार और

छत से टकरा रही थीं। उनकी तेजी बढ़ती ही जा रही थी। नाना और मामा पागलो की तरह इधर से उधर दौडने लगे, पर नानी ने डाटकर उन्हें कहीं बाहर निकाल दिया। ग्रिगोरी अलावघर मे लकडी के बडे बडे कुदे डाल रहा था, जिससे बहुत आवाज हो रही थी। बडे-बडे देग़ो को पानी से भर वह आस्त्राख़ानी ऊट की तरह गदन हिलाता हुआ इधर से उधर घूम रहा था।

"तुम पहले आग तो जला लो," नानी ने आज्ञा दी।

ग्रिगोरी काठ सुलगाने के लिए अलावघर पर चढ़ा, तो उसके हाथ मेरे पावो से टकरा गये। वह घबराकर उठा

"कौन है? तुम! बिल्कुल डरा दिया मुझे। यहा क्या कर रहे हो? हमेशा बेमतलब हर जगह घुसते रहते हो।"

"क्या हो रहा है?" मैंने पूछा।

"तुम्हारी नताल्या मामी को बच्चा हो रहा है," उसने उदासीनता से जवाब दिया और नीचे उतर गया।

मुझे याद आया कि बच्चा होते वक्त मेरी मा तो इस तरह नहीं चिल्लायी थी।

देग़ो को आग पर चढ़ाने के बाद ग्रिगोरी ऊपर आया और मेरी बग़ल मे बठकर उसने जेब से मिट्टी का पाइप निकाला। मुझको पाइप दिखाते हुए बोला

"अधेपन के इलाज के लिए तम्बाकू पीना शुरू किया है। तुम्हारी नानी का कहना है कि नास लिया करो, लेकिन मैं समझता हू पाइप पीना ही ज्यादा अच्छा होगा "

परो को नीचे लटकाये हुए वह अलावघर के सिरे पर बठा था और मोमबत्ती की मद्धिम रोशनी को ताक रहा था। उसके कान और गालो पर कालिख के दाग़ थे, क़मीज फट गयी थी और अदर से लोहे के घेरो जसी पसलिया झाक रही थीं। उसके चश्मे का एक शीशा टूटा हुआ था, लगभग आधा शीशा फ्रेम से निकलकर गिर गया था, जिससे घाव जसी लाल और नम आख साफ दिखायी पड रही थी। तम्बाकू की पत्तिया पाइप मे भरकर वह कान लगाये मामी की चीखें सुन रहा था और कुछ ऐसे अस्त व्यस्त ढग से बडबडा रहा था कि किसी शराबी की याद आती थी।

नानी भी हसी, उसने कुछ कहना चाहा था कि नाना माथे पर बल डालकर बोले

"ग्रिगोरी की अब छुट्टी करनी ही होगी। उसी की लापरवाही का यह नतीजा है। बुड्ढा किसी काम का नहीं रहा। याकोव ओसारे मे बठा है, रो रहा है, बुद्धू। जाकर चुप कराम्रो उसे "

नानी बाहर चली गयी। वह अपनी जली उगलियों को फूक रही थी। मेरी तरफ नजर घुमाये बिना ही नाना कहने लगे

"देखा न आज अपनी नानी को? बूढ़ी है, टूट चुकी है, फिर भी कसा जौहर दिखाया उसने! बाक़ी जितने हैं सब नाकारे—ऊह!"

वह झुक गये और थोडी देर तक चुप रहे। इसके बाद उठकर मोमबत्ती के जले टुकडो को उगलियो से अलग करते हुए बोले

"डर लग रहा था तुझे?"

"नहीं।"

"हा, डरने की कोई बात नहीं "

खाच खाचकर उन्होने अपनी क़मीज उतारी और कोने मे लगे हुए पानी के नल के पास चले गये। परो को पटकते हुए वहीं से जोर से बोले

"घर मे आग लग जाने से बडी मूखता कुछ नहीं। जिसके घर म आग लगे, उसे मूख या चोर क़रार दकर बीच चौक मे कोडे लगवाने चाहिए। यही सजा दी जाये, तो किसी के घर मे आग नहीं लगेगी " फिर मेरी ओर मुडकर बोले

"तू किसलिए बठा है? जाकर सो!"

मैं चला गया। पर उस रात सोना नहीं बदा था। पलग पर चढा ही था कि किसी की ममभेदी चीख से घर गूज उठा। मैं कूदकर नीचे आया और रसोईघर की ओर दौडा। क़मीज के बिना नाना हाथ मे मोमबत्ती लिये रसोईघर के बीच खडे थे। वह फश पर पर रगड रहे थे और उनके ऐसा करने से मोमबत्ती की लौ हिल रही थी।

"वर्वारा की मा! यह याकोव की चीख तो नहीं?" उन्होने हाफते हुए पुकारा।

मैं कूदकर अलावघर पर चढ़ गया और कोने मे दुबककर बठ रहा। घर मे फिर से आग लगने के वक्त जसी दौड धूप होने लगी। ममभेदी चीख की प्रतिध्वनिया नियमित रूप से उठकर दीवार और

छत से टकरा रही थीं। उनकी तेजी बढ़ती ही जा रही थी। नाना और मामा पागलो की तरह इधर से उधर दौडने लगे, पर नानी ने डाटकर उन्हे कहीं बाहर निकाल दिया। ग्रिगोरी अलावघर मे लकडी के बडे बडे कुदे डाल रहा था, जिससे बहुत आवाज हो रही थी। बडे-बडे देग़ो को पानी से भर वह आस्त्राखानी ऊट की तरह गर्दन हिलाता हुआ इधर से उधर घूम रहा था।

"तुम पहले आग तो जला लो," नानी ने आज्ञा दी।

ग्रिगोरी काठ सुलगाने के लिए अलावघर पर चढ़ा, तो उसके हाथ मेरे पावो से टकरा गये। वह घबराकर उठा

"कौन है? तुम! बिल्कुल डरा दिया मुझे। यहा क्या कर रहे हो? हमेशा बेमतलब हर जगह घुसते रहते हो।"

"क्या हो रहा है?" मैंने पूछा।

"तुम्हारी नताल्या मामी को बच्चा हो रहा है," उसने उदासीनता से जवाब दिया और नीचे उतर गया।

मुझे याद आया कि बच्चा होते वक्त मेरी मा तो इस तरह नहीं चिल्लायी थी।

देग़ो को आग पर चढ़ाने के बाद ग्रिगोरी ऊपर आया और मेरी बगल मे बठकर उसने जेब से मिट्टी का पाइप निकाला। मुझको पाइप दिखाते हुए बोला

"अधेपन के इलाज के लिए तम्बाकू पीना शुरू किया है। तुम्हारी नानी का कहना है कि नास लिया करो, लेकिन मैं समझता हू पाइप पीना ही ज्यादा अच्छा होगा "

परो को नीचे लटकाये हुए वह अलावघर के सिरे पर बठा था और मोमबत्ती की मद्धिम रोशनी को ताक रहा था। उसके कान और गालो पर कालिख के दाग थे, क़मीज फट गयी थी और अदर से लोहे के घेरो जैसी पसलिया झाक रही थीं। उसके चश्मे का एक शीशा टूटा हुआ था, लगभग आधा शीशा फ्रेम से निकलकर गिर गया था, जिससे घाव जसी लाल और नम आख साफ दिखायी पड रही थी। तम्बाकू को पत्तिया पाइप मे भरकर वह कान लगाये मामी की चीखें सुन रहा था और कुछ ऐसे अस्त व्यस्त ढग से बडबडा रहा था कि किसी शराबी की याद आती थी।

"तुम्हारी नानी की उगलिया जल गयी हैं। बच्चा जनाने मे उन्हे बडी मुश्किल होगी। सुन रहे हो न अपनी मामी की चिल्लाहट? उस बेचारी का किसी को ख्याल ही नहीं रहा। आग लगने के फौरन बाद से ही वह डर के मारे कराह रही थी जरा सोचो तो, दुनिया मे नये जीव को जन्म देना कितना कठिन काम है। फिर भी लोग औरतो की इज्जत नहीं करते। औरत की पदवी बडी ऊंची है—वह होती है मा। इस बात को कभी मत भूलना "

मुझे बठे ही बठे नींद आ गयी। पर दरवाजे के धडाधड बद होने और नशे मे धुत मिखाईल मामा की चीख चिल्लाहट से मेरी नींद खुल गयी। मुझे अजीब-से शब्द सुनाई दिये। किसी ने कहा

"आखिरी घडी है "

एक आवाज आयी

"थोडा लम्प का तेल, कालिख और शराब मिलाकर दो—आधे गिलास तेल मे, आधा गिलास शराब और एक बडा चम्मच कालिख।"

मिखाईल मामा कह रहे थे

"मुझे एक बार उसे देखने दो "

वह टागें फलाये फश पर बठे हाथो से जमीन पीट रहे थे और बार-बार थूक रहे थे। अलावघर बहुत ज्यादा गरम हो जाने से मैं नीचे उतर पडा। मामा के पास से गुजरा, तो उन्होने मेरा पर पकडकर इतने जोर से खींचा कि मैं मुह के बल धडाम से जमीन पर जा गिरा।

"मूख कहीं का," मैंने चिल्लाकर कहा।

वह गरज उठे और मुझे ऊपर उठाकर बडे जोर से चक्कर दे दिया। बोले

"अलावघर पर मारकर तेरा सिर चकनाचूर कर दूगा!"

होश आने पर मैंने अपने को बठकखाने मे नाना की गोद मे पडे पाया। वह देव प्रतिमाओ वाले कोने मे बठे मुझे धीरे धीरे झुला रहे थे। आखें छत की ओर थीं और आप ही आप धीरे धीरे कुछ कह रहे थे

"हमारे अपराधो के लिए क्षमा नहीं है किसी के लिए नहीं।"

उनके माथे के ऊपर प्रतिमाओ के सामने जलनेवाला दीया रोशनी

उगल रहा था। कमरे के बीच, मेज़ पर मोमबत्ती जल रही थी और खिडकियो से जाडे का धुधला भोर झाक रहा था।

नाना ने मुह मेरे नजदीक सटाकर पूछा

"कहा दुख रहा है?"

मेरा अग अग दुख रहा था। माथा तर मालूम होता था और शरीर सीसे की तरह भारी। लेकिन अपने दद के बारे मे बात करने का मेरा मन नहीं था। मुझे चारो ओर का वातावरण अजीब लग रहा था। कमरे की ज्यादातर कुर्सियो पर अजनबी लोग बठे थे। एक पर बनफशई रग की पोशाक पहने एक पादरी था। दूसरी पर पके बालो और चश्मेवाला एक बूढा था, फौजी पोशाक मे। और भी बहुत-से लोग थे। सभी काठ की मूर्तियो की तरह निश्चल बठे किसी चीज की प्रतीक्षा कर रहे थे। पास ही पानी से कुछ धोने की आवाज आ रही थी और सभी के कान उस ओर लगे थे। याकोव मामा हाथ पीछे बाधे दरवाजे की चौखट के पास सीधे खडे थे।

"याकोव, इसे पलग पर पहुचा आओ " नाना ने कहा।

मामा ने मुझे इशारे से बुलाया और हम दोनो पजो के बल नानी के कमरे मे चले गये। जब मैं बिस्तर मे घुस गया, तो उन्होंने फुसफुसाकर कहा

"तुम्हारी नताल्या मामी मर गयी "

मुझको आश्चय नहीं हुआ, क्याकि मामी बहुत समय से कहीं दिखाई नहीं पड रही थी, न रसोईघर मे आती थी, न खाने की मेज पर।

"नानी कहां है?" मैंने पूछा।

"वहा।" हाथ के इशारे से उन्होने कहा और जिस तरह नगे पर पजो के बल हम आये थे, उसी तरह वह धीरे से बाहर चले गये।

मैं चारपाई पर पडा व्यग्रता से चारो ओर देख रहा था। खिडकी के शीशो के पार घने और पके बालो वाले सिर तथा धूमिल चेहरे दिखायी पड रहे थे। ट्रकवाले कोने मे नानी की पोशाक टगी हुई थी, मैं यह जानता था, पर अब मुझे ऐसा मालूम हो रहा था, मानो कोई अधेरे मे खडा है। मैंने तकिये मे सिर छिपा लिया। पर एक आख दरवाजे की ओर लगाये रहा। जी होने लगा कि पलग से कूदकर बाहर भागू। कमरे मे गरमी थी और घर मे दम घोटनेवाली अजीब गध

फसी हुई थी, जिससे मुझे इवान की मृत्यु का दिन याद आ गया—जमीन पर पडी उसकी लाश, जिससे टपाटप खून गिरकर रसोईघर मे फल रहा था। ऐसा लगा कि मेरा सिर, सभवत कलेजा, सूज गया है। इस घर मे मैंने जो कुछ देखा था, उसका एक एक दृश्य बरफीले रास्ते पर धीरे धीरे चलनेवाले छकडे की भाति मेरे सामने उभर रहा था, मेरे हृदय को दबा रहा था, मेरी आत्मा को कचोट रहा था

धीरे से कमरे का दरवाजा खुला और नानी दबे पाव अदर आयी, दरवाजे का कधे से भिडाकर वह देर तक उससे सटी खडी रही। उसकी बाह देव प्रतिमाओ वाले दीये की नीली लौ की ओर फली हुई थीं। बच्चो जसे शोकाकुल स्वर मे वह बोली

"ओह! मेरे हाथ कितने दुख रहे हैं! "

५

उसी साल के वसत मे जायदाद का बटवारा हो गया। याकोव शहर मे रहा और मिखाईल नदी के पार जा बसा। नाना ने अपने लिए पोलेवाया स्ट्रीट मे एक बडा सा अच्छा मकान खरीदा, जिसकी पहली मजिल में मधुशाला थी। सबसे ऊपर एक छोटी-सी आरामदेह बरसाती थी, नीचे बगीचा था, जिसके पीछे बेंतो से भरा एक सूखा नाला था।

नाना मुझे अपने साथ लेकर बगीचे का निरीक्षण कर रहे थे। बाग की रविशें बरफ गलने से मुलायम हो रही थीं। बेंतो को देख नाना मेरी ओर आख मारकर बोले

"चलो अच्छा हुआ, अब बेंतो की कमी नहीं होगी। जल्दी ही तेरी पढ़ाई शुरू होगी और उस समय इनकी जरूरत पडेगी "

पूरा घर किरायेदारो से भरा था। हा, ऊपरवाली मजिल पर नाना ने एक बडा कमरा अपने तथा मेहमानो को बठाने उठाने के लिए रख लिया और मैं तथा नानी बरसाती मे रहने लगे। इस कमरे की खिडकी गली की ओर खुलती थी। उससे बाहर झुककर मैं शामों

श्रौर छुट्टियो के दिनो मे पीनेवालो को गिरते-लडखडाते श्रौर कोलाहल करते हुए मधुशाला से बाहर निकलते देखा करता था। कभी वे श्राटे के बोरो की तरह घसीटकर मधुशाला से बाहर कर दिये जाते। दरवाजा चूल की चू चू श्रौर चर चर के साथ बद हो जाता। पर वे रेंगकर फिर उसी के पास पहुच जाते। तब मार पीट शुरू हो जाती। ऊपर से यह दृश्य बडा मनोरजक लगता था। सवेरा होते ही नाना श्रपने बेटो की मदद करने के लिए उनके कारखाने जाते थे श्रौर शाम हुए लौटते थे—थक्कर चूर, खिन्न श्रौर चिडचिडे।

नानी घर का कामकाज करती थी—सीना पिरोना, खाना पकाना श्रौर बगीचे की देखभाल करना—सब कुछ उसका काम था। मानो किसी श्रदृश्य कोडे से प्रताडित वह एक बडे लटटू की तरह दिन भर नाचती ही रहती। नाक मे नास लेकर मजे से छींकते हुए श्रौर माथे से पसीना पोछते हुए वह कहती

"जुग-जुग तक बनी रहे यह प्यारी सुन्दर दुनिया! श्रब हम लोग चैन से सास ले सकते हैं, मेरे बेटे श्रलेक्सेई, मेरे लाल! मा मरियम की कृपा से श्रब जरा-सा श्राराम मिला है।"

लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगा कि हम चैन का जीवन बिता रहे हैं। सवेरे से शाम तक श्रागन श्रौर घर मे किरायेदारो का श्राना जाना लगा रहता था, कोई न कोई पडोसी श्रा धमकता, सभी कहीं जाने की जल्दी मे दिखायी पडते श्रौर हमेशा ही देर हो जाने पर श्राहे भरते, सभी किसी चीज की तयारी करते श्रौर पुकारते रहते

"श्रकुलीना इवानोव्ना!"

हसमुख श्रकुलीना इवानोव्ना सबसे प्रेम के साथ बात करती। श्रगूठे से नास ठूसती हुई श्रौर बडे से साफ चौखाने लाल रूमाल से नाक पोछती हुई वह ध्यानपूर्वक सभी की बाते सुनती। किसी को वह सलाह देती

"देखो, चिल्लड छुडाने का एक ही उपाय है। गुसलखाने मे जितना हो सके, नहाना चाहिए। सब से श्रच्छा यह है कि गरम पानी मे पिपरमिंट का तेल डालकर उसकी भाप ली जाये। श्रगर चिल्लड भीतर समा गया है, तो बडे चमचे मे कलहस की शुद्ध चरबी, एक छोटे चमचे भर रसकपूर श्रौर तीन बूद पारा लेकर तीनो को सात बार

चीनी मिट्टी के खरल मे एकजान कर लेना चाहिए और देह मे उसी का लेप करना चाहिए। इसमे हड्डी या काठ का चमचा भूलकर भी नहीं इस्तेमाल करना चाहिए, नहीं तो पारा बिगड जायेगा। और न तावे या चादी से छुप्राना चाहिए। ऐसा करने से दवा नुक़सान करती है।"

कभी कभी बडी देर तक सोचने के बाद वह किसी पडोसिन को जवाब देती

"बहन, पेचोरा मठ मे सन्यासी आसफ के पास चली जाओ। मुझसे तुम्हारे सवाल का जवाब देते नहीं बनेगा।"

किसी के यहा बच्चा होनेवाला होता, तो झट धाई का काम करने के लिए उसकी पुकार होती। घरेलू झगडो मे वह पच बनायी जाती। किसी का बच्चा बीमार होता, तो वही इलाज के लिए बुलायी जाती। वह मुहज़बानी "कुमारी मरियम का सपना" सुनाती, ताकि औरत सौभाग्यशाली होने के लिए उसे याद कर ले। इसी तरह गृहस्थी के सारे मामलों मे उसकी राय ली जाती। वह कहती

"खीरा तो ख़ुद ही बता देता है कि कब अचार डालना चाहिए। ज्योही उसमे से मिट्टी की और दूसरी सभी तरह की बू जाती रहे, तो समझ लो कि नमक डालकर रख देने का वक्त आ गया। बढ़िया क्वास* तयार करने के लिए उसमे जरा तेजी लाना आवश्यक है। मीठा देने से उसमे फौरन तेजी आ जाती है। बाल्टी भर रस मे दो धार मुनक्का या थोडी चीनी डाल दो, फौरन रस उफन जायेगा। वारेनेत्स** का स्वाद कई तरह का होता है—डेन्यूब का अलग, स्पेनी अलग और काकेशिया का अलग "

मैं सारे दिन नानी के पीछे-पीछे घूमा करता। जहां भी नानी जाती मैं साथ रहता, चाहे आगन हो, या बगीचा या पडोसिनों के घर। नानी अक्सर पडोसिनो के यहां घटों बठी चाय की चुसकिया लेती हुई कहानिया सुनाया करती। ऐसा मालूम होता कि मैं उसका अभिन्न

---

*क्वास एक प्रकार का रूसी पेय, जो गरमी के दिनों मे पिया जाता है।

*वारेनेत्स एक प्रकार का दही।

ग्रग हू। सचमुच, जीवन के उन दिनो मे वह सहृदय, ग्रथक बुढिया ही मेरे जीवन का केद्र बिन्दु थी।

कभी थोडे दिनो के लिए मा भी ग्रा जाती थी। उसकी ग्राकृति ग्रभी भी कठोर ग्रौर गर्वीली थी। वह जाडे की धूप की तरह ठडी ग्रौर भूरी ग्राखो से सभी को गौर से देखती ग्रौर जल्दी ही ग़ायब हो जाती। जब जाती, तो ग्रपनी याद भी ले जाती थी।

एक दिन मैंने नानी से पूछा

"नानी! तुम जादूगरनी हो?"

"यह लो! यह कहा से सूझी रे तुझे," नानी ने हसकर कहा। पर दूसरे ही क्षण वह गम्भीर हो गयी ग्रौर बोली

"मैं किस खेत की मूली हू रे। जादूगरी तो बडी कठिन विद्या है ग्रौर मैं ठहरी जाहिल जपाट – ग्रक्षर भी नहीं जानती। ग्रलबत्ता तेरे नाना विद्वान हैं, पर मुझे तो मा मरियम ने लिखने पढने का ज्ञान नहीं दिया।"

इसके बाद ग्रपने जीवन के सम्बध मे उसने मुझे बहुत सी नयी बाते बतायीं। कहने लगी

"मैं भी बेबाप की थी। मेरी मा के पति न था, इसके ग्रलावा वह लुज थी। ग्रभी कुमारी थी कि एक दिन उसके मालिक ने उसे डरा दिया। रात का समय था। बेचारी खिडकी से कूद पडी, जिससे बग़ल ग्रौर कधे मे ऐसी चोट ग्रायी कि एक हाथ ही बेकार हो गया ग्रौर वह भी दाहिना हाथ। वह लस बनाने के काम मे बडी हुनरमद थी। ग्रपाहिज होने पर भला मालिक उसे क्या रखने लगा? बेकाम हो गयी, तो मालिक ने उसे ग्राजाद कर दिया। ग्रब चाहे जसे भी दुनिया मे रहे ग्रौर खाये। पर एक हाथवाले की गुजर कसे हो? इसलिए वह भिखारी हो गयी। हा, उन दिनो बालाख्ना के निवासी ग्रधिक खुश हाल ग्रौर रहमदिल थे। कोई बढ़ई था, कोई लस बुनता था – सब एक से एक बढकर हुनरमद। मा ग्रौर मै पतझड ग्रौर शीत ऋतु मे माग-खाकर गुज़र करती थीं। जब स्वगदूत जिब्रईल तलवार से पाले को भगा देते ग्रौर धरती पर वसत छा जाता, तो मा ग्रौर मैं शहर से दूर, जितनी दूर सभव होता, निकल जातीं – कभी मूरोम, कभी यूर्येवेत्स। बोल्गा ग्रौर शात ग्रोका का किनारा थामे हम लोग बढी

चली जाती। कितना अच्छा लगता है वसंत और ग्रीष्म मे नरम धरती पर मखमली घास के कालीन पर चलना! खेतो मे मा मरियम फूल बिखेर देती है कि चलनेवाला थके नहीं। हृदय उल्लास से भर उठता, ख़ुशी से नाच उठता। उस वक्त अम्मा अपनी नीली आखो को बद करके गाना शुरू कर देती। उसका स्वर ऊचा नहीं, कोमल और मधुर था। गीत पछियो की तरह पख फलाकर आकाश मे उडने लगते! पूरा वातावरण उस समय गीत की तानो मे बेसुध हो जाता। सचमुच, भीख मागने मे भी उन दिनो बडा आनद था। लेकिन जब मै नौ साल की हो गयी, तो गलियो का चक्कर लगाना अम्मा को बुरा मालूम होने लगा। उसे यह लाज की बात मालूम हुई, इसलिए हम लोग बालाटनो मे ही रहने लगे। मा अकेले द्वार द्वार जाकर भिक्षा माग लाती। इतवार को वह गिरजाघर के बाहर बठती। म घर पर लस बुनने का काम सीखती थी। जल्दी-जल्दी काम सीखकर अपनी मा का उद्धार करने को मैं बहुत आतुर थी। जब लस बुनने मे किसी तरह की कठिनाई सामने आ जाती, तो बठकर रोने लगती थी। लेकिन कोई दो साल मे मैने काम सीख लिया। सारे शहर मे मेरे हुनर की तारीफ होने लगी। जब किसी को ज्यादा बारीक काम कराना होता, तो वह मेरे पास आता और कहता 'अक्ल्या! यह तेरे ही बस का काम है।' मै उस वक्त फूली नहीं समाती थी। लेकिन असल श्रेय तो अम्मा को था, जिसने मुझे इतना बढिया काम सिखाया था। एकहत्थी होने के कारण वह ख़ुद नहीं कर सकती थी, पर काम सिखाना जानती थी और बढिया सिखानेवाला हो, तो अकेले दस कारीगरो को मात दे सकता है। मुझे अपने हुनर पर बडा अभिमान था। मैने मा से कहा, 'अम्मा, अब तुम्ह भीख मागने की जरूरत नहीं। अब अपने हाथ की कारीगरी से मै तुम्ह खिलाने लायक हो गयी हू।' पर मा ने कहा, 'दुत पगली! तेरे लिए दहेज की भी तो जरूरत होगी। जो तू कमायेगी, वह तेरे दहेज के लिए जमा होगा।' इसके थोडे ही दिनो बाद तुम्हारे नाना का आगमन हुआ। बाईस ही वष मे वह बजरा खींचनेवालो के मुखिया हो गये थे। उनकी मा ने मुझे बहुत अच्छी तरह से देखा, इस बात की तरफ ध्यान दिया कि मैं अच्छी कारीगर और भिखारिन की बेटी हू, इसलिए जरूर आज्ञाकारी बनकर रहूगी

मजेदार बात यह है कि वह खुद पावरोटी बेचा करती थी और बडी बदमिजाज औरत थी लेकिन खर हटाओ इस बात को, बुरे लोगो की बुराई करने से क्या फायदा? भगवान तो खुद ही जानता है कि कौन कसा है। वह खुद ही सब देखता है। भगवान उन्हे देखता है और शतान उन्हे प्यार करता है"

यह कहते हुए वह हसने लगी—हार्दिक, उन्मुक्त हसी। उसके नथुने विचित्र ढग से हिलने लगे और आखो ने बडी कोमलता से मुझे थपथपाना शुरू किया। वह दृष्टि तो स्वय ही एक कहानी थी—शब्दो से अधिक जानदार।

एक शात शाम की मुझे खास तौर से याद है। नानी और मैं नाना के कमरे मे चाय पी रहे थे। नाना की तबीयत खराब थी। वह नगे बदन, कधे पर लम्बा तौलिया लपेटे, बिस्तर पर बठे थे और रह-रहकर तौलिये से माथे का पसीना पोछ रहे थे। उनकी सास धौंकनी की तरह चल रही थी—हरी आखें धुधली और चेहरा लाल तथा सूजा हुआ। उनके छोटे छोटे नुकीले कान खास तौर से लाल मालूम पड रहे थे। चाय का गिलास उठाते समय उनके हाथ कापने लगे। वह इतने विनम्र थे कि पहचान ही मे नहीं आ रहे थे।

लाड चाव से बिगडे बच्चो जैसे नखरे के अन्दाज मे वह नानी से बोले

"मुझे चीनी क्यो नहीं देती?"

नानी ने प्यार से, किंतु दृढतापूर्वक उत्तर दिया

"शहद डालकर पीना तुम्हारे लिए अधिक फायदेमद होगा।"

उन्होने आहे भरते और हाय वाय करते हुए चाय को गले के नीचे उतारा।

"तुम मेरा खयाल रखना, कहीं मैं खत्म ही न हो जाऊ," उन्होने कहा।

"घबराने की जरूरत नहीं है। मै खयाल रख रही हू।"

"हा, हा, जरूर ऐसा करना। अगर मैं अभी मर गया, तो अब तक का जीना अकारथ हो जायेगा।"

"तुम बोलो नहीं, चुपचाप लेटे रहो।"

एक मिनट तक वह ग्राखें बद किये पडे रहे ग्रौर ग्रपने नीले होठो को चटपटाते रहे। फिर हठात इस तरह उठ बठे, मानो किसी ने चिकोटी काट ली हो।

"जसे हो याकोव ग्रौर मिखाईल का जल्दी से ब्याह कर देना चाहिए। बीविया ग्रौर नये बाल बच्चे हो जाने से शायद दोनो कुछ ठिकाने ग्रायें।"

वह एक एक करके शहर की शादी लायक लडकियो के नाम गिनाने लगे। नानी बिना कुछ टीका किये चुपचाप चाय के गिलास पर गिलास खत्म कर रही थी। मैंने कोई शतानी की थी, जिसकी वजह से नाना ने मुझे बाहर जाने से मना कर दिया था। ग्रत मैं खिडकी के पास बैठा सूरज की डूबती किरणो ग्रौर मकानो की खिडकियो मे पडनेवाले उनके चमकीले प्रतिबिम्ब को देख रहा था।

बगीचे मे भोज वृक्षो के चारो ग्रोर गुबरलो के झुण्ड भन भन कर रहे थे। पास के ग्रागन मे कोई पीपागर हथौडी घनघना रहा था ग्रौर नजदीक ही से छुरियो पर सान धरनेवाले के पहिये की ग्रावाज ग्रा रही थी। सूखे नाले के उस पार, घनी झाडिया मे खेलते बच्चो का कोलाहल सुनायी पड रहा था। मेरा मन उनके बीच पहुच जाने को छटपटा रहा था। हृदय मे गोधूली-बेला की गहन उदासी भरी हुई थी।

यकायक नाना ने एक किताब निकाली, बिल्कुल नयी, ग्रौर उसे हथेली पर पटकते हुए खुशमिजाजी से बोले

"ग्रबे गडबडझाले! उल्टी खोपडीवाले! इधर ग्रा बुद्धू! यहां बठ मेरे पास। हा। ग्रब देख, गाल की ऊची हड्डीवाले, देखता है यह क्या निशान है? यह है 'ग्र' से ग्रनार! बोल 'ग्र' से ग्रनार! 'ब' से बताशा। 'व' से वन। बता, क्या है यह?"

"'ब' से बताशा।"

"ठीक। ग्रौर यह?"

"'व' से वन।"

"ग़लत! यह 'ग्र' से ग्रनार। ग्रौर ठीक से देख। देखता है? 'ग' से गधा, 'द' से दवात, 'ख' से खरगोश। ग्रब बता, क्या है यह?"

"'द' से दवात।"

"ठीक। और यह?"

"'ग' से गधा।"

"बिल्कुल ठीक! और यह?"

"'ग्र' से ग्रनार।

नानी ने टोका

"बाबू, तुम्हारे लिए चुपचाप लेटे रहना ही बेहतर होगा "

"बस, तुम नहीं टोको! इसी से तो चिंता से ज़रा छुटकारा मिलता है। चुप रहूं, तो कुढ़-कुढ़कर मर जाऊं। पढ़े जा, ग्रलेक्सेई!"

उन्होंने ग्रपना गरम ग्रौर नम हाथ मेरे कंधे के गिर्द डाल दिया ग्रौर उंगली रख रखकर ग्रक्षर पहचनवाने लगे। दूसरे हाथ से ठीक मेरे सामने किताब पकड़े रहे। उनकी देह से सिरके, पसीने ग्रौर भुने प्याज़ की तीखी गंध ग्रा रही थी, जिससे मेरा तो दम घुटा जाता था। न जाने क्यों वह ग्रजीब तरह के जोश में ग्रा गये ग्रौर बिल्कुल मेरे कान में चिल्लाने लगे

"'क' से कलम, 'ल' से लकड़ी।"

शब्द जाने पहचाने थे, पर स्लाव लिपि से मेल न खाते थे। 'ल' लकड़ी जैसा तो क्या, पिल्लू जैसा जान पड़ता था। 'फ' 'फकीर' बिल्कुल कुबड़े ग्रिगोरी की तरह था। पेट फूले हुए 'ब' को देखकर मुझे लगता था जैसे मैं ही नानी की गोद में बैठा होऊं। ग्रौर लगभग सभी ग्रक्षरों में कुछ न कुछ ऐसा था कि उससे नाना के चेहरे की याद ग्रा जाती थी। वह ककहरे की कवायद कराते गये। कभी एक सिरे से ग्रक्षरों को रटाते, कभी बीच से। मुझे भी उनके जोश की छूत लग गयी। मैं भी गला फाड़कर ग्रौर पसीने से तर होकर चिल्लाने लगा। उनको मेरे चिल्लाने पर हंसी ग्रा गयी ग्रौर हंसने से खांसी उठ गयी। बोले

"वर्वारा की मां! देख तो ज़रा इसकी पढ़ाई," एक हाथ से छाती ग्रौर दूसरे से किताब को दबाये हुए वह बोले। "ऊंह! ग्रास्त्राख़ानी गधा कहीं का। इतने ज़ोर ज़ोर से चिल्ला क्यों रहा है?"

"चिल्ला तो ग्राप रहे हैं " मैंने कहा।

नानी मेज़ पर कुहनी टेके ग्रौर मुट्ठियों पर ठुड्डी रखे हम लोगों की पढ़ाई देख रही थी ग्रौर धीरे धीरे हंस रही थी। नाना ग्रौर नानी दोनों मुझे इस वक्त बहुत ग्रच्छे लग रहे थे। नानी बोली

"अब बस भी करो। दोनो ने बहुत सिर खा लिया एक दूसरे का।" नाना ने दास्ताना आवाज मे मुझसे कहा

"मैं तो बीमार होने के कारण गला फाड रहा हू। तू क्यो गला फाड रहा है?"

इसके बाद पसीने से तर माथे को डोलाते हुए नानी से बोले

"नताल्या बेचारी का ख्याल गलत था। इसकी याददाश्त काफी तेज है   हा, तू पढता जा, नकचप्पे!"

इसके बाद उन्होंने मुझे मजाक करते हुए पलग से नीचे ढकेलकर कहा

"अब काफी हो गया। कल तू मुझे पूरी वणमाला सुनाना। अगर एकदम सही सही सुनायेगा, तो पाच कोपेक इनाम मिलेगा "

मैं किताब लेन लगा, तो उन्होने मुझे नजदीक खींच लिया और उदास होकर बोले

"तेरी मा ने तो तुझसे किनारा कर लिया, भया "

"बाबू! कसी बात कर रहे हो तुम?" नानी बोली।

"दिल दुखता है, तो बोलता हू   कौन जानता था कि ऐसी लडकी भी कुराह थाम लेगी?"

यकायक मुझे ठेलते हुए उन्होंने कहा

"जा, बाहर जाकर खेल! लेकिन आगन और बगीचे मे रहना, सडक पर नहीं जाना। समझा न!"

अधा क्या चाहे दो आखें। बगीचे के लिए ही तो मेरा मन व्यग्र था। मै जानता था कि मेरे नाले के किनारे पहुचते ही लडको की टोला नीचे से ढेलो की वषा शुरू कर देगी। मै इट का जवाब रोडो से देने को उत्सुक था।

"पिल्ला आया, पिल्ला आया!" मुझे देखते ही लडके चिल्लाये और "मरम्मत करो! मरम्मत करो!" कहकर जल्दा जल्दी गोला बारूद जुटाने लगे।

'पिल्ले' का क्या खास अथ होता है, मुझे इसका ज्ञान न था, इसलिए यह विशेषण मुझे विशेष अपमानजनक नहीं मालूम हुआ। अलबत्ता एक साथ इतने विरोधियो के साथ मोरचा लेने मे अपार आनद था। खासकर जब अपना ढेला निशाने पर सटीक बठता और दुश्मनो

की फौज भाग खडी होती या झाडियो मे छिप जाती, तो मजा आ जाता। हम लोग लडते थे, पर मन मे दुर्भावना लेकर नहीं और बाद मे भी किसी के दिल मे मल नहीं रह जाता।

मैं पढ़ने मे तेज निकला, इसी लिए शायद नाना मुझपर अधिक ध्यान देते थे। बेंत भी अब बहुत कम लगते थे, गोकि खुद मेरी राय मे पहले से अधिक ऐसा होना चाहिए था। कारण कि अवस्था बढने के साथ-साथ मैं अधिक निर्भीक होता गया, नाना के नियमो और आज्ञाओ का अवसर उल्लघन करने लगा था। किंतु नाना अब केवल डाट या धमकाकर छोड देते थे।

मेरे मतानुसार तो पहले वह मुझे अवसर बिना वजह मारा करते थे। एक दिन मैंने यह बात उनसे कह ही दी।

धीरे से मेरी ठोडी पकडकर उन्होने मेरा सिर ऊपर किया और आख मारकर बोले

"क्या बोलता है बे!"

और हसकर कहा

"बडा गुस्ताख होता जा रहा है आजकल। कितनी बार तेरी ठुकाई होनी चाहिए, यह तू कसे जानेगा? इसका फसला मैं कर सकता हू, केवल मैं! भाग यहा से!"

मैं चलने को हुआ, तो उन्होने मेरा कधा पकडकर अपनी ओर घुमा लिया और आखों मे आखें डालकर बोले

"अच्छा यह बता, तू धूत्त है या सरलहृदय?"

"मैं नहीं जानता।"

"नहीं जानता? अच्छा तो मै बता देता हू—धूत्त होना चाहिए। सरलहृदय होने से धूत्त होना अच्छा है। भेड सरलहृदय होती है। यह याद रखना। समझा? जा, अब खेल!"

उसके कुछ ही दिनो बाद मैं अक्षर जोड जोडकर सॉल्टर* पढ़ने लायक हो गया। अवसर शाम की चाय के बाद पढाई आरम्भ होती

---

*सॉल्टर—बाइबिल के भजनो की पुस्तक, जो हिंदी मे 'भजन-संहिता' के नाम से छपी है।

और मुझे हर बार कोई न कोई भजन पूरे का पूरा पढ़कर सुनाना पड़ता था।

भजन की पांति के एक एक अक्षर पर तर्जनी बढ़ाते हुए मैं हिज्जे करता "'म' से मछली, 'उ' से उल्लू, 'ब' से बताशा, 'अ' से आलू, 'र' से रायता, 'इ' से इमली, 'क' से काग। यह तो हुआ 'मुबारिक'। फिर, 'हा' से हाथी, 'व' वालदा—'ह वे, मुबारिक—हैं—वे। 'मुबारिक ह वे लोग '"*

रटाई के कारण ऊबकर मन मे तरह-तरह के सवाल उठने लगे। मैंने पूछा

"कौन मुबारिक हैं? याकोव मामा?"

"लगाऊगा कसके तमाचा सिर पर। फिर पता चल जायेगा कि कौन लोग मुबारिक हैं।" नाना ने बिगडकर, नथुने फडकाते और नाक मे खर-खर आवाज करते हुए कहा। मगर मुझे पता चल गया कि उनका यह बिगडना बनावटी था, आदतवश और केवल दिखावे के लिए।

मेरा यह सोचना गलत न था। दो क्षण के बाद नाना मेरी ओर ध्यान दिये बिना आप ही आप बडबडाने लगे

"बात बिल्कुल ठीक है। गाना, नाचना और गिटार बजाना हो, तो हजरत बिल्कुल राजा दाऊद बन जाते हैं, लेकिन काम के वक्त अब्बशेलोम** से भी बदतर। नाचो, गाओ, खेल दिखाओ और कूल्हा मटकाकर लोगो का मन बहलाओ—बस इतना ही है! ऊह! गा रहा था 'नाचो रे हरे हरे खेत मे!' अरे बाबा, ऐसे नाचते रहने से आदमी बना जा सकता हो तब न!"

मैं पढ़ाई छोडकर उनकी ओर देखने लगा। मुह पर चिंता की झुर्रियां थीं। भौंहो पर बल और नजर मानो कहीं दूर गडी हुई। आखों मे उदासी छायी हुई थी, जिसने आकृति की सहज कठोरता को

---

*'भजन-संहिता' के तीन-चार शब्द। अनुवाद की सुविधा के लिए शब्द उर्दू साल्टर से लिये गये हैं। हिन्दी सॉल्टर मे पादरी लोग 'मुबारिक' के बदले 'धन्य' शब्द चलाते हैं।

**राजा दाऊद और अब्बशेलोम—बाइबिल की कथाओं के पात्र।

बर्फ के समान पिघला दिया था। उगलिया मेज पर हलके हलके ताल दे रही थीं। ताल देने से रग लगे नाखून चमक रहे थे। सुनहरी भौंहे काप रही थीं। मैंने कहा

"नाना!"

"क्या है?"

"कोई कहानी कहिये।"

"पढ़! कामचोर कहीं का। भजन मे मन नहीं लगता? जब देखो परियो की कहानी चाहिए," आख मलते हुए उन्होने कहा, मानो नींद से जागे हो।

मेरा खयाल था कि स्वय उन्हे भी साल्टर से परियो की कहानिया अधिक पसद हैं। यह दूसरी बात है कि भजन की पूरी किताब उन्हें कण्ठस्थ थी और शाम को सोने के लिए जाने से पहले वह नियमपूर्वक उसके एक भाग का उसी तरह पाठ करते थे, जिस तरह पादरी गिरजाघर मे स्तोत्र पाठ करता है।

मैंने कहानी के लिए हठ पकड लिया और अत मे बूढ़े को मेरी बात माननी पडी।

"ठीक ही है। साल्टर तो जन्म भर तेरे साथ रहेगी, मगर नाना की कहानी जल्द ही उनके साथ स्वर्ग मे चली जायेगी।"

कुर्सी की पीठ पर झुककर उन्होंने गर्दन पीछे की ओर तान ली और आखें छत पर गडाकर भूली भटकी यादो मे डूब गये। विचार-क्रम चलने लगा—"एक बार बालाख्ना मे जायेव नाम के महाजन के घर डाकुओ ने हमला किया। मेरे परदादा गुहार के लिए घटा बजाने गिरजाघर की ओर दौडे, पर डाकुओ ने दौडकर बीच ही मे पकड लिया और तलवार से टुकडे-टुकडे कर दिये और लाश को घटाघर से नीचे फेंक दिया।

"उस वक्त मैं बहुत छोटा था। मैंने उक्त घटना को अपनी आखो से नहीं देखा था और न मुझे यह याद ही है। मुझे फ्रासीसियो के हमले के समय की बातें याद हैं। सन १८१२ मे मैं १२ साल का था। ३० फ्रासीसी क़ैदियो को हाककर लोग बालाख्ना भी ले आये—सभी मरियल जसे। उनकी पोशाक भी अजीब थी। जिसके जो हाथ लगा, वही पहन लिया था। उनकी हालत भिखमगों से भी बदतर थी। सभी

जाड़े मे ठिठुरे हुए थर थर काप रहे थे। कुछ को तो हाथ-परो मे पाला मार गया था। वे बेचारे खड़े भी नहीं रह सकते थे। गाववाले सबो को ख़त्म करने पर तुले थे, पर पहरे के सिपाहियों ने रोका। फौज भी तब तक आ गयी और गवारो को भगा दिया। इसके बाद वे कई शहरी लोगों से हिलमिल गये। फ्रासीसी बडो मस्त तबीयत के थे। मौज आती तो वे अपनी भाषा मे गीत सुनाना शुरू कर देते। नीज्नी नोव्गोरोद के बड़े-बड़े घरानो के लोग उन्हे देखने को आया करते थे—कोई चौकडी पर, कोई घोडे पर। कुछ लोग फ्रासीसियो को गाली देते थे, पीटने की धमकी देते थे और कभी कभी एकाध हाथ जमा भी बठते थे। और कुछ लोग उनसे उनकी भाषा मे प्रेमपूवक बातें करते थे, पुराने कपडे, पसे आदि देकर उन्हें ढाढस बधाते थे। उनमे से एक बूढ़े महानुभाव की मुझे खास तौर से याद है। वह तो मुह ढक्कर रोने ही लगा, बोला, 'देखो, उस शतान के बच्चे नेपोलियन ने अपने देश वासियो का क्या हाल कर दिया है!' अजीब आदमी था—रूसी और वह भी रईस, पर उसका दिल पराये लोगो के लिए ऐसे द्रवित हो उठा ''

एक क्षण के लिए कहानी रुक गयी। नाना ने आखें बद कर लीं और बाल सहलाने लगे। इसके बाद फिर आख्यायिका आरम्भ हुई—रुक रुककर, सोचते हुए, पुरानी याददाश्तो की पोटली को टटोलते हुए।

"बाहर भयानक जाडा पड रहा था। बडे ज़ोर से बर्फ़ीली आधी चल रही थी। फ्रासीसी मेरे घर की खिडकी के बाहर खडे होकर मा को पुकार रहे थे। मा पावरोटिया बनाकर बेचती थी। वे बाहर खडे होकर पावरोटी माग रहे थे और पर पटक रहे थे। मा उन्हे कभी अन्दर नहीं आने देती, खिडकी से ही पावरोटी थमा दिया करती थी। चूल्हे से ताजा निकली, गरमागरम पावरोटी वे लपक्कर हाथ मे ले लेते थे और उसे कमीज के नीचे, कलेजे के पास अपने पाले से ठिठुरे शरीर से सटा लेते थे। वे कसे यह सह निकलते थे, समझना सम्भव नहीं। उनमे से कई शीत से मर गये। गरम देश के रहनेवाले, जाडा उनसे बर्दाश्त नहीं हुआ। दो हमारे घर के बगीचे मे ग़ुसलखानेवाली कोठरी मे रहा करते थे—एक अफसर था और दूसरा उसका अरदली।

उसका नाम था मिरोन। अफसर दुबला पतला और लम्बा था। उसका शरीर हाड मात्र रह गया था। कहीं से उसे एक जनाना लबादा मिल गया था, जो घुटनो तक ही आता था। दिल का वह बडा नेक था, पर एक नम्बर का पियक्कड। मेरी मा चोरी छिपे बियर बनाकर भी बेचती थी। वह बियर खरीदकर पीते पीते नशे मे धुत्त हो जाता और अपनी भाषा के गीत गाने लगता। थोडी थोडी रूसी भी सीख गया था और कहता था 'तुम्हारा मुल्क सफेद नहीं, काला और कठोर है।' बिल्कुल टूटी फूटी जबान बोलता था, लेकिन मतलब समझ मे आ जाता था। और वह सच ही बोलता था—हमारे प्रदेश के उत्तरी भागो मे सचमुच सौम्यता नहीं है। वोल्गा के दक्षिण मे जाओ, तो गरम और मुलायम धरती मिलती है। कास्पियन सागर के पास तो बफ का नामोनिशान भी नहीं मिलेगा। ईसा का जन्म उसी धरती मे हुआ था। यही कारण है कि बाइबिल या साल्टर मे कहीं बफ या शीत का प्रसग नहीं आता जल्दी ही सॉल्टर खत्म करके हम लोग बाइबिल आरम्भ करेंगे।"

नाना फिर चुप हो गये, मानो ऊघ आ गयी। किसी विचार मे खोये हुए, पलके समेटे और खिडकी के बाहर दृष्टि गडाये, पूरी देह सिकुडी हुई और एक बिंदु पर स्थित।

"आगे सुनाइये, नाना," मैंने कहा।

वह चौंककर बोले

"अरे हा! क्या कह रहा था मैं? फ्रासीसियो के बारे मे? हा तो, वे बेचारे भी इसान हैं, हमारे जसे ही, गुनाहगार। वे मेरी मा को 'मदम, मदम' कहा करते थे। 'मदम' का अथ हुआ मेरी देवी जी, पर उनकी 'देवी जी' ऐसी थी कि दो मन आटे का बोरा पीठ पर लादकर टहलती हुई घर चली आती थी। उसके शरीर मे बल जसी ताकत थी। मुझे तो बीस वष की उम्र तक वह बाल पकडकर झकझोरा करती थी, गोकि मैं खुद उन दिनो कम ताकतवर न था। मिरोन, जो अरदली था, घोडो को बहुत प्यार करता था। वह लोगो के घर चला जाता और इशारे से कहता कि अपने घोडे को खरहरा करने दो। पहले तो लोग घबराते थे, सोचते थे दुश्मन देश का आदमी है, कहीं घोडा खराब न कर दे। पर कुछ दिनो के बाद किसान

लोग खुद उसे बुलाने लगे। वे पुकारते, 'ऐ मिरोन!' और वह सुनते ही हसते हुए बेतहाशा दौडता। उसके बाल गाजर की तरह लाल, नाक खूब बडी और होठ मोटे मोटे थे। वह लाजवाब साईसी जानता था। घोडो की हर बीमारी का भी उसे इलाज मालूम था। बाद मे वह यहा नीज्नी नोव्गोरोद मे घोडो का चिकित्सक बन गया, पर बेचारा पागल हो गया। दमकलवालो ने उसे पीटते-पीटते मार डाला। जो अफसर था, उसे वसत ऋतु आते आते न जाने क्या हो गया। वह रोगी जसा रहने लगा और सत निकोलाई के पर्व के दिन उसकी मृत्यु हो गयी। बडी शान्त मौत हुई उसकी। गुसलखाने की खिडकी पर बठा हुआ था, मानो सपने मे लीन, और अचानक खत्म। सिर खिडकी से बाहर निकला हुआ था। मुझे उसके लिए बडा अफसोस हुआ। मैं रोने लगा। बडा भला आदमी था। हाथो मे मेरे दोनो गाल लेकर वह कान मे अपनी भाषा मे न जाने क्या क्या कहा करता था। उसके शब्द समझ मे न आते, पर सुनने मे अच्छे लगते थे। मानवीय प्यार मुहमागे नहीं मिलता। बेचारे ने एक बार मुझे अपनी भाषा सिखानी शुरू की, पर मा ने मना कर दिया। वह मुझे पादरी के पास भी ले गयी। उसने कहा कि इसे खूब पीटो और अफसर के बारे मे उसने सरकार मे शिकायत कर दी। उन दिनो लोग कठोर हुआ करते थे, भाईजान! हम लोगो पर जसी पडी है, यह तुम लोग समझ भी नहीं सकते। तुम लोग तो बच गये, तुम्हारे बदले दूसरे ही तप लिये। यह बात कभी मत भूलना। मुझको ही ले ले। क्या क्या नहीं झेलना पडा है मुझे!"

अधेरा हो गया और ऐसा मालूम पडा कि अधेरे मे नाना का व्यक्तित्व रहस्यमय ढग से विस्तीर्ण हो गया—विशाल। अधकार मे उनकी आखें बिल्ली की आखो की तरह चमक रही थीं। सोच-सोचकर, शब्दो को तौल-तौल, धीरे धीरे वह अपनी कहानी कह रहे थे। जब उसमे खुद उनकी अपनी चर्चा आ जाती, तो वह जोश मे आ जाते और अभिमान के साथ बोलते। अपने बारे मे उनका बोलना और बार-बार हिदायत करना भी मुझे अच्छा न लगता

"हा, इसे याद रख। इस बात को भूलना मत," आदि।

बहुत बाते उनकी ऐसी थीं, जिन्हे मै भूल सकता तो खुशी से भूल जाता। पर वे गरम सलाखा के दाग़ो की तरह मेरे मस्तिष्क मे बठ गयी हैं। उनके लिए नाना के उपदेश और चेतावनियो की भी जरूरत नहीं। वह परियो के क़िस्से नहीं सुनाते थे, कभी नहीं। उनकी कहानिया सच्ची घटनाओ से सम्बन्धित होती थीं। सवाल पूछने पर वह खीझ उठते थे, इसी लिए मैंने जान-बूझकर सवाल पूछा

"रूसी अच्छे होते है या फ़ासीसी?"

"*यह कौन कह सकता है? मैंने फ़ासवालो के देश मे जाकर तो* उन्हे देखा नहीं है," उन्होने चिढकर जवाब दिया। फिर बोले

"अपने बिल मे तो चूहा भी भला होता है "

"क्या रूसी लोग भले हैं?"

"कुछ लोग भले हैं, कुछ नहीं भी हैं। ग़ुलामी के जमाने मे वे आज से अच्छे थे—तपे लोहे की तरह। अब बेडिया तो खुल गयी हैं, पर पेट मे दाना नहीं है। रईसो मे दया नहीं है, पर किसानो की तुलना मे कम से कम बुद्धि तो उनमे ज्यादा है। सभी पर यह बात लागू नहीं होती है, पर यदि रईस भला है, तो बहुत ही भला है। मगर कभी कभी तो रईस भी निरे बुद्धू होते हैं, बोरी की तरह ख़ाली, जो कुछ भी चाहो उसमे ठूस दो। हमारे यहा तो खोलो की भरमार है। देखने मे भला आदमी लगता है, पर निरा खोल ही निकलता है, भीतर गिरी तो होती नहीं। अदर ही अदर कीडे सब खा गये हैं, ख़ाली खोल रह गया है। असल मे हम लोगो को थोडी शिक्षा की जरूरत है, जिससे मोटी बुद्धि तेज हो, पर मोटी बुद्धि तेज करें तो किस चीज पर "

"क्या रूसी ताकतवर हैं?"

"कुछ हैं भी, लेकिन ताकत असल चीज नहीं है। असल चीज है चतुराई। आदमी मे कितनी भी ताकत क्यो न हो, घोडे से कम ही ताकतवर होगा।"

"फ़ासीसियो ने हम लोगो से लडाई क्यो की?"

"यह तो भाई, जार जाने। लडाई भिडाई का मामला वही जानता है। हमारे-तुम्हारे जसे मामूली लोग उसका कारण भला क्या समझ सकते हैं?"

पर एक दिन जब मैंने पूछा कि नेपोलियन कौन था, तो नाना से उसका जो जवाब मिला, उसे मैं कभी नहीं भूल सका। वह बोले

"नेपोलियन एक दिलेर आदमी था, जो सारी दुनिया को जीतना चाहता था, ताकि सब लोग समान होकर जीवन बिता सके। न कोई हाकिम रहे, न लाट – सभी एक जसे हो जायें, नाम अलग ही अलग रहे, पर अधिकार सभी के बराबर हो जायें और हर आदमी का मजहब भी एक हो। बेकार की बातें थीं ये, क्योंकि एक जसे तो केवल केकडे होते हैं। मछली तक मे अलग अलग क़िस्मे होती हैं। कोई किसी का नहीं। रोहू झींगे को पाये, तो खा जाये, और स्टजन हेरिंग को निगल जाती है। हमारे मुल्क मे भी नेपोलियन हुए हैं, जसे स्तेपान राजिन या येमेल्यान पुगाचोव। इन लोगो का क़िस्सा किसी दूसरे दिन सुनाऊगा "

कभी कभी नाना आखें फाडकर बडी देर तक इस तरह घूरने लगते थे, मानो पहली बार देख रहे हो। मुझे यह जरा भी अच्छा नहीं लगता था।

लेकिन मा और पिताजी के बारे मे नाना मुझसे कभी कुछ नहीं कहते थे।

हम लोगो के ऐसे वार्तालापो के समय नानी भी अक्सर आ जाती थी। वह चुपचाप कोने मे बठ जाती और वहीं से हमारी बातें सुनने लगती। हठात बीच मे वह अपनी मीठी आवाज मे पूछ बठती

"बाबू! याद है, उस बार हम लोग पूजा करने मूरोम नगर गये थे, तो कितना आनद आया था? कौन साल था वह? "

"साल तो ठीक से याद नहीं है, लेकिन हैजे के पहले ही था, उसी साल सिपाहियो ने ओलोनेत्स प्रदेश के लोगो को पकडने के लिए जगल छान डाला था।"

"ठीक है। याद है मुझे। कितना डर गये थे हम लोग उन दिनो "

"हू!"

मैंने पूछा, ये लोग कौन हैं और जगल मे क्यों छिपे थे। नाना ने मन मारकर जवाब दिया

"ये लोग सरकारी भूदास थे, जो कारखानो से काम छोडकर भाग गये थे।"

"फिर उन्हे पकडा कसे?"

"कसे पकडा? आदमी कसे पकडे जाते हैं? वैसे ही जसे लडके खेल मे पकडे जाते हैं—कुछ भागकर छिप जाते हैं, कुछ उन्हें पकडते हैं। पकडे जाने पर उनकी कोडो और बेंतो से खूब पूजा होती थी। कभी-कभी नाक छेद दी जाती थी और लोगो को यह बताने के लिए कि ये भगोडे हैं माथा दाग दिया जाता था।"

"ऐसा क्यो करते थे?"

"कौन जानता है? सारा मामला ही गोलमाल था और यह कहना कठिन है कि क़सूरवार कौन था—भागनेवाले या पकडनेवाले "

यकायक नानी फिर बीच मे पूछ बठी

"बाबू! याद है वह समय, जब बडी आग लगी थी?"

"कौनसी बडी आग?" नाना ने सही तौर पर बात जानने के लिए जोर देते हुए पूछा।

दोनो बीते दिनो की स्मृतियो मे ऐसे डूबे कि मेरी उपस्थिति को भी भूल गये। उनका शात स्वर सम-सुरों मे प्रवाहित हो रहा था। कभी-कभी ऐसा भास होने लगता कि वे लय-ताल मे गीत गा रहे हो—अग्निकाण्डो, बीमारियो और मनुष्यों की पीठ पर पडनेवाले कोडो के गीत। दुघटना से आकस्मिक मृत्युओ, ठगो के हथकण्डो, धार्मिक उन्मादियो और क्रोधी रईसो के गीत।

"क्या कुछ नहीं देखा-सुना हम लोगो ने," नाना स्वत बोले।

"और कुछ बुरी जिदगी नहीं काटी है हमने उस साल का वसत याद है, जिस साल वर्वारा का जन्म हुआ था—कसा शानदार वसत था!" नानी ने कहा।

"वह सन १८४८ का साल था। उसी साल हगरी पर हमला हुआ था। वर्वारा के बपतिस्मा से दूसरे ही दिन उसके धर्मपिता तीखोन जबदस्ती फौज मे भरती कर लिये गये थे "

"हा, और वह फिर लौटकर नहीं आये," नानी ने आह भरकर कहा।

"नहीं ही आये। और उसी वक्त से प्रभु की छाया भी हम लोगो के ऊपर से उठ गयी। ओह, वर्वारा भी "

"बाबू छोड़ो भी "

"छोड़ें क्यों?" नाना ने बिगड कर कहा। "सभी लड़के बद निकल गये—एक एक कर सभी। सभी न्यारे। हम लोगों की सारी साधना निष्फल गयी। सोचा था कि मजबूत हांडी में सब कुछ सजो रहे हैं, पर प्रभु की मर्जी, उसने हांडी की जगह हाथ में चलनी थमा दी। सब कुछ सजोया बह गया "

वह चिल्ला उठे, मानो किसी ने छाती से गर्म सलाख छुग्रा दी हो। कमरे में नाच नाचकर, छाती पीट-पीटकर उन्होंने अपने बेटे-बेटी को कोसना और अपनी दुबली मुट्ठियां बांधकर नानी को धमकाना शुरू किया

"और यह सब तेरी ही करनी है। तूने ही लाड प्यार से सबको बिगाड दिया। तू ही डायन है!"

व्यथा के आवेश में वह देव प्रतिमाओं वाले कोने में चले गये और वहीं अपनी पतली छाती को जोर जोर से पीटने तथा आसू बहाने लगे

"भगवान! प्रभु! क्या मैं ही सबसे गया-गुजरा हू?"

उनकी भीगी आखें व्यथा और रोष से चमक रही थीं। शरीर कांप रहा था।

नानी अंधेरे में बैठी चुपचाप सलीब के निशान बना रही थी। अंत में वह उठकर उनके पास गयी और मीठे स्वर में बोली

"अपने को यत्रणा देने से लाभ? सब काम प्रभु की इच्छा से होता है। हमारे ही बेटे-बेटी सब से गये-गुजरे तो नहीं हैं। घर घर का यही लेखा है—वही लडाई झगडा, मार-पीट और चुगलखोरी। अपनी करनी, अपने आसू। सभी मा-बाप अपना बोया काटते हैं। तुम्हीं कुछ न्यारे नहीं हो "

इन शब्दों से कभी-कभी उन्हें सच्ची सात्वना प्राप्त होती थी। वह शात हो जाते थे और चुपके से आकर बिस्तर पर लेट रहते थे। इसके बाद मैं और नानी दबे पाव बरसाती में चले जाते थे।

लेकिन एक बार जब नानी इसी तरह ढाढ़स बधाने उनके पास गयी, तो उन्होंने उसके मुह पर तडाक से मुक्का जड दिया। नानी गिरते गिरते बची, लडखडायी, हाठों पर हाथ रखकर थोड़ा सभली और इसके बाद उसने धीमे, शात स्वर में कहा

"मूख कहीं का "

और नाना के परो पर मुह से निकलते खून का एक कुल्ला फेंक दिया। वह मुट्ठी तानकर दो बार जोर से चिल्लाये

"निकल यहा से, नहीं तो आज तुझे जान ही से मार डालूगा!"

"मूख!" नानी ने दरवाजे की ओर जाते हुए फिर कहा। नाना आपे से बाहर होकर उसकी ओर लपके, पर वह शात क़दमो से चौखट से बाहर निकल गयी और ठीक नाना के मुह के सामने जोर से दरवाजा दे मारा।

"बुढिया कुत्ती!" नाना आग बबूला होकर गरजे और दरवाजे को नाख़ून से नोचने लगे। उनका चेहरा लाल तवे जसा हो रहा था।

मैं अलावघर से लगे चबूतरे पर बैठा हुआ यह सब कुछ देख रहा था। काटो तो ख़ून नहीं। अपनी ही आखो पर विश्वास नहीं हो रहा था। आज पहले पहल मेरे सामने उन्होने नानी को पीटा था। यह काण्ड देख मैं मानो गडा जा रहा था। आज मुझे उनके चरित्र का एक नया पहलू मालूम हुआ—ऐसा पहलू, जो सरासर अनुचित और अन्यायपूण था और जिसे आखो से देखने के बाद मुझे ऐसा लगा कि किसी ने मानो बोझ डालकर मेरा सीना कुचल दिया है। वह दरवाजे की चौखट पकडे खडे थे। धीरे धीरे चेहरे की तमतमाहट दूर हो रही थी और उसकी जगह सफेदी छाती जा रही थी, मानो किसी ने सिर से पर तक राख मल दी हो। हठात वह कमरे के बीच आकर दोनो हाथो के बल फश पर गिर पडे। एक क्षण बाद सीधे होकर दोनो हाथो से छाती पीटने लगे

"ओह, भगवान! भगवान!"

अलावघर के चबूतरे की गरम ईंटो को बफ की सिल्लियो की तरह अनुभव करते हुए मैं उनपर से उतरकर भागा कोठे पर। नानी मुह मे कुल्ला लेकर चहलकदमी कर रही थी। मैंने पूछा

"दुख रहा है?"

कोने मे रखी बालटी मे मुह का पानी थूकते हुए वह शात स्वर मे बोली

"कुछ नहीं। दात नहीं टूटा है। केवल होठ कट गया है, जरा सा।"

"नाना ऐसा क्यो करते हैं?"

खिडकी के बाहर झाकते हुए उसने कहा

"क्रोध आ गया और क्या! बूढ़े आदमी और दुख पर दुख बर्दाश्त के बाहर हो जाता है कभी कभी तू सो रह और भूल जा इन बातो को "

मैंने कुछ और पूछा, पर वह हठात बिगडकर बोली

"सुना नहीं तूने! सो रहने को कहा है न मैंने। बिल्कुल जिद्दी लडका हो गया है "

वह खिडकी के पास बठकर होठ चूसती और रह रहकर रुमाल मे थूकती रही। मैं कपडे उतार रहा था और उसकी ओर देखता जा रहा था। आकाश का एक तारा-जडा चौकोर टुकडा ठीक उसके सिर पर नजर आ रहा था। बाहर निस्तब्धता का साम्राज्य था। और घर के अदर अधियारी फल रही थी।

जब मैं लेट गया, तो वह पास आयी और मेरा माथा सहलाते हुए बोली

"सो जा, बेटे! सो जा। मैं नीचे उनके पास जा रही हू नानी के लिए इतना अफसोस करने की जरूरत नहीं, मेरे लाल! मेरा भी क़सूर है इसमे सो जा।"

मेरा माथा चूमकर वह बाहर निकल गयी। मेरे मन मे उदासी का सागर उमड पडा। ऐसा लगने लगा कि दम घुट जायेगा। गरम गुदगुदे बिछौने को छोड मैं खिडकी के दासे पर जा बठा और अथाह व्यथा से परिपूर्ण बाहर सडक को निहारने लगा।

६

जीवन ने फिर से एक भयानक रूप ले लिया। एक दिन शाम को चाय के बाद नाना के साथ मैं साल्टर पढ़ रहा था और नानी रकाबियां धो रही थी कि अचानक याकोव मामा बेतहाशा दौडे हुए आये। उनके बाल जो यो ही सदा बिखरे रहा करते थे, आज घिसे झाडू की तरह लग रहे थे। टोपी एक कोने मे डाल किसी को राम-सलाम किये बिना ही वह जोरो से हाथ हिला हिलाकर कहने लगे

"बाबूजी! बाबूजी! मिखाईल का माथा आज गरम हो गया है। उसने मेरे यहां भोजन किया और शराब ढालते-ढालते यकायक पागलो जसा व्यवहार करने लगा—रकाबिया पटक दीं, एक गाहक का ऊनी सूट फाड दिया, खिडकियां तोड दीं और मुझे तथा ग्रिगोरी को गाली बकने लगा। अब वह यहा आ रहा है। कह रहा था कि बाबूजी को आज न छोड़ूगा। चिल्ला रहा था कि 'बुड्ढे की दाढी का एक भी बाल न बाकी रहने दूगा और उसे जान से ही मार डालूगा।' आप सभलकर रहिए "

नाना हाथो से मेज थामकर कठिनाई से खडे हुए। चेहरा सिमटकर नाक पर आ गया, ऐसा लगने लगा जसे कुल्हाडी का फल हो।

महीन आवाज मे वह बोले

"सुन रही हो न, वर्वारा की मा! अपने ही बाप को खत्म करने आ रहा है तुम्हारा लायक बेटा। तो अब तयार हो ही जाना चाहिए "

छाती तानकर वह कमरे मे चक्कर लगाने लगे। और तब दरवाजे के पास जाकर उसे लोहे के एक मोटे डण्डे से बद कर दिया। वह याकोव से बोले

"तुम दोनो की नीयत मैं खूब समझता हू। दोनो मिलकर वर्वारा का दहेज हडपना चाहते हो, लेकिन तुम्हे यह मिलेगा, यह!" कहते हुए उन्होंने मामा के नजदीक जाकर अगूठा दिखाया।

याकोव मामा उछलकर एक किनारे हो गये और रुष्ट स्वर मे बोले

"बाबूजी! आप नाहक मेरे ऊपर बिगड रहे हैं।"

"तुम्हारे ऊपर? अरे, मै तुम्हारी भी रग रग पहचानता हू।"

नानी जल्दी-जल्दी प्यालियो और रकाबियो को उठाकर आलमारी मे बद कर रही थी। वह कुछ न बोली। याकोव ने कहा

"मै तो आपको बचाने आया हू।"

नाना तिरस्कारपूण हसी हसकर बोले

"शाबाश बेटे! धयवाद है तुम्हे। वर्वारा की मा, जरा इस रगे सियार के हाथ मे हथौडा, चिमटा या लोहा थमा दो, फिर देखना इसका रगा भाई उधर दरवाजा खोलेगा, इधर यह मेरा कपाल

चकनाचूर करेगा। मेरी रक्षा करेगा? बेटा याकोव वासील्येविच! मैं क्या तुम्हें नहीं पहचानता हू?"

मामा पतलून की जेब मे हाथ डालकर चुपके से एक ओर को खिसक गये और बोले

"आपको विश्वास ही नहीं है मेरा "

"तेरा विश्वास?" नाना पैर पटककर जोर से चिल्लाये, "मैं कुत्ते, बिल्ली, चूहे का विश्वास कर लूगा, मगर तेरा नहीं। तूने ही शराब पिलाकर यह पट्टी पढायी है—मै जानता हू, यह तेरी ही करतूत है। अब तू तय कर ले—उसे मारेगा या मुझे?"

नानी ने चुपके से मेरे कान मे आकर कहा

"तू बरसाती मे जाकर खिडकी से बाहर देखता रह। ज्योही मिखाईल मामा आता दिखाई पडे, हमे खबर देना। जा, जल्दी!"

मैं ऊपर दौडा और जाकर खिडकी के दासे पर बैठ रहा। गुस्से से पागल मामा यहा आने पर क्या क्या करेंगे, इसका खयाल कर मुझे डर लग रहा था। साथ ही इतनी बडी जिम्मेदारी का काम सौंपे जाने पर गर्व भी मालूम हो रहा था। सडक काफी चौडी थी। ऊपर धूल की मोटी तह थी, जिसके नीचे से गुमटो की भांति पत्थर झाक रहे थे। बायीं ओर एक नाला पार करती वह दूर 'जेल चौक' तक निकल गयी थी, जहा पुराने जेलखाने की चार कगूरा वाली काली इमारत मिट्टीवाली जमीन पर मजबूती से तनी खडी थी। इस इमारत की शान निराली थी। उदास सौंदय से ओतप्रोत वह चौक मे खडी थी। दाहिनी ओर हमारे मकान से तीन मकान बाद सेनायो चौक पडता था, जिसके दूसरी तरफ कैदियो के रहने से पीले रग की बारिक बनी हुई थी। बीच मे भूरे रग की ऊची मीनार थी, जिसके ऊपर सांकल मे बधे कुत्ते की तरह आग बुझानेवाला एक सतरी घूम घूमकर पहरा दिया करता था। चौक मे गढ़ा और नालियों की भरमार थी। एक गडे की तह म कीचड और हरी काई जमी थी। दाहिनी तरफ दुर्गधी धूकोव पोखरा था। जैसा नानी ने बतलाया था, इसी मे जब बर्फ जमी हुई थी, मेरे मामा लोगों ने एक सुराख मे मेरे पिताजी को ढकेल दिया था। खिडकी के लगभग ठीक सामने एक सकरी गली निकल गयी थी, जिसके दोनो तरफ छोटे-छोटे रगबिरगे

मकान थे। गली 'तीन सतो' के कम ऊचे और तोदल गिरजाघर मे खत्म होती थी। सामने देखने पर घरो की छतें ऐसी मालूम होती थीं, जसे बगीचो की हरी हरी लहरो पर उलटी हुई किश्तिया।

सडक पर के मकान, जिनका रग जाडे के लम्बे महीनो और पतझड की अनत बरसातों मे घुलकर बदरग हो चुका था, ऐसे लग रहे थे जैसे गिरजाघर के ओसारे मे सटी सिमटी खडी भिखमगो की जमात। अपनी उभडी खिडकियो से मानो भीत दृष्टि से वे भी मेरी तरह किसी की प्रतीक्षा मे झाक रहे थे। सडक सुनसान थी, इक्के-दुक्के मुसाफिर इस तरह रास्ता पार कर रहे थे, जसे अलावघर पर तिलचट्टे—धीरे धीरे, इतमीनान से। खिडकी के ठीक नीचे से दम घाटनेवाली गरम भाप उठ रही थी, जिससे प्याज और गाजरभरी कचौरियो की तीखी गध आ रही थी। इस गध से मुझपर अब भी उदासी-सी छा जाती है।

सारा दृश्य देखकर मेरा दिल बठा जा रहा था। ऐसा मालूम हो रहा था कि कलेजे मे गलाया हुआ गम सीसा भर दिया गया है, जो धमनियो मे दौडकर मेरी पसलियो और छाती को चूर किये डाल रहा है। ऐसा लगने लगा कि मैं पानी के बुलबुले की तरह फैलता जा रहा हू और इतना फल जाऊगा कि ताबूतनुमा इस छोटे-से कमरे मे समा न सकूगा।

अचानक मिखाईल मामा दिखाई पडे। वह बगलवाली गली के नुक्कड पर भूरे मकान की आड से झाक रहे थे। अपनी टोपी उन्होंने माथे तक सरका ली थी, जिससे कनौतिया झाक रही थीं। वह छोटा सा भूरा कोट और घुटनो तक के बूट पहने थे, जो धूल से लथपथ थे। एक हाथ चारखानेवाले पतलून की जेब मे था, दूसरा दाढ़ी पर। उनका चेहरा नहीं दिखाई पड रहा था, पर वह इस तरह खडे थे, मानो छलाग मारकर अपने काले रोयेंदार खूखार पजो से नाना के घर का गला दबोच देंगे। मुझे फौरन दौडकर नीचे खबर देनी चाहिए थी, पर पाव मन-मन भर के हो गये और मैं खिडकी पर ही बैठा रहा। दबे पाव, मानो भूरे बूटो को गद से बचाने के लिए, मामा ने सडक पार की। इसके बाद शीशो की झनझनाहट और चूलो की चू चर के साथ मधुशाला के दरवाजे के खुलने की आवाज आयी।

मैं नीचे भागा और नाना का दरवाज़ा खटखटाने लगा।

उन्होंने अंदर से कड़ी आवाज़ में पूछा

"कौन है? अच्छा तू! क्या कहा? मधुशाला में घुसा है? अच्छी बात है। बरसाती में चला जा फिर से।"

"मुझे डर लग रहा है "

"डरने से क्या होगा?"

मैं चला गया। शाम का अंधेरा फैल रहा था। सड़क की धूल अधिक घनी तथा काली होती गयी। घरों की खिड़कियों में पीले चिराग जल उठे। उस पारवाले मकान से गिटार की दर्दभरी तान सुनायी पड़ रही थी। मधुशाला के अंदर कोई गा रहा था। दरवाज़ा खुलने पर गानेवाले की आवाज़ उड़कर खिड़की के पास आ जाती। गीत का टूटा, थका हारा स्वर सुपरिचित था। काना फ़कीर निकीतुश्का गा रहा था। बूढ़े निकीतुश्का की लम्बी दाढ़ी थी। एक आंख उसकी मुंदी हुई थी, मानो ताला जड़ दिया गया हो। दूसरी अंगारे की तरह लाल। दरवाज़ा बंद होने पर गाना बीच से कट जाता, मानो कुल्हाड़ी से बेलाग कट गया हो।

नानी को इस फ़कीर से ईर्ष्या होती थी। जब भी उसका गीत सुनती, वह ठंडी सांस भरकर कहती थी

"कितने बढ़िया गीत जानता है वह!"

अक्सर वह उसे आंगन में बुलाती। ओसारे में छड़ी का सहारा लेकर निकीतुश्का बैठ जाता और अपने गीत तथा पद सुनाने लगता। नानी नज़दीक बैठकर सुनती जाती। बीच में कभी टोककर पूछ बैठती

"क्या, मां मरियम रियाज़ान नगर में भी आयी थीं?"

"वह कहां नहीं गयीं? सभी प्रदेशों में गयी थीं वह " वह सरल विश्वास के साथ उत्तर देता।

धीरे धीरे नींदभरी थकान सड़क को लीलने लगी। उसने मेरे वक्ष को भी दाब लिया और आकर बैठ गयी मेरी पलकों पर। काश, नानी भी आ जाती इस समय बरसाती में और नानी नहीं, तो नाना ही सही। कैसे आदमी रहे होंगे मेरे पिताजी कि मामा और नाना उनसे इतनी घृणा करते थे तथा नानी, ग्रिगोरी और येव्गेनिया धाई उनकी इतनी बड़ाई किया करते हैं? मां कहां चली गयी?

इधर मुझे मा की बहुत ज्यादा याद आने लगी थी। नानी की कहानियों की नायिका के रूप मे उसी को पाता था। मा इस परिवार के साथ नहीं रहना चाहती, इस बात ने मेरे दिल मे उसकी इज्जत बहुत बढ़ा दी थी। कल्पनालोक मे विचरता हुआ मैं उसे डाकुओ के बीच बठी हुई देखता, जो अमीरो का धन लूटकर ग़रीबो को बाट दिया करते हैं, किसी सराय या घने जगल के अदर किसी गुफा मे बैठी दिखाई पडती, जहा सहृदय डाकुओ का अड्डा है। वह उन्हे भोजन पकाकर खिलाती और उनके खजाने की रखवाली करती है। एक और रूप था, जिसमे वह दृष्टिगोचर होती—"डाकुओ की रानी" येंगालिचेवा की भाति, माता मरियम के साथ वह दुनिया का भ्रमण करती हुई छिपे खजानो का लेखा ले रही है और माता मरियम "डाकुओ की रानी" की तरह उससे कहती हैं

लालच की पुतली!
धरम नहीं यह तो तेरा—धरती का सारा
सोना-रूपा ले उतार!
ऐ हडप-खसोटन!
कभी नहीं यह होने का—
धरती के कोषो तले छिपा ले लाजभार!

मा ने "डाकुओ की रानी" के शब्दों मे जवाब दिया

अब छिमा छिमा! हे निष्कलक क्वारी माता!
पातक पकिल मेरा अतर, इसपर पसीज!
अपनी खातिर मैं कभी न करती लूटपाट
यह पूत, कलेजे का टुकडा इसपर न खीज!

यह सुनने के बाद मां मरियम, जो मेरी नानी की ही भाति दयालु थी, मा को माफ कर देतीं और कहतीं

ओ री तू गीदडनी! ओ री तू मार्युश्का!
ओ री तू लाजहीन तातारन! इतना सुन—
जाना है तो जा, अपनी ही राह भले जा तू

अपनी मंज़िल चुन, अपनी क़िस्मत पर सिर धुन,
पर इतना कर, इस हरा भूमि के लोगों को
तो कभी न छू तू! कभी न छू! तू कभी न छू!
जंगल के रस्ते लग, कोई मोदचिंपन ठग,
जा इतेपिया मे जा, और घात लगा, जो चाहे तू
तो किसी फलमोक का ही पी ले लहू!

इन कहानियों की स्मृति मे डूबता-उतरता मैं सपनों के देश में पहुच गया। यकायक नीचे ड्योढ़ी और आंगन मे जोरों का हल्ला-गुल्ला उठा और मैं सपना क देश से धमाके के साथ धरती पर आ गिरा। मैंने खिड़की से झांका—नाना, यारोव मामा और मधुशाला का अजीब सा, भारी जाति का नौकर मेल्यान, धक्के देकर मिखाईल मामा को फाटक के बाहर कर रहे थे। मामा अपने को छुड़ाने की कोशिश करते थे, पर वे लोग लातो, जूतो और हाथो से उनकी मरम्मत किये जा रहे थे। अत मे वह सड़क की धूल मे मुह के बल गिर पड़े। फाटक जल्दी से बंद कर लिया गया और उसमे ताला चढ़ा दिया गया। मामा की टेढ़ी-मेढ़ी हुई टोपी किसी ने अदर से सड़क पर उछाल दी। थोड़ी ही देर मे निस्तब्धता छा गयी।

मामा कुछ देर जमीन पर पड़े रहे, इसके बाद उठे—धूलिधूसरित, अस्तव्यस्त — और उन्होने सड़क से एक पत्थर उठाकर फाटक पर दे मारा। खाली पीपे पर ताल देने से जसी झनझनाहट होती है, ढेला लगने पर फाटक से उसी तरह की आवाज आयी। अजीब सावली-सी सूरतें मधुशाला से बाहर निकल आयीं और जोर से हाथ चलाकर डाटने फटकारने लगीं। पड़ोस के मकानो की खिड़कियो से सिर निकालकर लोगो ने झाकना शुरू किया। सड़क हसी और कोलाहल से गूज उठी। ऐसा लगा कि यह भी परियों की कहानी का ही एक अध्याय है—उसी तरह रोचक, किंतु अप्रिय और लोमहर्षक।

अचानक चारो ओर नीरवता छा गयी। सभी लोग न जाने कहा चले गये, सड़क सुनसान हो गयी।

दरवाजे के पासवाले सदूक पर नानी बैठी थी—दोहरी और बिल्कुल निश्चल मानो सास भी न ले रही हो। मैं सामने खड़ा उसके

मुलायम, गम और भीगे गालो को थपथपा रहा था। पर उसे इसका एहसास ही नहीं था। घोर दुख मे डूबी, वह बडबडाती जा रही थी

"हे भगवान! बुद्धि बाटते वक्त क्या मेरा और मेरे बेटो का तुम्हे खयाल ही नहीं आया? भगवान, रक्षा करो "

नाना पोलेवाया सडकवाले इस मकान मे मुश्किल से साल भर रहे होगें—बस वसत से वसत तक। पर थोडे ही दिनो के अन्दर हमारा घर पूरी बस्ती मे बदनाम हो गया। लगभग हर रविवार को हमारे फाटक पर छोकरे जमा होते और तालिया पीटकर पूरे महल्ले मे घोषणा करते

"काशीरिनो के घर आज भी लडाई हो रही है!"

मिखाईल मामा प्राय शाम को आते और रात भर मकान के गिर्द घेरा डाले रहते। सारे दरवाजे और खिडकिया बद कर ली जातीं। भीतर रहनेवालो को काटो तो लहू नहीं। अक्सर वह अपने दो या तीन साथियो को भी ले आते। ये कुनाविनो बस्ती के शोहदे थे। वे लोग नाले की तरफ से बाग मे आ जाते थे और फिर नशे से विकृत उनका मस्तिष्क ऐसा नगा नाच दिखाता था कि कुछ न पूछिये। एक बार उन्होने रसभरी और दाख के कुजो को नोच डाला। दूसरी बार वे गुसलखाने पर टूट पडे और उसके अदर जो भी तोडने लायक चीज मिली, सब तोड फोड डाली—बेंच, कडाहा, यहा तक कि चूल्हा भी। फर्श मे जडे लकडी के कई तख्ते उन्होने उखाड दिये और चौखट समेत दरवाजा उतार लिया।

नाना खिडकी पर खडे होकर अपनी जायदाद की बरबादी देख रहे थे और गुस्सा पी रहे थे। नानी बरबस आगन मे दौडी और अधेरे मे विलीन हो गयी। थोडी ही देर मे उसकी आवाज सुनाई पडी। वह कह रही थी

"मिखाईल! मिखाईल! यह क्या कर रहा है तू? जरा सोच लो!"

जवाब मे गदी रूसी गालिया की एक बौछार सुनाई पडी। पता नहीं उन गालियो को मुह से निकालनेवाले जानवर खुद भी उसका अर्थ समझते थे या नहीं!

ऐसी घड़ी मे नानी के साथ जाने का प्रश्न ही नहीं उठता था। पर उसके चले जाने से डर लगने लगा। मैं नीचे चला गया नाना के कमरे मे।

"भाग यहा से, आख का कांटा कहीं का," नाना ने डाटते हुए कहा।

मैं फिर कोठे पर भागा और अधकार में आंखें गड़ाकर आग को देखने लगा। मैं रो रोकर नानी को पुकार रहा था। मुझे डर लग रहा था कि वे लोग उसे मार डालेंगे। नानी ने मेरी आवाज नहीं सुनी, पर नशे मे चूर मामा ने मेरा स्वर पहचानकर मेरी मां को दो-चार गदी-गदी गालियां दे डालीं।

ऐसी ही एक शाम को नाना की तबीयत खराब थी। वह चारपाई पर पड़े करवटें ले रहे थे और रोनी आवाज मे गिक्वा शिकायत कर रहे थे

"हे भगवान, क्या यही देखना बदा था मुझे? क्या इसीलिए मैंने जान मारकर पसा कमाया और अनगिनत पाप मोल लिये? घर की इज्जत का ख्याल न होता, तो पुलिस बुलाकर आज ही उसे कठघरे मे खड़ा कराता लेकिन यह बेइज्जती बर्दाश्त नहीं होगी। कौन मां बाप अपनी ही सतान को पुलिस के हवाले कर सकते ह? कोई नहीं। इसलिए चुपचाप पडा रह, ऐ बुड्ढे! तेरा कुछ बस नहीं!"

यकायक पलग से नीचे उतरकर वह लडखडाते हुए खिडकी पर जा खड़े हुए। नानी ने दौडकर उनका हाथ पकड लिया और बोली

"कहा जा रहे हो तुम?"

"मेरे हाथ मे चिराग़ दो," वह हांफते हुए चिल्लाये।

नानी ने मोमबत्ती जलाकर दी। उसे उसी तरह अपने सामने करके जसे सैनिक बदूक ताने रहता है, उन्होने खिडकी से ही मुह चिढ़ाना शुरू किया।

"ऊह!! मिखाईल चोट्टा है। खोरहा कुत्ता है! थू! "

फौरन इट का एक अद्धा खिडकी का ऊपरी शीशा तोडता हुआ नानी के पास मेज पर आ गिरा।

"नहीं लगा। नहीं लगा!" कहकर नाना चिल्लाने लगे। उनके स्वर से पता लगाना मुश्किल था कि वह हस रहे हैं कि रो रहे हैं।

नानी ने उन्हे जबदस्ती अक मे भर लिया, मानो यह नाना न थे मैं था, और पलग पर लिटाते हुए भयभीत स्वर मे बोली

"यह क्या कर रहे हो, यह क्या कर रहे हो तुम, भगवान तुम्हे अक्ल दे! अगर कुछ हो गया, तो वह सीधा साइबेरिया भेज दिया जायेगा। उसे तो इस वक्त इसका होश नहीं है! "

नाना पलग पर पड रहे। सिसकियो के कारण उनकी टागें हिल रही थीं

"ठीक ही तो है। मार ही डालने दो मुझे "

बाहर कोई जोर से गरजने और पैर पटकने लगा। मैंने मेज़ से ईंट उठा ली और खिडकी की ओर दौडा। नानी ने मुझे पकड लिया और एक कोने मे ठेलकर गुस्से से बोली

"उल्लू कहीं का, तेरा भी दिमाग़ खराब हो गया है क्या?"

एक बार मामा पीछे के ओसारे मे चढ आये और ड्योढ़ीवाले दरवाज़े पर खडे होकर बडे डडे से उसे तोडने लगे। भीतर हॉल मे नाना खडे इतज़ार कर रहे थे। हमारे मकान के दो किरायेदार भी उनके साथ थे। वे भी हाथ मे डडे लिये हुए थे। इसके अलावा मधुशाला के मालिक की लम्बी चौडी बीवी हाथ मे बेलन लिये खडी थी। उन सब के पीछे मेरी नानी थी, जो बाहर जाने के लिए ज़िद कर रही थीं

"मुझे जाने दो! जाने दो उसके पास। बस दो बातें उससे कहूगी "

नाना लाठी ताने 'भालू का शिकार' नामक चित्र के देहाती की तरह एक पाव आगे बढाये खडे थे। नानी उनके पास दौडी। उन्होंने बिना कुछ कहे पैर और कुहनी से उसे एक ओर ठेल दिया। चारों आदमी डरावना चेहरा बनाये मामा के घुसने की प्रतीक्षा कर रहे थे। दीवार पर एक लम्प लटक रहा था, जो उनके सिरो पर अटपटी और हिलती-डुलती रोशनी डाल रहा था। मैं बरसाती की सीढी पर खडा यह सब कुछ देख रहा था और जसे-तसे नानी को भी ऊपर ले आना चाहता था।

मामा जोरो से दरवाजा पीट रहे थे। नीचे का क़ब्ज़ा टूटकर झन-झन करने लगा था। सिफ ऊपर के क़ब्ज़े के सहारे दरवाज़ा टिका हुआ

था। वह भी कडकडा रहा था। नाना ने अपने हिमायतिया से वसी ही झनझनाती आवाज मे कहा

"हाथ और टाग पर मारियेगा, माथा बचाकर "

दरवाजे से सटी एक छोटी-सी खिडकी थी, जिसमे से किसी तरह केवल सिर निकाला जा सकता था। मामा उसका शीशा पहले हा चूर कर चुके थे, केवल किनारे किनारे टूटे शीशे की नोकें बच रही थीं। अधेरे मे खिडकी ऐसी लग रही थी जसे आख का गढ़ा, जिसमे से आख निकाल ली गयी हो।

नानी अचानक उस खिडकी की ओर दौडी और हाथ बाहर निकालकर जोर से चिल्लायी

"मिखाईल! ईश्वर के लिए भाग यहा से। भाग, नहीं तो ये लोग तेरा हाड गोड तोड देंगे, तुझे जिदगी भर के लिए नाकारा कर देंगे!"

उसने नानी के हाथ पर एक डडा जड दिया। मुझे इतना हा दिखाई पडा कि कोई भारी चीज खिडकी के बाहर बिजली की तरह कौंधी और नानी के हाथ पर आ गिरी। नानी वहीं गिर गयी। उसके मुह से फिर भी यही निकला

"मिखाईल, भाग " और वह बेहोश हो गयी।

नाना डरावनी आवाज में चिल्ला उठे

"वर्वारा की मा!!"

दरवाजा खुल गया और उस काली दरार से मामा अदर कूद आये, पर फौरन कूडे की तरह ठेलकर उन्हे बाहर कर दिया गया।

मधुशाला के मालिक की बीवी नानी को नाना के कमरे म ले गयी। थोडी ही देर मे नाना भी पहुच गये। पास जाकर उन्होंने वेदना भरे स्वर मे पूछा

"हड्डी टूट गयी है क्या?"

"लगता तो है," नानी ने आखें खोले बिना जवाब दिया और पूछा, "उसका क्या हुआ? क्या किया तुम लोगों ने उसके साथ?"

नाना ने बिगडकर कहा

"जरा समझ से काम ले। तुम मुझे निरा जानवर समझती हो क्या? उसे हाथ-पाव बाधकर हम लोगो ने ओसारे मे डाल दिया है।

मैंने उसके ऊपर पानी की पूरी बालटी उडेल दी। बिल्कुल राक्षस है वह, राक्षस! पता नहीं कहा से राक्षस का रक्त आया है उसके अन्दर?"

नानी पडी कराहती रही। नाना पास ही पलग पर बठ गये और बोले

"हड्डी बठानेवाली को बुलवा भेजा है। वह आ ही रही होगी। थोडी देर और बर्दाश्त करो। इन सब के रहते हम दोनो की जान जायेगी, वर्वारा की मा! देख लेना तुम।"

"दे दो इन्हीं लोगो को सब कुछ," नानी बोली।

"और वर्वारा?"

वे बडी देर तक बातचीत करते रहे—नानी शात, वेदनापूण स्वर मे। नाना जोर जोर से, गुस्से मे।

कुछ देर बाद एक कुबडी बुढिया आयी। उसके मुह की फाक एक कान से दूसरे कान तक फली हुई थी, निचला होंठ काप रहा था और जल से बाहर पडी मछली के समान मुह खुला हुआ था और ऊपर के होंठ पर से जाती हुई नाक उस तक पहुच रही थी। उसकी आखें कहा थीं यह पता नहीं चलता था। जीण टागें मुश्किल से उठ पा रही थीं, यो कहे कि वह लकडी के सहारे रेंग रही थी। वह झन झन का शब्द करती हुई एक गठरी हाथ मे लिये थी।

मुझे लगा मानो साक्षात मौत ही नानी को लेने के लिए आयी हो। मै दौडा उसकी तरफ और फेफडे की पूरी ताकत लगाकर चिल्लाया

"भाग यहा से!!!"

नाना ने मुझे पकड लिया और घसीटते हुए कोठे पर ले गये।

७

एक बात मै बहुत पहले ही समझ गया था। वह यह कि नाना और नानी के भगवान भिन्न थे।

सवेरे उठने पर नानी बडी देर तक चारपाई पर बठी अपने अदभुत बालो को सवारा करती थी। रेशम जसे लम्बे काले लच्छो मे वह दात

पीस पीसकर कघा फेरती थी और इस डर से कि मैं जाग न जाऊ, धीमे स्वर मे उन्हे कोसती जाती थी

"निगोडे! ये झडते भी नहीं "

बाल ठीक करने के बाद वह चोटी बाधती और तब जोरदार खा खा खो-खो के साथ हाथ-मुह धोती, लेकिन कुल्ला करने के बाद भी चेहरे की चिडचिडाहट नहीं धुलती थी। नींद की खुमारी झुरियो के रूप में अब भी बाकी रहती थी। इसके बाद वह देव प्रतिमाओ के सामने झुककर प्राथना आरम्भ करती थी। इसी समय से उसकी आन्तरिक स्वच्छता का आरम्भ होता, जो फौरन उसे तरोताजा कर देती।

रीढ और गदन सीधी करके वह "कज्ञान की कुमारी" के गोल मुखाडे को प्रेमपूवक निहारती और सलीब का निशान बनाते हुए अस्फुट श्रद्धापूण स्वर मे कहती

"कह दे, मा, कि आज का दिन भला बीते!"

इसके बाद फश पर माथा टेकती, फिर धीरे से उठती और बढ़ती श्रद्धा के साथ कहती

"तू आनदमयी है, परम सौंदयमयी, हरे भरे उद्यान की तरह उत्फुल्ल, मा! "

हर रोज स्तुति मे वह नये विशेषण ढूढ निकालती, इसलिए मैं मनोयोग से उसके एक एक शब्द को सुनता था।

"शुद्ध, पवित्र, मेरी प्यारी नभवासिनी! जीवन-ज्योति, मेरी गृहस्थी की रक्षक, स्वग की ज्योति, तेजमयी, निमल, प्रभु की श्रद्धेय माता, हमे बुराइयो से बचा, न मुझे किसी के दिल को ठेस लगाने दे और न अकारण मेरा ही अपमान होने दे "

उसकी काली आखो की अतल गहराई मे मुस्कान छलकने लगती। अपने भारी हाथो से जब वह धीरे धीरे छाती पर सलीब का चिह्न बनाती, तो ऐसा मालूम होता कि वृद्धावस्था चली गयी और जवानी लौट आयी है।

"प्यारे ईसा, ईश्वर के पुत्र, मैं बडी पापिन हू, अपनी माता मरियम के नाम पर मुझपर दया कर "

उसकी प्राथना केवल भगवान की स्तुति होती, एक सरल सच्चे हृदय का उदगार।

सुबह की प्रार्थना लम्बी नहीं होती थी। उस वक्त समोवार जलाने की फिक्र सवार रहती थी, क्योंकि नाना अब नौकर या दाई नहीं रखते थे। सवेरे की चाय मे जरा भी देर हो जाने पर वह गालियो से नानी की पूजा करते थे।

कभी ऐसा होता कि नाना की नींद पहले टूट जाती और वह कोठे पर आ जाते। यहा नानी की प्रार्थना चल रही होती। वह चुपचाप खडे सुनते—अपने पतले, काले होंठो के कोने मे तिरस्कारपूर्ण मुस्कराहट लिये। बाद मे नाश्ते के वक्त वह कहते

"बीसियो बार तुम्हें प्रार्थना करने की विधि सिखायी, पर तुम्हारी मोटी अक्ल मे बात अटकती ही नहीं। नास्तिका की तरह न जाने क्या बक्बक करती चली जाती हो। मेरी तो समझ ही मे नहीं आता कि भगवान इतने दिनो से तुम्हारी अटपट बातें सहता किस तरह है?"

"वह सब समझता है," नानी सहज विश्वास के साथ कहती, "चाहे जो बोलो और जसे बोलो, वह सब समझ जाता है "

"तुम्हारा सिर फिर गया है! ऊह!!"

नानी का भगवान सदा उसके साथ रहता। वह जानवरो को भी अपने भगवान की कीर्ति समझाया करती थी। उसके ईश्वर को मानना—आदमी हो या कुत्ते, पछी हो या मधुमक्खिया या घासे, सभी के लिए उसके ईश्वर को मानना आसान था—क्योंकि वह धरती के हर प्राणी पर समान रूप से प्यार और दया की दृष्टि रखता था।

एक दिन मधुशाला के मालिक की बीवी के बदमाश बिल्ले ने एक काली मना को पकड लिया। इस भूरे, सुनहरी आखो वाले सुदर बिल्ले को उस मकान मे रहनेवाले सभी लोग प्यार करते थे, यद्यपि वह एक नम्बर का चापलूस और चोर था। नानी ने भयभीत पछी को उसके मुह से छीन लिया और बिगडकर बोली

"दुष्ट कमीने! तेरे हृदय मे भगवान का जरा भी भय नहीं है!"

दरबान और मधुशाला के मालिक की बीवी नानी की बात पर हस पडे। इसपर वह बिगड गयी और कहने लगी

"तुम समझती हो कि जानवरो को ईश्वर का ज्ञान नहीं है? छोटे से छोटा जन्तु भी तुम जसे हृदयहीन इसानो से अधिक भगवान को पहचानता है "

9*

मोटे, काहिल शराप को गाड़ी मे जोतते वक्त नानी कहा करती थी

"आजकल इतना दुखी क्या है रे, भगवान के बन्दे! बुढ़ौती आती जा रही है न "

शराप सिर हिलाता और गहरे निःश्वास छोड़ता था।

फिर भी नानी की तुलना मे नाना दिन मे कहीं अधिक बार भगवान का नाम लेते थे। नानी के भगवान को मैं समझ सकता था। मुझे उससे डर नहीं लगता था, साथ ही उसके सामने झूठ बोलने की मेरी हिम्मत नहीं होती थी। ऐसा करने मे न जाने क्यो लाज मालूम होने लगती थी। इसी लाज के कारण मैं नानी से कभी झूठ नहीं बोला। ऐसे सहृदय भगवान से कुछ भी छिपाना असम्भव था और जहा तक मुझे याद है, मेरी इच्छा भी नहीं हुई कि कुछ छिपाऊ।

एक दिन मधुशाला के मालिक की बीवी मेरे नाना से झगड़ पड़ी। उसने नानी को भी गाली दी और उसे गाजर दे मारा।

नानी ने शात स्वर मे जवाब दिया

"बडी मूर्ख हो तुम, मेरी प्यारी!" लेकिन नानी के अपमान से मुझे बडा गुस्सा आया। मैंने बदला लेने की ठान ली।

बडी देर तक मैं सोचता रहा कि लाल बालो वाली मुटल्ली को, जिसका गला चरबी के मारे फूला हुआ था और आखें नजर नहीं आती थीं, कैसे मजा चखाया जाये।

झगडा होने पर पडोसियो से बदला लेने के कई तरीके मुहल्ले मे प्रचलित थे, जैसे बिल्ली की दुम काट लेना, कुत्ते को विष की गोली खिला देना, मुर्गों को जबह कर देना, या रात मे भण्डारघर मे घुसकर पत्तागोभी और खीरो के अचार के मर्तबानो मे मिट्टी का तेल डाल देना अथवा क्वास के पीपो के काग खोल देना। लेकिन इनमे से कोई भी तरीका मुझे नहीं रुचा। म इससे भी अधिक भयानक ढग से बदला लेना चाहता था।

अत मने निश्चय से काम लिया मधुशाला के मालिक की बीवी जब कुछ सामान निकालने के लिए तहखाने के भण्डारघर म घुसी, तो मने सीढी का दरवाजा बन्द कर उसमे ताला जड दिया। बदला पूरा करने की खुशी मे पहले उछल उछलकर खूब नाचने के बाद

चाभी को छत पर फेंक दिया। तब मैं दौडा दौडा रसोईघर मे गया, जहा नानी खाना पका रही थी। पहले तो वह मेरे ग्रानदातिरेक का कारण नहीं समझ सकी, पर जब बात उसे मालूम हुई, तो उसने मेरी पीठ के निचले भाग मे तीन चार तमाचे दिये। घसीटते हुए ग्रागन मे ले जाकर बोली कि छत पर जाकर फौरन चाभी ले ग्रा। उसकी इस ग्रप्रत्याशित प्रतिक्रिया ने मेरे जोश पर ठडा पानी डाल दिया। चुपके से चाभी लाकर मैंने उसे थमा दी ग्रौर ग्रागन के एक कोने मे छिप गया। नानी ने बन्दी को कारागार से मुक्त किया ग्रौर उस कलमुही को लिये मेरी ग्रोर ग्रायी। दोनो बडे मजे मे हस हसकर बाते कर रही थीं।

मधुशाला के मालिक की बीवी ने मुझे मुक्का दिखाकर कहा, "देखना, तुझे इसका ख़ूब मजा चखाऊगी," पर चर्बी मे छिपी हुई ग्राखो वाले उसके चेहरे की मुस्कराहट कह रही थी कि यह कोरी धमकी है। नानी गदनिया देकर मुझे रसोईघर मे ले गयी। उसने पूछा

"क्यो रे, ऐसा क्यो किया तूने?"

"उसने तुमपर गाजर क्यो फेंकी थी?"

"ग्रच्छा!! तो यह तूने मेरे लिए किया था! समझी! बदमाश कहीं का। ग्रलावघर के नीचे तुझे चूहो के पास ढकेल दूगी, तब ग्रायेगी तेरी ग्रक्ल ठिकाने। जरा सूरत तो देखो इस रक्षक की! जल्दी से नजर डाल लो इस बुलबुले पर, नहीं तो फूट जायेगा! ग्रगर नाना को तेरी यह कीर्ति बता दू, तो क्या हाल होगा—पीठ की खाल उधेड लेगे। बरसाती मे जाकर चुपचाप पढ!"

नानी दिन भर मुझसे नहीं बोली, पर शाम को प्राथना से पहले मेरी बगल मे पलग पर बठकर उसने जो शब्द कहे, उन्हे कभी नहीं भूल सकता। बोली

"सुन, मेरे लाल! मेरे दुलारे बेटे! एक बात सदा याद रखना भूलकर भी बडो के झगडे मे न पडना। बडे लोगो का पत बिगड चुका है—कष्ट ग्रौर लोभ ने उन्हे निकम्मा कर दिया है, लेकिन तेरा पत ग्रभी बाकी है। तेरा बाल ज्ञान ही तेरे जीवन का सूय है। वही तेरा प्रकाश है, उसे कभी न छोडना। हा, जब ईश्वर तेरा हृदय छूकर माग दिखाये ग्रौर उसपर चलने का निर्देश दे, तो जानना कि

शेष जीवन की राह मिल गयी। समझा? जहा तक दोष का प्रश्न है – उसमे पडना तेरा काम नहीं। दोषी कौन है, इसका निर्णय भगवान ही करता है और वही दण्ड देता है। दण्ड देना हमारा-तुम्हारा काम नहीं।"

एक मिनट चुप रहने के बाद उसने सास ली और दाहिनी आख सिकोडकर बोली

"कभी कभी तो दोष का निर्णय करने मे खुद भगवान भी मुश्किल मे पड जाता है।"

"ऐसा क्या? वह तो सब कुछ जानता है," मैंने चकित होकर प्रश्न किया।

उसने उदास होकर जवाब दिया

"अगर ऐसी ही बात होती, तो ससार मे बहुत सारे पाप न होते। वह ऊपर आकाश मे बैठा हम पापियो को निहारा करता है और कभी कभी उसकी आखो से अविरल आसू बहने लगते हैं, रोते रोते हिचकी बध जाती है। वह रो रोकर कहता है, 'आह! मेरी सतानो, मेरे बच्चो, तुम्हारी दुर्दशा देखकर मेरी छाती फटती है।'"

नानी बोल रही थी और खुद भी रो रही थी। आसुओ को पोछे बिना उसने देव प्रतिमाओ के पास जाकर अपनी पूजा आरम्भ कर दी।

उस दिन से उसका भगवान मेरे लिए और भी प्यारा और ग्राह्य हो गया।

मुझे पढ़ाते समय नाना भी बताते थे कि भगवान सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा, सर्वव्यापी है तथा हर कष्ट मे मनुष्य का सहारा है। पर वह नानी की तरह प्रार्थना नहीं करते थे।

नाना सुबह उठकर पहले हाथ-मुह धोते थे। फिर अपने लाल बालों और दाढ़ी मे कघी करते थे। इसके बाद बाकायदा पूरी पोशाक पहनते थे और आईने के सामने खडे होकर वास्कट और गले का काला रूमाल ठीक करते थे। इतनी तयारी के बाद पजो के बल वह देव प्रतिमाओं की ओर जाते थे। फर्श पर बिछे लकडी के तख्तो मे एक जगह गांठ थी, जो घोडे की आख जसी लगती थी। कवायद करनेवाले सिपाही की तरह दोना हाथ सीधे किये हुए नाना ठीक उस गांठ के पास रुक जाते। एक क्षण तनकर मौन खडे रहने के बाद वह तपाक के साथ कहते

"पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम पर!"

इन शब्दों का उच्चारण करने के साथ कमरे मे सन्नाटे का एक आलम छा जाता – मक्खियां भी अब भन भन करतीं तो अदब के साथ।

इसके बाद झुकी गर्दन तन जाती – भौंहे पात मे और सुनहली दाढ़ी जमीन के तल के साथ समानांतर। दृढ स्वर मे, मानो पाठ सुना रहे हों, शब्दों पर जोर देते और अनुरोध करते हुए वह प्रार्थना शुरू कर देते।

"जब क्यामत का दिन आता है, तब हर इंसान के भले-बुरे का लेखा लिया जाता है"

हल्के से छाती ठोकते हुए प्रभु से अपनी अर्जी दुहराते

"मैंने गुनाह किये हैं तेरे खिलाफ, बस तेरे खिलाफ तू मेरे गुनाहों को तरह दे"

धर्मपुस्तक का पाठ करते समय वह प्रत्येक शब्द पर पूरा जोर देते और दाहिने पर से बीच-बीच मे ताल भी देते जाते। उनके स्वर मे आदेश होता और पहनावे मे बेदाग सुथरापन। पूरा शरीर देव प्रतिमाओं की ओर केंद्रित होता था – लम्बा, पतला और कठोर।

"प्रभु की मां! तूने ही ईसामसीह को पैदा किया, जिसके छू देने मात्र से बीमारियां छूमंतर हो जाती हैं। अब तू मेरे हृदय को तमाम बुराइयों से पाक कर। मेरी आत्मा की पुकार सुन और मुझपर रहम कर!"

इसके बाद हरी आंखों मे आंसू भरकर रुआंसे स्वर मे कहते

"करनी के नाते मेरे पास कुछ नहीं है, है केवल श्रद्धा, उसे ही, हे प्रभु, करनी का स्थान दे। मुझपर ऐसा बोझ न डाल, जो मेरी ताकत से भारी हो"

बार बार, कांपते हाथों से वह जल्दी जल्दी सलीब का चिह्न बनाने लगते, आवाज खरखरी और फटी सी हो जाती तथा सींग मारते बकरे की तरह सिर झटकारते जाते। बड़ा होने पर जब मुझे यहूदियों के मंदिर मे जाने का अवसर मिला, तो मैंने जाना कि नाना यहूदियों की तरह प्रार्थना किया करते थे।

समोवार बड़ी देर से मेज पर भाप फेंकता होता और कमरे मे घर की बनी पनीर से भरी रई की गरम गरम रोटियों की सुगंध

फली होती। मेरे पेट मे चूहे डण्ड पेलते होते। नानी दरवाजे का पाखा पकडे ठडी सास लेती। उसके माथे पर बल पडा होता, नजर फर्श पर गडी रहती। सूर्य की उल्लासपूर्ण प्रथम रश्मिया खिडको से झाकने लगतीं। पेडो की पत्तियो पर पडी ओस की बूदें मोती की तरह चमकतीं। प्रभात का समीर सोम्रा, दाख और पक रहे सेबो की ताजा सुगध बिखेरता, पर नाना का रोना और सिर पीटना खत्म होने मे ही न आता

"मेरे विकारो को शात कर, क्योंकि मै अधम और अभिशप्त हू।"

मुझे उनकी सुबह और शाम की पूरी प्रार्थना मुह जबानी याद हो गयी थी। मैं हर शब्द कान लगा लगाकर सुनता था कि कोई भूल तो नहीं हुई या कुछ छूटा तो नहीं।

ऐसा विरला ही दिन होता था, पर जिस दिन ऐसा होता, मुझे बडी खुशी होती।

प्राथना समाप्त करने के बाद वह नानी और मेरी ओर मुडकर कहते

"मुबारिक हो दिन!"

हम लोग भी अभिनदन करते और इसके बाद सभी खाने की मेज़ पर जम जाते। उस वक्त मैं कहता

"आज आपने प्राथना के कई शब्द छोड दिये हैं।"

"झूठ बोल रहा है तू," वह सशक होकर उत्तर देते।

"नहीं। आपको कहना चाहिए था, 'मेरी श्रद्धा ही मेरे लिए पर्याप्त हो,' पर आपने 'पर्याप्त' नहीं कहा।"

"धत् तेरे की," वह आख मिचकाते हुए कहते, मानो अपराध करते पकडे गये हो।

बाद मे मौका खोजकर वह सूद सहित मुझसे इसका बदला लेते थे। पर तत्काल विजय का सेहरा मेरे ही सिर रहता। उनकी परेशानी से मुझे हार्दिक सतोष होता था।

एक दिन नानी ने मजाक किया

"बाबू! तुम्हारी प्राथना से भगवान ऊब गया होगा—हर रोज बस एक ही बात, वही नाद।"

"क्या ग्रा?" उन्होंने धमकी के स्वर मे कहा। "फिर कहो तो, क्या कहा तुमने?"

"मैं कह रही थी कि तुम अपने शब्दो मे प्रभु को याद क्यो नहीं करते?"

नाना का चेहरा तमतमा उठा। गुस्से से लाल वह कुर्सी पर उछले और नानी को एक रकाबी खींच मारी

"बुड्ढी डायन, निकल जा यहा से!" वह चीखे और चीखने से ऐसी आवाज निकली, जसे टहनी पर रेती रगड दी गयी हो।

ईश्वर की सवशक्तिमत्ता का प्रसग आने पर वह हमेशा उसकी निममता पर जोर देते थे। उदाहरणाथ, एक बार जब बहुत पाप बढे, तो ईश्वर ने ऐसी बाढ पदा की कि सभी डूब गये। एक बार ऐसी आग लगी कि पूरा नगर जलकर नष्ट हो गया। एक दफा अकाल और महामारी ने लोगो का सफाया कर दिया। उनका ईश्वर नगी तलवार था या तना हुआ कोडा, जो सदा गुनाहगारो की पीठ पर बरसने को प्रस्तुत रहा करता था।

अपनी दुबली, सूखी उगलियो को मेज पर पटकते हुए उन्होने मुझे चेताया

"जो प्रभु, ईश्वर के नियमो की अवहेलना करता है, उसे दुख भुगतना और नष्ट होना ही पडता है।"

ईश्वर की क्रूरता पर मुझे विश्वास ही नहीं होता था। मुझे लगता कि नाना ने ईश्वर की यह धारणा खुद गढी है, ताकि मैं डरू— ईश्वर से नहीं, उनसे। मैंने एक दिन साफ साफ पूछा

"आप मुझे यह सब इसी लिए समझाते है न कि मै आपके हुक्म पर चलू?"

नाना ने भी इसी स्पष्टता से उत्तर दिया

"अवश्य! अगर तू आज्ञा मानना न सीखेगा, तो किस काम का रहेगा?"

"लेकिन नानी?"

"वह बुड्ढी तो वज्रमूख है। उसकी अनाप शनाप बातें तू मत सुना कर। वह जम भर जाहिल और बेवकूफ रही और रहेगी। मैं उसे चेता दूगा कि इन महत्त्वपूण विषयो पर तुझसे वार्तालाप न किया करे। अच्छा अब बता, फरिश्तो मे कितने दर्जे होते हैं?"

मैने बता दिया और तब उनसे पूछा

"ऊंचे दर्जे का अफ्सर क्या होता है?"

"ओह, बहुत तेज़ हो! दर्जे से ऊंचे दर्जे पर जा पहुंचा," उन्होंने एकदम बिगड़कर कहा—होंठ चबाते हुए और नज़र झुकाकर। दूसरे ही क्षण कुछ सोचकर, अनिच्छापूर्वक बोले

"इसका भगवान से कोई सम्बन्ध नहीं है। वह धरती के लोगो मे से है। उनका सम्बल कानून होता है—यानी, वे कानून ओढ़ते, कानून बिछाते और कानून ही खाते हैं।"

"कानून किसे कहते हैं?"

"कानून? कानून यो कहो कि हमारी-तुम्हारी, सभी लोगों की आदत को कहते हैं," बूढ़े ने कहा। उसकी समझदार और बेधती हुई आखें चमक रही थीं। जाहिर था कि इस चर्चा मे उसे मजा आ रहा है। "लोग साथ रहते हैं और आपस मे एक प्रकार का समझौता कर लेते हैं, जसे कि अमुक काम करने के लिए अमुक तरीका सब से अच्छा माना जाये। और तब वह उनकी आदत हो जाती है, जिसे नियम या कानून कहकर पुकारते हैं। लडके खेल मे क्या करते हैं—मिलकर तय कर लेते हैं कि ऐसे ऐसे खेलेगे। वे जो तय करते हैं, वही हुआ कानून।"

"और ऊंचे पदवाले आदमी क्या होते हैं?"

"वे होते है खराब लडको के समान, जो खेल का नियम तोडा करते हैं।"

"वे ऐसा क्यो करते हैं?"

उनके माथे पर बल पड गये, बोले

"यह तू नहीं समझेगा। ईश्वर आदमियो के सभी खेल देखा करता है। वे कुछ चाहते हैं, वह कुछ दूसरा ही चाहता है। आदमियो का यही रवया है—उनकी किसी चीज़ का ठिकाना नहीं। बस भगवान के मुह से एक फूक निकली कि सारा खेल आधी मे सडक की धूल की तरह हवा हो जाता है।"

ऊंचे पदवाले आदमियो के बारे मे मेरी दिलचस्पी के बहुत-से कारण थे, इसलिए मैंने सवालो की झडी लगा दी

"याकोव मामा गाते हैं कि

पाक फरिश्ते चदे
अल्लाह मे अपने बदे
सरकार के आला अफ्सर
शतान के नौकर-चाकर।"

नाना ने आखें बद कर लीं और दाढी को हथेली मे लेकर मुह मे ठूसने लगे। उनके हिलते गालो से मालूम होता था कि वह मुह दबाकर हस रहे हैं।

"किसी दिन तुझे और याकोव दोनो को बोरे मे बद कर नदी मे फेंक दूगा। यही तुम लोगो का इलाज है। वह क्यो इस तरह के गीत गाता है और तू क्यो इस तरह के गीत सुनता है? इस तरह के गीत बागियो ने बनाये हैं। वे सरकार की हसी उडाते हैं।"

वह कुछ सोचते हुए थोडी देर मुझसे परे किसी चीज को देखते रहे और तब सास खींचकर बोले

"ऊह, क्या लोग हैं!!"

नाना का ईश्वर क्रुद्ध अभिभावक की तरह सब की खोपडी पर सवार रहता था, पर एक बात मे नानी और उनके ईश्वरो मे समानता थी। दोनो का विश्वास था कि उनकी गृहस्थी और सारे कारबार मे ईश्वर का दखल है। इसमे नाना के ईश्वर के अलावा सतो की एक पूरी जमात का भी हाथ था। नानी के सतो की सख्या गिनी-चुनी थी—निकोलाई, यूरी, फ्रोल और लाव्र। ये सभी बडे नेक और रहमदिल थे। वे सदा गाव गाव, नगर नगर घूमते हुए विपत्ति मे लोगो की सहायता करते थे। उनमे मनुष्यों के गुण अवगुण दोनो मौजूद थे। इसके विपरीत, हमारे नाना के लगभग सभी सन्त शहीद थे। उन्होने मूर्तिया तोडीं और रोमन बादशाहो से लोहा लिया, जिसके फलस्वरूप उन्हे तरह-तरह की यत्रणाए भुगतनी पडीं—कोई जिन्दा जला दिया गया और किसी की खाल खिचवा ली गयी।

कभी कभी नाना चिंतित होकर भगवान से कहते

"भगवान यदि पाच सौ रूबल मुनाफे पर भी हमारा यह मकान बिक्री करवा दे, तो मैं सत निकोलाई को प्रसाद चढाऊगा।"

नानी इसपर हसकर मुझसे कहती

"बुढ़ऊ की अक्ल मारी गयी है। निकोलाई को मानो अब इनका मकान बिकवाने का ही काम रह गया है।"

नाना की जन्त्री, जिसमे उनके हाथ की लिखी कई टीकाए थीं, वर्षों मेरे पास रही। सत योविम और आना के नामो के आगे उसमे लाल स्याही से लिखा था "इनकी कृपा से आज भारी विपत्ति से बचे।"

मुझे इस 'विपत्ति' की याद है। अपने नालायक बेटो की सहायता के लिए उन्होने गुप्त रूप से महाजनी का कारबार शुरू किया था। वह गिरवी पर रुपये लगाते थे। किसी ने इसकी खबर पुलिस मे कर दी। एक रात को पुलिसवाले तलाशी लेने आ पहुंचे। बडा हगामा मचा, पर खैर किसी तरह मामला रफा दफा हो गया। नाना उस दिन रात भर प्रार्थना करते रहे और दूसरे दिन मेरे सामने ही जन्त्री मे उपर्युक्त शब्द लिखे।

रात के भोजन से पहले वह मुझसे सॉल्टर, भजनो की किताब या येफ्रेम सीरिन का मोटा ग्रथ पढवाते थे। भोजन के बाद वह फिर पूजा आरम्भ कर देते। रात की निस्तब्धता मे पश्चाताप और क्षमायाचना के उनके ये शब्द अक्सर गूजते थे

"रहमदिल परवरदिगार, तूने ही दिया है और तू ही ले सकता है, क्याकि सब कुछ तेरा है हमे गुनाहा से बचा कुछ लोगो से मेरी रक्षा कर, मेरे आसुओ को मेरे पापो का प्रायश्चित मान "

अक्सर नानी कहती थी

"आज तो थकान के मारे खडा भी नहीं हुआ जाता। लगता है बिना प्रार्थना किये ही नींद आ जायेगी।"

नाना मुझे नियमित रूप से गिरजाघर ले जाते थे—शनिवार की शाम को और इतवार को तीसरे पहर की प्रार्थना के लिए। गिरजाघर मे भी कौन किस ईश्वर का भजन कर रहा है, यह मैं फौरन जान जाता था। पादरी नाना के ईश्वर की प्रार्थना करता था, पर भजनीक सदा नानी के भगवान के गीत गाते थे।

कहने की आवश्यकता नहीं कि दो ईश्वरो मे मेरे बाल-मस्तिष्क ने जो भेद कर रखा था, उसका मैंने केवल एक कच्चा खाका खींचा है, लेकिन बचपन मे इस भेद के कारण मुझे भारी आतरिक सघर्ष का

सामना करना पडता था। नाना का ईश्वर, जो किसी को प्यार नहीं करता था, बल्कि सभी के ऊपर तेवर ताने रहता था, मुझे पसद न था। मैं उससे डरता था। मुझे लगता था कि सब की बुराई और कमजोरी ढूढ़ते रहना ही उसका एकमात्र काम है। यह स्पष्ट था कि वह किसी पर विश्वास नहीं करता था, हमेशा लोगो को प्रायश्चित्त के चक्कर मे डालने की ताक मे रहता था और दण्ड देने मे उसे मजा आता था।

उन दिनो म सदा ईश्वर के बारे मे सोचा करता था। वही मेरे उस जीवन मे एकमात्र सौंदय विंदु था। शेष जो था, वह इतना कुत्सित और हृदयहीन कि उसके स्मरण मात्र से मन मे व्यथा और जुगुप्सा भर जाती। उस वातावरण मे सबसे प्रकाशवान और सबसे सुदर था भगवान—नानी का भगवान, जिसका हृदय सभी प्राणियो के प्रति प्रेम से ओतप्रोत था। यह प्रश्न मुझे परेशान करता रहता था कि नाना भगवान की सहृदयता के प्रति अधे क्यो हैं।

मेरे विचित्र स्वभाव के कारण मुझे घर से बाहर खेलने की इजाजत नहीं थी। मैं जल्दी ही अधिक उत्तेजित हो जाया करता था। बाहर का वातावरण मेरे ऊपर नशे का सा असर डालता था। जब भी बाहर निकलता था, पागलपन मे कोई न कोई झगडा या दगा फसाद कर बठता था। मेरी किसी से नहीं पटती थी। पडोसियो के लडके मुझसे खार खाते थे। काशीरिन कहकर पुकारा जाना मुझे पसद न था। इसे वे जान गये थे, अत मुझे देखते ही वे चिढाने के लिए बकने लगते

"वह देखो, मक्खीचूस काशीरिन का नाती आ गया।"

"मारो, मारो!"

और दगा शुरू हो जाता।

अपनी अवस्था के लिहाज से मै बडा ताकतवर और मुक्केबाजी मे भी तेज था। इस बात को मेरे दुश्मन भी स्वीकार करते थे। वे अकेले कभी मुझपर हमला नहीं करते थे, फलस्वरूप मै बुरी तरह पिटकर घर आता था—पूरा चेहरा लहूलुहान, कपडे फटे हुए और धूल मिट्टी से लथ-पथ।

नानी देखते ही घबराकर लगती थीं हाय-तोबा मचाने

"बदमाश कहीं का! फिर दगा कर आया? ठहर मै तुझे ठीक करती हू!"

मानो मेरा चेहरा धोकर नीलों पर तांबे का सिक्का, मलहम या कोई दवा बांध देती और कहती

"तुझे क्या हो जाता है रे? घर में इतना सीधा-सादा, पर गली में जाते ही शैतान सवार हो जाता है तेरे ऊपर। छि! आज दादा नाना को, तेरा बाहर निकलना ही बंद करवा दूंगी।"

नाना आते ही नील देखकर सारा मामला समझ जाते, पर इसके लिए वह दिल से कभी गुस्सा न होते। वह बडबडाकर कहते

"अच्छा! आज फिर तमगे ले आये? शाबाश, मेरे सूरमा! लेकिन आज से चेत जाओ—खबरदार, जो फिर सडक पर पर रखा! समझे?"

जब सडक शांत रहती, तो स्वयं मुझे ही बाहर जाने की इच्छा न होती। पर लडकों के खेलने हंसने की आवाज कान में पडते ही नाना की चेतावनी हवा हो जाती और मैं बाहर निकल जाता। मार खाने का मुझे कभी मलाल न होता, पर एक चीज थी, जो मुझसे बर्दाश्त न होती। वह थी लडकों की हृदयहीनता, जिसके विभिन्न रूपों से मैं खूब परिचित हो चुका था और जिन्हें देखकर मैं आपे से बाहर हो जाता था। वे मुर्गों और कुत्तों को लडा देते, बिल्लियों को बांधकर उन्हें यन्त्रणाएं देते, यहूदियों की बकरियां हांक देते और पियक्कड भिखमंगों या "इगोशा, तेरी झोली में मौत" नामक एक पागल की खिल्ली उडाते।

इगोशा दुबला पतला, लम्बा आदमी था। उसके चेहरे की हड्डी हड्डी दिखाई पडती थी, जिसपर सख्त बालों वाली दाढी उगी थी। वह सदा मला कुचला वेष बनाये रहता था। भेड की खाल का लम्बा कोट पहने वह सडक पर अजीब ढंग से डोलता हुआ चलता था। चलते वक्त उसकी नजर सदा जमीन पर होती थी। उसका भावशून्य चेहरा और छोटी छोटी उदास आंखें मेरे मन में भयपूर्ण आदर पैदा करतीं। मुझे लगता कि यह आदमी गम्भीर चिंतन में लीन है, कुछ खोज रहा है और इसलिए उसे छेडना नहीं चाहिए।

पर दूसरे लडके ढेले लेकर उसके पीछे दौड पडते और उसकी झुकी पीठ पर निशाने साधते। कुछ देर तो वह खामोश रहता, मानो ढेले लगे ही नहीं। इसके बाद वह हठात रुक जाता, मानो नींद से

चौंक उठा हो, गदन उठाकर चारो ओर देखता और कापते हाथो से अपनी रोमेंदार टोपी को सभालता।

लडके शोर मचाना शुरू करते

"इगोशा! तेरी झोली मे मौत! कहा चले, इगोशा! देख, तेरी झोली मे मौत बठी है!"

झोली थामकर इगोशा पत्थर या मिट्टी का ढेला उठा लेता और मुह से कुछ बडबडाते हुए अपने लम्बे, बेढगे हाथ को झुमाने लगता। उसके शब्द भण्डार मे कुल तीन गालिया थीं, उन्हे ही वह दुहराता, पर लडको का भण्डार अनत था। कभी लगडाता हुआ उनके पीछे दौडता, पर अपने लम्बे कोट मे फसकर घुटनो के बल गिर पडता। तब वह अपने मले कुचले हाथों से, जो दो सूखी लकडियो के समान थे, सहारा लेकर उठता। लडके ढेलो की बौछार कर देते। जो अधिक साहसी थे, वे उसके माथे पर धूल डालकर भाग जाते।

लेकिन सडक पर सबसे ददनाक नजारा उस वक्त उपस्थित होता, जब हमारा भूतपूव मिस्तरी ग्रिगोरी इवानोविच आता। उसकी आखें जाती रही थीं और अब वह भीख मागकर गुजर करता था। उसके लम्बे, शात व्यक्तित्व मे अब भी निराली शान थी। एक नाटी, बूढ़ी औरत उसका हाथ थामे शहर मे घुमाती रहती थी। हर घर के सामने खडी होकर और हमेशा किसी दूसरी तरफ देखते हुए बुढिया पतली आवाज मे पुकारती

"ईसा के नाम पर, एक अधे भिखारी की मदद करो, बाबा!"

ग्रिगोरी इवानोविच खुद कुछ न बोलता। उसके काले चश्मे की नजर दीवार या खिडकी पर या सामने खडे आदमी के ऊपर टिक जाती और वह रग से दगीले हाथ अपनी चौडी दाढ़ी पर फेरता जाता। मुह से वह एक शब्द भी न कहता। मैंने बहुत बार उसे देखा, पर सदा मौन, मानो होठ सी दिये गये हों। उसकी यह चुप्पी मेरे कलेजे को सबसे अधिक ठेस पहुचाती। मैं कभी उसके नजदीक न जाता—मेरी हिम्मत ही न होती, लेकिन उसे देखते ही मैं दौडकर नानी को खबर देता

"ग्रिगोरी आ रहा है।"

नानी व्ययापूण उत्तेजना के साथ और दीघ नि श्वास छोडते हुए कहती "ले, यह जाकर उसे दे आ।"

मै झल्लाकर रुखाई से इन्कार कर देता। वह खुद बाहर जाती और फाटक पर खडी होकर देर तक उससे बाते करती। वह हसकर दाढ़ी हिलाता जाता, पर बोलता शायद ही कभी।

कभी-कभी नानी उसे रसोईघर मे बुलाकर भोजन कराती थी। एक दिन उसने मेरे बारे मे पूछा। नानी ने मुझे पुकारा, पर मैं लकडियो के ढेर के पीछे छिप गया। उसके सामने जाने की मेरी हिम्मत ही नहीं होती थी। लगता था कि लाज से गडा जा रहा हू। मैं जानता था कि नानी को भी ऐसा ही लगता है। केवल एक बार हम लोगो के बीच ग्रिगोरी के बारे मे बाते हुईं। नानी उसे फाटक के बाहर पहुचाकर आगन मे से आ रही थी, उसकी आखो मे आसू थे और माथा शर्म से नत। मैंने पास जाकर उसका हाथ अपने हाथो मे ले लिया। वह शात स्वर मे बोली

"तू उसे देखते ही छिप क्यो जाता है? वह बडा नेक आदमी है और तुझे दिल से मानता है "

"नाना उसे क्यो नहीं खाना देते?" मैंने पूछा।

"नाना?"

उसने पास सटकर मुझसे कहा

"मेरी यह बात गाठ बाध ले! भगवान हम लोगो को एक दिन इसका बदला देगा "

उसकी बात भविष्यवाणी सिद्ध हुई। दस साल बाद, जब नानी जीवन लीला समाप्त कर परलोक सिधार चुकी थी, नाना कगाल और विक्षिप्त होकर एक टुकडा रोटी के लिए दर दर की भीख मागा करते और दरवाजो खिडकियो के नीचे खडे होकर पुकारते थे

"कोई एक टुकडा कचौडी दे दे बाबा, बस एक टुकडा! ऊह, क्या लोग हैं!"

यही दर्दनाक "ऊह, क्या लोग हैं!!" उनके पिछले दिनों की एकमात्र यादगार बाकी रही थी।

इगोशा और ग्रिगोरी इवानोविच के अलावा बदचलन बुढ़िया वोरोनोखा भी आया करती थी। उसपर नजर पडी कि मैं घर के अन्दर हवा। वह त्योहारो पर आती थी—लम्बी-तडगी, केश बिखरे हुए, शराब के नशे मे चूर। उसकी चाल भी अजीब थी। लगता

था कि उसके पाव जमीन को छूते ही नहीं, आधी की तरह उडती, सप्तम सुर मे अपने अश्लील गीत गाती वह आती थी। उसे देखते ही राह चलनेवाले भाग खडे होते, कोई दुकान मे घुस जाता और कोई मकानो के फाटक के पीछे या कोने मे छिप जाता। उसके आगमन पर सडक साफ हो जाती। उसका चेहरा नीला और गुब्बारे की तरह सूजा हुआ था। बडी भूरी आखें, जो बाहर निकली पडती थीं, डरावने ढग से नाचती थीं। कभी कभी वह जोर जोर से चीखते और रोते हुए कहती

"कहां हो तुम मेरे बच्चो?"

मैंने नानी से इसका मतलब पूछा। पहले तो वह बोली कि "यह सब तेरे जानने की चीज नहीं है," पर बाद मे सक्षेप मे उसने उसकी कहानी सुना ही दी उसका पति वोरोनोव सरकारी अफसर था। तरक्की पाने के लिए उसने जोरू को अपने हाकिम के हाथ बेच दिया, जो उसे लेकर दो साल के लिए दूसरी जगह चला गया। उसके दो बच्चे थे–एक बेटा, एक बेटी। जब वह लौटकर आयी, तो दोनो मर चुके थे और पति जुए मे सरकारी रुपया हार जाने के कारण जेल चला गया था। शोक मे उसने शराब पीना और दुराचारी जीवन बिताना शुरू कर दिया। अब पुलिस हर त्योहार की शाम को उसे सडक से हटा देती है

बाहर के मुक़ाबले घर मे ज्यादा अच्छा लगता था। दोपहर के भोजन के बाद का समय ख़ास तौर पर बहुत सुखद होता था। उस वक्त नाना याकोव मामा के यहा चले जाते थे और नानी खिडकी के दासे पर बठकर कहानियां कहती या पिताजी के सस्मरण सुनाती थी।

जिस मना को बिल्ले से छुडाया गया था, उसे नानी ने पाल लिया था। उसका टूटा हुआ पख कतर लिया था। नानी ने उसके टूटे पाव मे होशियारी से एक लकडी बाध दी थी। ऐसे उसे चगी करके नानी उसे बोलना सिखाने लगी थी। खिडकी की देहरी पर वह पिजडे के सामने बठ जाती और घटो मना को नये नये शब्द सिखाया करती

"बोल मना! 'पछी को थोडा खाना दो!'"

मैना मसखरों की तरह गोल गोल आखें मटकाती, अपने लकडी के पर से पिजडे की पेंदी पर ताल देती और गदन निकालकर नीलकण्ठ,

कोयल, बिल्ली या कुत्ते की बोली बोलती थी। पर आदमी की बोली सीखने मे उसे कठिनाई होती थी।

नानी गम्भीर होकर कहती "बहुत अटसट बक चुकी, अब बोल 'पछी को थोडा खाना दो।'"

नटखट चिडिया अगर कोई ऐसा वाक्य बोल देती, जो नानी की सिखायी बोली से थोडा भी मिलता-जुलता होता, तो नानी की खुशी का ठिकाना न रहता। वह हसकर अपने हाथ से उसे दलिया खिलाती और कहती

"शैतान कहीं की! बोलना चाहे, तो तू सब कुछ बोल सकती है।"

और सचमुच उसने उसे इन्सानो की तरह बोलना सिखा ही दिया। कुछ दिनो मे मना खाना मागने और नानी को देखकर "हलो" कहने लगी।

पहले तो मना का पिजरा नाना के कमरे मे टगा रहता था, पर कुछ दिनो बाद उन्होने उसे कोठे पर निर्वासित कर दिया। कारण यह हुआ कि वह नाना की नकल करने लगी थी। नाना अपनी प्रार्थना के प्रत्येक शब्द का स्पष्ट उच्चारण करते थे। मना पिजडे के बाहर अपनी पीली चोच निकालकर इन शब्दो को दोहराने लगती।

नाना को यह बहुत बुरा लगता। एक दिन प्रार्थना रोककर उन्होने पर पटकना शुरू किया और गुस्से से चिल्लाकर बोले

"निकालो शैतान की बच्ची को यहा से, नहीं तो इसकी गर्दन मरोड दूगा!"

सचमुच उस घर के हमारे जीवन मे दिलबहलाव और मनोरजन की कमी न थी, पर कभी कभी एक अज्ञात आकाक्षा घने बादल की तरह मेरे ऊपर छा जाती। ऐसा लगने लगता मानो कोई बडा बोझ सीने पर रख दिया गया हो और मैं डूबा जा रहा हू किसी अधकारपूर्ण अतल मे, जहा न कुछ दिखायी देता है, न सुनायी, भावना कुण्ठित हो गयी है और जिंदगी अधी तथा शरीर नि सत्व।

८

नाना ने एक दिन अचानक मधुगालावाले वे हाय मकान बेच दिया और एनालिया सडक पर दूसरा घर खरीद लिया। यह सडक कच्ची, पर स्वच्छ और शात थी। उसमे हरी घास उगी हुई थी।

वह खेतो मे जाकर विलीन होती थी। किनारे किनारे छोटे और खूबसूरत रगबिरगे मकानो की कतार थी।

नया मकान पुराने से अधिक खुशनुमा और बहारदार था। सामने का भाग गहरे लाल रग से रगा हुआ था। इस लाल पृष्ठभूमि मे नीचे की तीन खिडकियो की नीली झिलमिली और कोठे की जालीदार खिडकी खूब जचती थी। छत के बायें भाग मे एल्म और लाइम वृक्षो की घनी हरियाली की नक्काशीदार छाह फली हुई थी। आगन और बाग मे कई सघन कुज थे, जो मानो आख मिचौनी खेलने के लिए ही बनाये गये थे। बगीचा बडा रमणीक था। आकार मे वह बडा न था, पर भाति भाति के वक्षो और वनस्पतियो की घनी झाडियो के कारण खूब हरा भरा लगता था। एक कोने मे छोटा-सा, साफ-सुथरा गुसलखाना बना हुआ था, जो खिलौने जसा प्रतीत होता था। दूसरे कोने मे एक चौडा और छिछला गढ़ा था, जिसमे घास-पात उग आये थे। उसके अदर से पुराने गुसलखाने के जले हुए अवशेष अब भी झाक रहे थे। बगीचे के बायीं तरफ कनल ओव्स्यान्निकोव का अस्तबल था, दाहिनी ओर बेतलेग परिवार की इमारतें, पीछे की ओर मोटी, लाल मुहवाली पेत्रोव्ना ग्वालिन का घर था, जो हर बात पर हल्ला मचाया करती थी और देखने मे घटे की तरह गोल-मटोल थी। काई और घास से अच्छादित उसका जीण शीण छोटा-सा घर ऐसा लगता था जसे धरती मे धसकर, धरती के साथ एकाकार हो गया हो। उसमे दो खिडकियां थीं, जो पीछे मदान की ओर खुलती थीं। खुले मदान के बीच कई सूखे, गहरे नाले थे। उस पार जगल का सिलसिला आरम्भ हो जाता था। जगल की नीली धूमिल रेखाए दूर क्षितिज पर दृष्टिगोचर होती थीं। दिन भर इस मदान मे फौज के सिपाही कवायद किया करते थे। पतझड की धूप उनकी सगीनो से प्रतिबिम्बित होकर आंखो को चकाचौंध कर देती थी।

हमारा नया मकान अजनबी किरायेदारो से भरा हुआ था। सामने के हिस्से मे फौज का एक आदमी रहता था। वह तातार जाति का था। उसकी नाटी, गोल-मटोल बीवी दिन भर हसती और हो-हल्ला किया करती थी तथा सुदर, बहुत सजावटवाला गितार बजाती रहती थी। अपनी ऊची टनकदार आवाज मे अक्सर यह यह गीत गाती थी

जिससे घिनाम्रो, उससे भला प्यार निभाना?
म्रोय-होय! ना-ना-ना!
जो ग्रसल ठिकाने हो तो कर कोई बहाना
कोई गोरी छोटी कहीं से ग्रौर ले ग्राना!
मैं तो मनाऊ मिल जाये मक़सूद तुम्हारी
मक़सूद तुम्हारी महबूब तुम्हारी
मैं तो मनाऊ मिल जाये यह रूप की जोती
रूप की जोती,
हा बडे ग्रायका मोती
बिलकु उ उ उ उल ग्रनो-ो-ो-खा मोती।

गेंद की तरह गोल उसका सनिक पति खिडकी के क़रीब बठा नीले चेहरे को गुब्बारे की तरह फुलाये ग्रौर ग्रजीब-सी लाल ग्रांखो को मस्ती से नचाते हुए पाइप पिया करता था। पाइप के घुए से वह कुत्त की सी ग्रावाज मे जोर से खो-खो किया करता था।

भण्डारघर ग्रौर ग्रस्तबल के ऊपर बने गरम कमरो मे दो गाडी वान ग्रौर लम्बा, सजीदा चेहरेवाला एक तातार ग्रदली रहता था, जिसका नाम था वलेय। एक गाडीवान को लोग प्योत्र काका कहकर पुकारते थे। वह नाटा ग्रौर कुछ-कुछ सांवला बूढा ग्रादमी था। दूसरा उसका भतीजा था स्त्योपा, जो गूगा था। स्त्योपा बडा साफ-सुथरा रहता था। उसका चेहरा कासे की थाली जसा लगता था। ये तमाम लोग हमारे लिए ग्रजनबी थे, जिनके ग्रदर नवीन सभावनाए निहित थीं।

घर के पिछले हिस्से मे रसोईघर के बग़लवाले कमरे मे रहनेवाला किरायेदार इन सभी लोगो से ग्रधिक दिलचस्प था। उसे लोग 'बहुत ख़ूब' कहा करते थे। उसका कमरा लम्बा था। उसमे दो खिडकिया थीं, जिनमे से एक ग्रागन ग्रौर दूसरी बगीचे की ग्रोर खुलती थी।

वह छरहरे बदन का ग्रादमी था, उसकी पीठ झुकी हुई थी ग्रौर ग्रपनी काली दाढी वह बीच से सवारता था। उसका चेहरा पीला लगता था। वह चश्मा पहनता था। ग्रांखों से भलमनसाहत टपकती थी। साधारणत वह लोगो से बहुत कम बोलता था ग्रौर ज्यादातर ग्रपने

ही काम मे तल्लीन रहता था। चाय या खाना तयार होने की सूचना मिलने पर वह हमेशा जवाब देता था

"बहुत खूब!"

नानी पीठ पीछे, अक्सर मुह पर भी उसे 'बहुत खूब' कहा करती थी। वह कहती

"अलेक्सेई, जा 'बहुत खूब' से कह दे कि चाय तयार है।"

या भोजन के वक्त कहती

"थोडा और लो 'बहुत खूब'! आज खा नहीं रहे हो तुम।"

उसके कमरे मे लकडी के बक्सो और तरह-तरह की सामान्य किताबो का अम्बार लगा हुआ था। उस तरह की किताबें मैंने पहले नहीं देखी थीं। कमरे मे चारो ओर रग बिरगे द्रवो से भरी बोतले तथा तांबे, लोहे और जस्ते के टुकडे बिखरे पडे थे। चमडे की भूरी जकेट और हल्के सलेटी रग का चारखानेदार पतलून पहने, रग के दागो से सना हुआ दुर्गन्ध छोडता, व्यग्र और ढीला-ढाला यह व्यक्ति सवेरे से शाम तक अपनी रसायनशाला मे व्यस्त रहता—कभी जस्ता या ताबा गलाता और कभी किसी चीज को काटी पर तौलता। आप ही आप वह कुछ बोलता भी रहता। प्राय उसकी उगलिया जल जातीं और वह उन्हें फूकने लगता। कभी दीवार पर टगे नक्शो को देखता। चश्मे को पोछते हुए वह नक्शो के पास मुह सटा देता। उसकी खडिया जसी नाक प्राय नक्शे से छिप जाती। कभी वह कमरे के बीचोबीच या खिडकी की बगल मे खडा हो जाता—निश्चल, आखें बद किये, सिर उठाये, मूक और बुत बना।

मैं आगन के उस पारवाले ओसारे की छत पर चढ जाता और वहीं से खुली खिडकी से उसे देखा करता। मेज पर स्पिरिट का लम्प नीली रोशनी उगल रहा होता और वह उसपर झुका हुआ किसी रहस्यमय व्यापार मे तल्लीन रहता। कभी एक फटी सी कापी मे वह कुछ नोट करता और फिर काम मे लग जाता। उसके चश्मे का शीशा नीली आभा लिये हुए बर्फ के टुकडो की तरह चमकता था। इस आदमी के इस जादूभरे काम को मै कुतूहल मे गिरफ्तार, छत पर चढा, घटो उसकी खिडकी मे टक लगाये देखा करता।

कभी वह अपनी खिडकी मे आकर खडा हो जाता। उस वक्त वह चौखट मे जडी आदमकद तसवीर जसा लगता। पीछे हाथ बाधे, वहा खडा वह छत को निहारा करता। उसकी मुद्रा से यही ज्ञात होता था कि उसने मुझे देखा नहीं है। मुझे यह बडा अपमानजनक लगता। वह अचानक दौडकर मेज के करीब जाता और बहुत झुककर वहा कुछ खाजने लगता।

अगर वह धनी और रोब दाब वाला आदमी होता, तो सभवत मै उससे डरता, पर वह ग़रीब था। उसकी कमीज का मला और मुडा चिमुडा कालर चमडे की जैकेट से बाहर झाका करता, पतलून पैबद और दागो से भरा हुआ था, परो मे मोजा नदारद था और जूते घिस चुके थे। अत उससे डरने की कोई बात न थी। ग़रीब खतरनाक और डरावने नहीं हुआ करते, यह मैने पहले ही समझ लिया था और ऐसा समझने का खास कारण यह था कि नानी ऐसे लोगो को दया और नाना तिरस्कार की दृष्टि से देखा करते थे।

घर मे कोई आदमी न था, जो 'बहुत खूब' को चाहता हो। सभी उसपर हसते थे। फौजवाले की बीवी उसे खडिया नाकवाला कहा करती थी। प्योत्र काका उसे दवाफरोश और जादूगर कहते थे और नाना कीमियागर। उनकी राय थी कि वह भूत प्रेत सिद्ध करता है।

मैंने नानी से पूछा

"वह क्या काम करता है?"

उसने खीझकर जवाब दिया

"यह सब जानने से तुझे मतलब? हर चीज मे अपनी नाक मत घुसेडा कर!"

एक दिन मैंने साहस बटोरा और उसकी खिडकी के पास गया। और जसे-तसे अपनी घबराहट पर काबू पाते हुए पूछा

"आप क्या कर रहे हैं?"

वह चौंक पडा और चश्मे के भीतर से मुझे बडी देर तक देखता रहा। फिर अपनी काली, जली उगलिया को मेरी ओर करके बोला

"ऊपर आ जाओ "

उसने दरवाजे के बजाय खिडकी के रास्ते मुझे अन्दर बुलाया, इस चीज ने एकबारगी उसके प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ा दी। एक बक्स पर

बठकर उसने मुझे अपने सामने खडा किया और दायें बायें घुमाकर मुझे देखा और तब पूछा
"तुम कहा से आये हो?"
यह प्रश्न मुझे बडा अजीब लगा, क्योंकि हर रोज नाश्ते, खाने और चाय के वक्त मैं उसी की बगल मे बठा करता था। मैंने जवाब दिया
"मैं इस घर का नाती हू "
"ओ! ठीक," वह बोला और फिर मौन हो गया—अपनी उगलियो मे ध्यान केंद्रित किये हुए।
मैंने सोचा इसे और समझाकर बात कहनी चाहिए। बोला
"पर मैं काशीरिन नहीं हू, पेशकोव हू "
"पेशाकोव?" उसने गलत उच्चारण के साथ नाम को दुहराया और बोला, "बहुत ख ूब।"
इसके बाद मुझे एक ओर को हटाया, उठा और अपनी मेज की तरफ जाते हुए बोला
"तो, यहा चुपचाप बठे रहो "
मैं बडी देर तक बठा उसके प्रयोग देखता रहा। ताबे के टुकडे को चिमटी से थामकर उसने उसका बुरादा बनाना शुरू किया। जब काफी मात्रा मे बुरादा तयार हो गया, तो उसने उन सुनहले कणो को झाडकर एक जगह जमा किया और एक मोटे से प्याले मे डाल दिया। तब एक डिब्बे से नमक जसी सफेद कोई बुकनी निकाली और उसे बुरादो मे मिलाकर दोनो के ऊपर एक काला द्रव पदाथ छिडक दिया। प्याले से भाप निकलने जसी आवाज उठी और लगा फेन औ धुआ उठने। उसकी कडवी गध से मुझे खासी आने लगी। जादूगर ने गव के साथ पूछा
"क्यो अच्छी नहीं लग रही महक?"
"नहीं।"
"बिल्कुल ठीक! यह बहुत अच्छी बात है, भाईजान!"
लेकिन मुझे उसमे गव करने जसी कोई बात नहीं मालूम हुई। मैंने रुखाई से जवाब दिया
"महक यदि बुरी है, तो अच्छी तो न हुई।"

उसने आख मटकाते हुए कहा "सच? लेकिन हमेशा ऐसा नहीं होता, भाईजान! अच्छा यह बताओ, नकिलबोस* खेलते हो?"

"डिब्स* न?" मैंने पूछा।

"हा, डिब्स ही।"

"खेलता हू।"

"अच्छा, मैं तुम्हारे लिए हड्डी मे सीसा भर दू?"

"जरूर।"

"तो लाओ हड्डी।"

यह कहकर वह धुएवाला प्याला लिये मेरे पास आया और एक आख से मेरी ओर ताकते हुए बोला

"अगर मैं तुम्हारे लिए इसे भर दू, तो वादा करो कि फिर यहा नहीं आओगे।"

उसके इस प्रस्ताव से मुझे बडी चोट लगी। मैंने छूटते ही जवाब दिया

"मैं यो ही तुम्हारे यहा कभी नहीं आऊगा " यह कहकर मैं बगीचे मे निकल गया।

बगीचे मे नाना सेब के वृक्षो मे खाद डाल रहे थे। पतझड आरम्भ हो चुकी थी। पत्ते झडने भी लगे थे।

मुझे कची थमाकर नाना ने रसभरी की झाडिया छाटने को कहा। मैंने सवाल किया

"'बहुत खूब' क्या बना रहा है?"

उन्होने बिगडकर कहा

"वह कोठरी को चौपट किये दे रहा है। फर्श जल चुका है और दीवार के कागज पर भी जगह जगह दाग लग गये हैं, एक जगह कागज ही नोच डाला है उसने। अब तो हम उसे कमरा खाली कर देने को कहनेवाले हैं।"

रसभरी की झाडिया को छाटते हुए मैंने सहमति प्रकट की।

दरअसल मैंने जल्दबाजी से काम लिया था।

"नकिलबोन्स" अथवा "डिब्स" बच्चो का एक खेल है, जो भेड की हड्डिया से खेला जाता है।

बरसात की शामो मे यदि नाना बाहर चले जाते, तो नानी रसोईघर मे दावत किया करती थी। उसमे घर के सभी किरायेदारो को न्योता दिया जाता था। दोनो गाडीबान, अरदली तथा कभी कभी हमारी एक मनचली किरायेदारिन को भी बुलाया जाता था। मस्त तबीयतवाली पेत्रोव्ना भी अक्सर आती। इनके अलावा 'बहुत ख ूब' भी आता और आकर, अलावघर के सिरे पर मौन और निश्चल बठ जाता। गूगा स्त्योपा तातार वलेय के साथ ताश का रग जमाता। वलेय खेलते खेलते स्त्योपा की चपटी नाक पर चपत लगाकर कहता

"शतान कहीं का!"

प्योत्र काका अपने साथ बडी-सी सफेद डबलरोटी और रसभरी का मुरब्बा लेकर आते। रोटी के टुकडे करने के बाद उनपर मुरब्बे की मोटी तहें लगाते और तब एक एक टुकडा हथेली पर रखकर हर मेहमान की ओर बढाते हुए अदब से कहते

"लीजिये, खाइये!"

टुकडा उठाया जाने पर वह अपनी काली हथेली को गौर से देखते और यदि कहीं थोडा सा मुरब्बा लगा रह जाता, तो उसे जीभ से चाट जाते।

पेत्रोव्ना अपने साथ चेरी की शराब लाती और मनचली किरायेदारिन अखरोट और मिठाइयां। इस तरह पूरी दावत का इतजाम हो जाता। मेरी नानी के लिए दिल बहलाव का इससे अधिक रुचिकर साधन और न था।

ऐसी ही एक दावत इस घटना के थोडे ही दिन बाद हुई, जब 'बहुत ख ूब' ने मुझे इस बात के लिए घूस देनी चाही थी कि मै फिर कभी उसके कमरे मे न आऊ। बाहर झडी लगी हुई थी। हवा पेडो को झकझोर रही थी। उनकी डालिया घर की दीवार को खरोच रही थीं। गम रसोईघर और भी सुखद लग रहा था। सब लोग उस दिन खास तौर से शात और रग मे थे। आज नानी ने भी अपनी कहानियो का खजाना खोल दिया था।

अलावघर की सीढियो पर पर रखे वह उसके सिरे पर लोगो की ओर झुकी बठी थी और टीन का एक छोटा-सा चिराग सभी पर रोशनी डाल रहा था। रग मे आने पर वह अलावघर के ऊपर जा

बठती। उसका कहना था कि सुननेवाले नीचे और कहनेवाला ऊचाई पर रहे, तो बडी आसानी होती है।

मैं उसके परो के निकट चौडी पडी पर बठा था। 'बहुत खूब' का सिर ठीक मेरे नीचे था। नानी योद्धा इवान और साधु मिरोन की कहानी सुना रही थी। लय के साथ उसकी सुरीली आवाज़ प्रवाहित हो रही थी

जुग-जुगतर बीते, एक था गोरदिग्रोन,
महापातकी महा अधरमी एक था गोरदिग्रोन।
काजल काला उसका अतर, दिल था उसका पत्थर,
साच सवाई की गध न थी क्या धरम मे सूना,
दुबका पाप के बिल के अदर, जसे रहे छछूदर,
हर नेकी से रहा धिनाता पापी गोरदिग्रोन,
पर सबसे बद उसको लगता था तपसी मिरोन।
वह तपसी जो छिमा-प्यार का पूजक सच्चा नर था,
ईसा की सच्चाई पर जिसका तन-मन न्योछावर था।
सो, रनपति उस गोरदिग्रोन ने उस दिन हाक बुला भेजा
अपना रनबाकुरा सिपाही, जिसका नाम इवानुश्का।
"अभी चला जा ऐ इवान, बुड्ढे
मिरोन के बासे पर,
झटपट काटकर ला दे उस सतजुगी
अहकारी का सिर—
किसी बात से जरा न डर, एक
बार मे काटके सिर
पकी हुई दाढी से धर, लाके यहा
पर हाजिर कर!
मिले शिकारी कुत्तो को तो
महामहोच्छव का यह औसर!"
झट चल पडा इवान हुक्म का बदा,
हुक्म बजाने, करने पाप का धधा,
मन-मन रोता, मन ही मन पछताता,

"हे भगवान, न अपने मन से जाता—
यह पातक, यह ईस-बदा अपराध,
मेरे हाथो और किसी की साध!"
सहन तले उसने मन मार,
छिपा धरी बाकी तलवार
आया तपसीजी के पास,
झुककर बहुत किया अरदास
"सतजुगिया बाबा परनाम,
कुसल-छेम तो ठीक तमाम?
कृपा बनाये है जगदीस? बरसे
है दिन रन असीस?
बिहुसे अतरजामी बरबस
सतजुगिया मिरोनजी तापस!"
कहते भये बचन अति गूढ,
"सुन ले रे रनबका मूढ
सच मैं समझ न पाऊ काहे,
तू यो धोखा देना चाहे,
ईसा जो कि मसीह हमारा,
सो घट घट का जानन हारा
भगतबछल सो सबका नाथ,
नेकी-बदी उसी के हाथ
सो जाने तेरी बदनीयत,
इसमे शक न शुबह की इल्लत!"
सकते मे पड गया इवान!
लज्जा से गड गया इवान!
डरा कि गोरदिम्रोन का क्रोध,
कहीं हमीं से ले परिसोध
चमडम्यान मे से झटकार,
खच लई बाकी तलवार
बेझिझक झटके से माज,
बार-बार झटके से माज

रगड़ रगड़ कर बारबार,
चमकायी ज़हरीली धार
"मैंने तो सोचा था, बाबा,
सहन तले तलवार को दाबा,
तेरी आख न लख पायेगी,
दुखदर्शन से बच जायेगी
अनजानापन ही वर होगा,
तेरे लिए ही बेहतर होगा,
सो तूने जो ली ही देख,
तो फिर बुड्ढे घुटने टेक,
आदिसोत पर ध्यान लगा
करले अंतिम अरज दुआ,
माग दुआ जग की खातिर,
जग के सब जन की खातिर
माग दुआ मेरी खातिर,
माग दुआ अपनी खातिर!
फिर लेकर तेरी आसीस,
काटू तेरा जजर सीस!
सतजुगिया तपसी परबीन,"
घुटने टेक भये लौलीन
प्रभु से करने लगे अरदास,
नन्हे बलूत बिरवे के पास
हरी डाल का हरा चवर,
डुला किया सिर के ऊपर
सतजुगिया बाबा मुस्कायें,
मीठे-मीठे बैन सुनायें
"एक बात सुन ऐ इयान,
जुग-जुग होगी बाटजुहार
जगके सब जन की खातिर,
तेरी और अपनी खातिर

दुआ करू तो बेर लगे,
जुग-जुगातकी देर लगे
इससे भला कि टीम न टाम,
सिर काटा और काम तमाम
जल्द मामला रफा करे,
व्यथ न मालिक खफा करे
सिर लेकर हो नौ-दो ग्यारह,
हो जाये फिर तो पौ बारह"
आग बबूला हुआ इवान,
घुडका उनपर भौंहे तान
एडी लहर कपार चढा,
डींगभरा यह बचन कढा
"मुह से निकल पडी जो बानी,
उसमे सह्य न आनाकानी
दुआ करो मैं राह तकूगा,
जुग-जुग तक भी बठ सकूगा,"
तपसी ध्यान लगा बठे,
लौ की धूनी जगा बठे
घडी लगी दो घडी लगी,
अहर पहर की लडी लगी,
साझ पडी झुटपुटा हुआ,
तपसी तप मे जुटा हुआ,
रात हुई अधरात हुई,
पुन सुबह की बात हुई
ध्यान लगा सो लगा रहा,
पूजा मे मन पगा रहा,
बीते दिन, बीतीं रातें,
कितनी बीतीं बरसातें,
सरदी आयी, गयी बहार,
गरमी गयी औ' गयी फुहार,

• बरस गये, जुग बीत गये
कितने कालघट रीत गये
हिला न तपसी का आसन,
घुटने टिके रहे पाहन,
बढ बलूत आकास लगा,
पाकुहा से बन-बाग उगा
जगल बढ घनघोर हुए,
जीवजन्तु चहु ओर हुए
वुआ मगर बढती ही गयी,
ऊचे ऊचे चढती ही गयी,
इस तरह आज तक जगल मे
तपसी मिरोन तप करते हैं
अनयके दुआए करते है, अनवरत
जाप जप करते है,
जगती के सब उनकी खातिर
वह ईसदुहाई करते हैं,
हम अधम पापियो पर प्रभु
की सहाय-गुहराई करते है,
यह भीख मागते रहते हैं वह
क्वारी माता मरियम से
माता, जगके सब नर नारी
पर तेरी मुस्काहट बरसे!
उनके ही पास पडाव तान
रहता है रनवका इवान
इसकी बाकी तलवार म्यान
सड कर है माटी के समान
औंठिया कवच व जिरह-बख्तर
झरते रहते हैं बिखियाकर,
फेंटे, पेटी रनके बाने, कब के
सडे ख़ुदा जाने!

खुद भी गरमी से सडा सडा,
फिर भी पूरा बेसडे पडा,
कीडो ने लगभग निगल लिया,
फिर भी पूरा न ग्रहार किया,
भेडिये बराये रहते है, भालू
कतराये रहते हैं,
ग्रधड बच बच कर कहते है,
बरफान बचाये रहते हें,
पाले-बनौरिया लू भऊक,
सब उसे बराबर कहते हें,
हिलना-डुलना उसका मुहाल, है
लुज-पुज सा बुरा हाल है
उठने की कौन कहे,
कर तक उठा नहीं सकता सिर तक
ग्रौ' मै जानू यह मिली सजा
चू उसने बदी को कान दिया,
चू ग्रौर के चाहे चाह करी
चू धरम की ना परवाह करी,
ग्रब भी वह सतजुगिया तपसी
गुहराते खर सभी जन की,
दुग्राए बहती रहती हैं निरन्तर
कि तर जावे हमारे जसे पामर,
बही जातीं खुदा के पास ऊपर
नदी बहती कि जसे ता समुदर।

कहानी शुरू होते ही 'बहुत खूब' न जाने क्यो ग्रत्यन्त उत्तेजित हो गया। वह ग्रपने हाथों को ग्रजीब तरह से नचाने, चश्मा उतारने चढाने या गीत की ताल पर उह हिलाने लगा! उसकी गदन ऊपर नीचे हो रही थी तथा उगलिया बार-बार ग्राखो पर जा रही थीं। माथे ग्रौर गालो से पसीना जारी था, जिसे वह पोछ रहा था। ग्रगर कोई जरा भी हिलता-डुलता, खासता या फश पर पाव रगडता, तो वह "शी शी" कर उठता।

नानी का गीत खत्म होते ही वह हाथ झुलाता हुआ फुर्ती से उठा और अजीब ढग से कमरे में चक्कर काटता हुआ अपने आप बकने लगा

"लाजवाब चीज है! इसे तो कापी मे उतार लेना चाहिए। कितनी सच्ची कहानी है "

मैंने देखा, वह रो रहा था। आखो से आसुओ की अविरल धारा प्रवाहित हो रही थी। मुझे उसका व्यवहार विचित्र और ममबर्पी मालूम हुआ। रसोईघर मे चक्कर काटते हुए वह बार-बार अटपटे ढग से उछला। चश्मे को वह कानों पर चढ़ाने की कोशिश कर रहा था, पर हर बार नाकाम रहता था। प्योत्र काका हस पडे। दूसरे लोग तमाशा देख रहे थे—मौन, हैरान। नानी ने जल्दी से कहा

"कापी मे उतारना चाहते हो, तो उतार लो। कोई हर्ज नहीं। मैं तो ऐसी और भी बहुत कहानिया जानती हू "

उसने उत्तेजित स्वर में जवाब दिया

"और नहीं, मुझे तो बस यही चाहिए। इसमे रूसी मिट्टी की मादक गध है।"

फुदकते फुदकते वह रसोईघर के बीचोबीच रुक गया और दाहिने हाथ को झुलाते तथा कापते बायें हाथ मे चश्मा पकडे लगा भाषण देने। भाषण पुरजोर और लम्बा था। बीच-बीच मे पर पटककर और आवाज तेज कर वह अपनी बाता पर जोर देता जाता था। वह बार बार यही कहता था

"दूसरा के विवेक के सहारे नहीं जीना चाहिए।"

यकायक उसकी आवाज टूटी, वह चुप हो गया। उसकी दृष्टि लोगों के चेहरों पर गयी और शर्मिंदा होकर तथा सिर झुकाये वह चला गया वहां से। सभी मुस्कराते और झेंप अनुभव करते हुए एक दूसरे का मुह देखने लगे। किसी की समझ मे नहीं आ रहा था कि माजरा क्या है। नानी दीर्घ नि:श्वास छोडती हुई खिसककर अलावघर की छाया मे जा बैठी।

यव्रोग्ना ने अपने मोटे लाल होठा पर हाथ फेरते हुए पूछा

"लगता है कि किसी बात से जल भुन गया है।"

प्योत्र काका बोले

"ऐसी कोई बात नहीं है। यह तो ऐसे ही "

नानी अलावघर से नीचे उतरी और समोवार गर्माने लगी। प्योत्र काका ने शात स्वर मे कहा

"पढ़े लिखे लोगो का यही हाल होता है।"

वलेय ने राय जाहिर की

"शादी न करने से ही ऐसा होता है।"

सब लोग हस पडे। प्योत्र काका ने कहा

"आसू तक आ गये उसकी आखो मे! जसे कि पहले रास्ते पर फूल बिछाये जाते हो और आज केवल काटे रह गये थे।"

इसके बाद रसोईघर का वातावरण अनमना हो गया। मेरा मन गहरी उदासी से टीसने लगा। 'बहुत ख ूब' के व्यवहार ने मुझे चक्कर मे डाल दिया था। मुझे उसपर दया आ रही थी। उसकी गीली आखें भुलाये न भूलती थीं।

उस दिन वह रात भर कहीं बाहर रहा और अगले दिन दोपहर के भोजन के बाद लौटा, गुमसुम, परेशान और बुरी तरह झेंपता हुआ।

कसूर करने पर छोटे बच्चे जसे करते हैं, उसी तरह वह नानी से बोला

"कल मैंने नाटक कर दिया। तुम नाराज तो नहीं हो?"

"मैं क्यो नाराज होने लगी?"

"इसलिए कि मैं दावत मे भाषण देने लगा।"

"उससे किसी का कुछ बिगडा तो नहीं "

मुझे लगा कि नानी उससे डरती है। वह उससे नजर नहीं मिला पा रही थी और उसकी बोली मे असाधारण नरमी थी।

वह पास आकर बहुत ही सरलता से बोला

"मेरा अपना कोई नहीं है और अकेलेपन से मेरा दम घुटता है। ऐसे आदमी का यही हाल होता है। जब दिल का गुबार नहीं निकल पाता, तो प्राय बेमौके ही बाध टूट जाता है। ऐसे समय आदमी पेड और पत्थर को भी अपनी आत्मा की पुकार सुनाने को तयार हो जाता है "

नानी उससे दूर हटते हुए बोली

"तुम यह क्या कहाँ से लाए?"

उसके माथे पर बल पड़ गया। जोर से हाथ झुलाते हुए उसने कहा, "भाग" और बाहर निकल गया।

जब वह गायब हो गया, तो नानी ने नाक में एक चुटकी नास डाली और बिगड़कर मुझसे बोली

"तू उसके साथ मत रहा कर। वह न जाने कैसा आदमी है "

पर मैं फिर भी उसकी ओर खिंचे बिना न रह सका।

उसने जब यह कहा था कि "मेरा कोई नहीं है," उस समय उसके चेहरे का भाव मेरे मन में गड़ गया था। उसमें कुछ बात थी, जो मेरे हृदय को छू गयी और मैं उसके पीछे हो लिया।

मैंने उसके कमरे में झांककर देखा। कमरा खाली था। केवल दुनिया भर के अजीब और बेकार सामान उसमें भरे पड़े थे—कमरे के मालिक की ही तरह अजीब और बेकार। मैं बाग में गया। वहां वह कोनेवाले गड्ढे में एक अधजले शहतीर पर बैठा हुआ था—कोहनियां घुटनों पर टेके, हाथ गर्दन पर बांधे, झुका हुआ। शहतीर पर धूल जमी थी। उसका एक सिरा घास और कांटों के अन्दर से आकाश की ओर झांक रहा था। स्पष्टत यह आराम से बैठने की जगह न थी, पर इस बात ने मुझे उसकी ओर और भी आकर्षित किया।

कुछ देर तक तो वह घुग्घू की तरह मेरी ओर देखता रहा, मानो मैं हूं ही नहीं! फिर एकाएक चिढ़ी हुई आवाज में बोला

"मुझे बुलाने आये हो?"

"नहीं।"

"फिर क्या है?"

"कुछ भी नहीं।"

उसने अपना चश्मा उतारकर रूमाल से, जिसपर बहुत-से लाल और काले धब्बे लगे थे, पोंछना शुरू किया। फिर बोला

"अच्छा, आ जाओ यहां।"

मैं जाकर उसकी बगल में बैठ गया। उसने मुझे जोर से चिपटा लिया। बोला

"यहां बैठो। हम दोनों इसी तरह बैठे रहेंगे। बोलेंगे नहीं, समझ गये न? " फिर कहा "तुम धुन के पक्के हो?"

"हां।"

"बहुत खूब!"

हम दोनो बहुत देर तक मौन बैठे रहे। शाम का वक्त था और शाम भी अनोखी, जैसी गर्मियो के अन्त मे हुआ करती है—शात और सजीली। फूल पत्तो की मुस्कान विदाई लेने लगती है और वातावरण मे अजीब उदासी छा जाती है। धरती से ग्रीष्म की भीनी सुगध विदा हो जाती है। उसका स्थान ले लेती है अप्रिय सीलभरी गध। वातावरण विलक्षण रूप से पारदर्शी हो जाता है और गुलाबी आकाश मे डोमकौओ की क्रीडा देखकर मन मे न जाने क्यो उच्छ्वास का वेग उठने लगता है। हर चीज ऐसी गहन निस्तब्धता मे डूब जाती है कि पत्ते की सरसराहट या पछी के परो की फडफडाहट भी चौका देने को काफी होती है। दो क्षण के लिए आदमी की तल्लीनता भग हो जाती है, पर फिर वही अतल मौन। खामोशी सारी पृथ्वी को बाहों मे भर लेती है और आत्मा मे बस जाती है।

ऐसे क्षणो मे बडे ही पवित्र विचारो का उदय होता है, पर वे मृगतृष्णा की तरह स्वच्छ और सूक्ष्म होते हैं, शब्दो की पकड मे नहीं आते। टूटते नक्षत्र की तरह क्षण भर के लिए धरती और आकाश को आलोकित कर वे लुप्त हो जाते हैं और उन्हीं की तरह आत्मा का मौन-व्यथा से भर देते हैं अथवा अपनी प्यारभरी थपकियो से उसे आलोडित कर देते हैं। हृदय तरल होकर विशिष्ट आकार ग्रहण कर लेता है। ऐसे ही क्षणो मे चरित्र का निर्माण होता है।

अपने साथी की गरम देह से सटकर बैठा मैं आखो से सेब की डालियो की नक्काशी के उस पार का दृश्य पी रहा था। अरुण आकाश मे लालो का झुण्ड उड रहा था, चुडुक्को की एक टोली शलजम की क्यारियो मे बीज की तलाश मे सूखे पत्ते नोच रही थी। डरावनी शक्लो वाले सफेद बादलो की टेढ़ी मेढ़ी पात खेतो के उस पार तरती चली जा रही थी। नीचे कौओ की जमात काव काव करती कब्रिस्तान मे बसेरा लेने के लिए उडी जा रही थी। इस दृश्य मे रस था, सहज बोधगम्यता थी।

मेरा साथी बीच-बीच मे दीर्घ निश्वास छोडकर बोल उठता

"कितना सुदर, कितना अच्छा है! मेरे भाई, तुम्हे ठण्ड तो नहीं लग रही है? काफी सर्दी है।"

धीरे धीरे अधकार छा गया और आकाश और धरती उसमे डूब गये। उसने कहा

"बस, काफी है! आओ चले "

बाग के फाटक पर पहुचकर वह रुक गया और बोला

"तुम्हारी नानी बहुत अच्छी है। सचमुच इस दुनिया मे एक से एक विलक्षण व्यक्ति भरे पडे हैं।"

इसके बाद आख बद कर वह मुस्कराया और स्पष्ट, मधुर शब्दों मे नानी के रात के गीत की कडिया दुहराने लगा

औ मैं जानू यह मिली सजा
चू उसने बदी को कान दिया
चू और के चाहे चाह करी
चू धरम की ना परवाह करी

मुझे आगे ठेलते हुए उसने कहा

"इस गीत को याद रखना अच्छा, तुम्हे लिखना आता है?"

"नहीं।"

"तो सीख डालो लिखना। और सीखकर नानी के सभी गीत लिखा लेना। यह बहुत जरूरी है।"

इसके बाद से हम दोनो मे गाढी दोस्ती हो गयी। अब जब इच्छा होती, मै 'बहुत खूब' के कमरे मे पहुच जाता। चिथडो से भरे एक बक्स पर बठकर मैं चुपचाप उसके प्रयोगो को देखा करता। वह जस्ते का एक टुकडा लेकर गलाता या ताबा गरम करता। जब लाल हो जाता, तो छोटी-सी निहाई पर रखकर खिलौने जसी एक हथौडी से उसे पीटकर पत्तर बनाता, बालू के कागज, तरह-तरह की रेतिया और आरियो से काम करता। एक आरी तो बाल की तरह महीन थी। हर चीज को वह ताबे की बारीक काटी पर तोलता जाता। चानी मिट्टी के मोटे-मोटे प्यालो मे वह विभिन्न तरल पदार्थों को मिलाता। उनके धुए से कमरे मे तेज दुर्गंध फल जाती। बीच-बीच मे यह एक मोटी सी किताब से कुछ देखता जाता। उस समय उसके माथे पर बल पड जाता, वह आप ही आप कुछ बोलना, लाल होठो को चबाता या खरखरी आवाज मे यह गुनगुनाता—"ओ, सारोन का गुलाब "

ऐसे मौको पर मैं चुप्पी भगकर पूछ बैठता

"क्या बना रहे हो?"

"अरे, एक चीज, मेरे भाई " वह जवाब देता।

"क्या चीज?"

"अब तुम्हें कैसे बताऊ क्या चीज "

"नाना कहते हैं कि तुम शायद जाली सिक्के बनाते हो "

"नाना ऐसा कहते हैं? छि। यह सब मूखता की बातें हैं। रुपया भी, भाई जान, कोई चीज है—तुच्छ!"

"रुपये के बिना क्या तुम रोटी खरीद सकते हो?"

"यह तो तुमने ठीक कहा। बिना रुपये के रोटी नहीं खरीदी जा सकती "

"यही तो बात है। अच्छा, क्या रुपये के बिना गोश्त खरीदा जा सकता है?"

"नहीं, गोश्त भी नहीं "

वह हसने लगा। उसकी वह शात हसी मुझे बहुत अच्छी लगती थी। हसते हुए वह कान के पीछे ऐसे गुदगुदाने लगा, जसे पिल्ले को गुदगुदाते हैं। बोला

"तुमसे, भाईजान, जीतना कठिन है। तुम हमेशा मुझे निरुत्तर कर देते हो। इसलिए अब बातचीत खत्म "

कभी कभी काम रोककर वह मेरे साथ खिडकी के दासे पर आ बठता। वहा हम सेब के पत्तो का झडना या छत और आगन मे, जहा घास पात उग आया था, पानी का बरसना देखा करते। 'बहुत खूब' बहुत कम बोलता, पर जो बात करता, जचते शब्दो मे। ज्यादातर वह इशारो से ही काम चलाता। किसी चीज की ओर मेरा ध्यान आकर्षित करना होता, तो धीरे से कोहनी मारता और तिरछी आख से उधर इशारा करता।

हमारे आगन मे देखने लायक कुछ विशेष न था। पर उन इशारो और यदा-कदा के दो सक्षिप्त शब्दो ने हर चीज मे विलक्षणता उत्पन्न कर दी। वे सदा के लिए मेरी याद मे टक गये। एक दिन एक बिल्ली आगन मे दौडी जा रही थी। राह मे एक जगह पानी जमा था। बिल्ली रुककर उसमे अपनी परछाईं देखने लगी और उसने दूसरी बिल्ली को मारने के लिए पजा उठाया। 'बहुत खूब' ने इसपर टीका की

"जानते हो, तितलियां बडी गर्वीली और शकालु होती हैं"

एक दिन मामाई नामक लाल-सुनहरा मुर्गा उडकर बाग की बाड पर चढ गया, जमकर बैठ गया, पंख फडफडाये, तो गिरते गिरते बचा और झल्लाकर गर्दन बढाते हुए कुड-कुड करने लगा। 'बहुत खूब' ने टीका की

"अकड जनरल की, मगर अक्ल नदारद।"

अर्दली थकेमांदे बूढे घोडे की तरह भद्दे ढंग से आंगन का कीचड पार कर रहा था। गालों की उभरी हड्डियों वाला अपना चेहरा फुलाये उसने आंखें सिकोडकर आकाश की ओर देखा। पतझड की धूप का एक पतली रेखा उसके सीने पर पडी, जिससे उसकी वर्दी का पीतल का बटन चमक उठा। उसने मुडी हुई उंगलियों से बटन को टटोला। इधर 'बहुत खूब' ने टीका की

"ऐसे देख रहा है मानो तमगा हो!"

जल्द ही मुझे पता चला कि 'बहुत खूब' के प्रति मेरा स्नेह अत्यंत प्रगाढ हो चुका है। वह हमारे सुख-दुख का अभिन्न साथी बन गया था। वह स्वयं चुप रहना पसंद करता था, पर मेरे भीतर जो होता, उसे कह डालने से उसने मुझे कभी नहीं रोका। इसके विपरीत, नाना हमेशा मुझे टोक दिया करते थे। वह बीच ही में बोल उठते

"तू बडा बकवादी है, बंद कर बकबक।"

नानी अपने ही विचारों में इतनी डूबी रहती कि दूसरों के विचार सुनने समझने की क्षमता न थी।

लेकिन 'बहुत खूब' सदा बडे ध्यान से मेरी बातें सुनता और प्रायः मुस्कराकर कहता

"मगर भैया, यह तो तुम मन से गढकर कह रहे हो"

उसकी टीका संक्षिप्त, सारगर्भित और सामयिक होती। ऐसा लगता मानो वह अंतर्यामी है और मुंह से बात निकलने के पहले ही ताड जाता है कि मैं असत्य और अनावश्यक चर्चा कर रहा हूं। ऐसी अवस्था में उसके मुंह से दो संक्षिप्त शब्द निकलते, तलवार की धार की तरह और उस अनावश्यक चर्चा की गर्दन धड से जुदा हो जाती

"तुम झूठ बोल रहे हो, भैया!"

यह मुझे जादू जसा लगता था। प्राय मैं जानबूझकर उसकी इस विलक्षण शक्ति का इम्तहान लेता था। मै गढ़कर कोई बात कहना शुरू कर देता और ऐसे सुनाता, मानो यह बिल्कुल सच हो। लेकिन कुछ ही क्षण सुनने के बाद वह सिर हिलाकर कह उठता

"तुम झूठ बोल रहे हो, भया!"

"तुम कसे जानते हो?" मैं पूछता।

"मुझे ख़ूब मालूम है "

नानी जब सेनाया चौक के नल पर पानी लाने जाती, तो अवसर मुझे भी साथ ले लेती थी। एक दिन हम लोगो ने देखा कि पाच शहरी आदमी एक देहाती को पीट रहे हैं। बेचारे को जमीन पर पटक्कर वे कुत्तो की तरह उसे नोच रहे थे। नानी ने झट बहगी से बालटी उतारी और उसी के डण्डे को घुमाती हुई दौडी। उसने चिल्लाकर मुझसे भाग जाने को कहा।

पर मैं डर गया और उसके पीछे दौडने लगा। शत्रु पर मैं भी ढेले बरसाने लगा और नानी ने बहगी के डण्डे से उनकी मरम्मत शुरू की। दूसरे लोग भी आ गये और शहरवाले भाग खडे हुए। बेचारे देहाती का मुह बुरी तरह कुचल गया था। नानी उसके मुह पर पानी डालने लगी। वह अपनी मली उगलिया से कटा हुआ नथुना पकडे जोर-जोर से खास और रो रहा था। उसके घावो से ख़ून का फौवारा छूट रहा था, जो उगलियो के बीच होकर नानी के चेहरे और छाती को लाल कर रहा था। उस दृश्य की याद से मैं आज भी काप उठता हू। नानी भी रो रही थी। उसकी पूरी देह सिहर रही थी।

घर लौटकर मै अपने किरायेदार दोस्त के पास दौडा और उसे वह किस्सा सुनाने लगा। वह काम छोडकर मेरी बात सुनने लगा। लम्बी रेती हाथ मे नगी तलवार की तरह तनी हुई थी। चश्मे के अन्दर से वह मेरी ओर एकटक देख रहा था। फिर टोक्कर असाधारण स्वर मे बोला

"शाबाश, बिल्कुल सच कह रहे हो तुम! बहुत ख़ूब!"

मेरी आखो के सामने वह दृश्य अब भी नाच रहा था, इसलिए उसके टोकने का खयाल किये बिना मै बोलता गया। पर वह मेरे कधे पर अपना हाथ रखकर चहलक़दमी करने लगा।

"बस अब काफी हो गया। तुम्हारी बात खत्म हो चुकी, समझे न?"

मैं चुप हो गया। पहले तो मुझे उसका इस तरह टोकना कुछ अखरा, पर जरा सोचने के बाद मैंने महसूस किया कि उसने कहानी पूरी हो जाने के ठीक बाद मे टोका था। मैं आश्चर्यचकित रह गया।

"ऐसी बातो पर बहुत ज्यादा न सोचा करो। उन्हे भुला ही देना उचित है," उसने कहा।

उसके मुह से अचानक ऐसी उक्तिया निकल जातीं, जो मुझे जन्म भर न भूलेगी। एक बार मैं उसे अपने शत्रु क्लूश्निकोव के बारे मे बता रहा था। क्लूश्निकोव नोवाया सडक के छोकरो की उस टोली मे शामिल था, जिससे मेरी प्राय मुठभेड हुआ करती थी। वह खूब मोटा-ताजा था और उसका सिर भी खूब बडा था। न वह मुझसे पार पाता, न मैं उससे। मेरी समझ ही मे न आता कि उसे किस तरह पछाडू। अपनी यही समस्या मैं बयान कर रहा था। 'बहुत खूब' सुनता रहा और सुनकर बोला

"जिस ताकत की तुम बात कर रहे हो, वह बेमानी है। असली ताकत है फुर्ती। फुर्ती से काम लेनेवाला ही दरअसल ताकतवर होता है—समझे न?"

अगले रविवार को मैंने खूब फुर्ती से मुक्का चलाना शुरू किया। क्लूश्निकोव बात की बात मे चित हो गया। उस दिन से 'बहुत खूब' की बातो का वजन मेरे लिए बहुत बढ गया। एक बार उसने कहा

"असली काम यह है कि आदमी चीजो की पकड सीखे। और यह काम बडा ही मुश्किल होता है।"

मैं उसकी बात का अर्थ नहीं समझा। लेकिन इस तरह की उसकी सभी बातें मेरे मस्तिष्क मे गड गयीं। इसका कारण यही था कि वे पहेली की तरह थीं, सहज और रहस्यमय। वे मस्तिष्क को जकड लेती थीं। पकडने ही की बात ले लीजिये ढेला, रोटी का टुकडा, प्याली या हथौडी को पकडने मे सीखना ही क्या होता है? फिर भी चीजो की पकड मुश्किल है—है न?

'बहुत खूब' दिनोदिन हमारे घर मे सभी की आख का काटा बनता जा रहा था। यहा तक कि मनचली किरायेदारिन की बिल्ली

भी, जो सभी से हिली मिली रहती थी, दूसरो की तरह उसकी गोद मे नहीं जाती थी। वह पुचकारता, तो भी बिल्ली उसके नजदीक नहीं आती थी। इसके लिए मैं कान ऐंठकर उसकी खबर लेता और लगभग रुआसा होकर उसे यह समझाने की कोशिश करता कि इस आदमी से डरने की जरूरत नहीं है।

उसका कहना था कि मेरे कपडो से तेजाब की गध उडती है, इसीलिए बिल्ली मेरे नजदीक नहीं आती। लेकिन दूसरे लोगो और मेरी नानी का कुछ और ही कहना था, जो मै जानता था। वे लोग उससे डर रखते थे और यह मुझे अन्यायपूर्ण और दुखद लगता।

नानी बिगडकर कहती

"तू क्यो हमेशा उसकी दुम बना रहता है? वह तुझे भी अपनी ऊट पटाग विद्या सिखा देगा "

मेरा कमीना, लालमुहा नाना मुझे उसके कमरे मे जाने के कारण बेरहमी से पीटा करता था। स्वभावत 'बहुत खूब' को मैंने नहीं बताया कि उसके पास जाने की मुझे मनाही है, पर लोग उसके बारे मे क्या कहते हैं, यह मैं उसे बता देता था। मैने कहा

"नानी तुमसे डरती है। वह कहती हैं कि तुम जादू करते हो। नाना का भी यही खयाल है। वह कहते हैं कि तुम ईश्वर को नहीं मानते और लोगो के लिए खतरनाक हो "

उसने अपना सिर ऐसे हिलाया, मानो मक्खी उडा रहा हो। उसके पीले चेहरे पर मुस्कान खेल गयी, जिसे देखकर मेरे हृदय मे असह्य व्यथा हुई। वह शात स्वर मे बोला

"ये बाते मुझसे छिपी नहीं है लेकिन बहुत कष्टदायक हैं न?"

"हा," मैंने कहा।

"सचमुच बहुत कष्टदायक हैं, भया "

आखिर उन लोगो ने उसे भगाकर ही दम लिया।

एक दिन नाश्ते के बाद मैंने देखा कि वह कमरे के फर्श पर बठा अपना सामान बाधता हुआ "ओ, सारोन का गुलाब" गीत गुनगुना रहा है। मुझे देखकर वह बोला

"मै तो चला, भया!"

"क्यो?"

जवाब देने से पहले वह एक क्षण ध्यानपूर्वक मेरी ओर देखता रहा। फिर बोला

"तुमको नहीं मालूम ? यह कमरा तुम्हारी मा के लिए चाहिए "

"यह किसने कहा ?"

"तुम्हारे नाना ने "

"वह झूठ बोलते हैं।"

'बहुत खूब' ने मुझे अपने पास खींच लिया और जब मैं उसकी बगल में फर्श पर बैठ गया, तो शात स्वर मे बोला

"नाराज मत होना! मैंने समझा था कि तुम्हे मालूम है, पर बताना नहीं चाहते हो। और यह मुझे अच्छा नहीं लगा, भया "

मुझे ठेस-सी लगी और तक्लीफ हुई।

उसने मुस्कराकर अस्फुट स्वर मे कहा

"एक बात सुनोगे। मैंने तुमसे कहा था न कि मेरे पास मत आया करो ?"

मैंने हामी भरी।

"उस वक्त यह बात तुम्हे बहुत बुरी लगी थी न?"

"हा "

"उस वक्त भी मुझे तुम्हारा आना नापसद नहीं था। मै जानता था कि मेरे पास आओगे, तो तुम्हे डाट पडेगी। ऐसा ही हुआ न? समझ गये न कि मैंने ऐसा क्यो कहा था?"

वह इस तरह बोल रहा था, मानो मेरा हमउम्र हो। उसके शब्दो से मुझे बडी सात्वना मिल रही थी। ऐसा लग रहा था कि जो बात वह कह रहा है, वह बहुत दिनो से मेरे अतस्तल मे सजोकर रखी हुई थी।

"यह मैं बहुत दिनो से जानता हू," मैंने कहा।

"ठीक। तो भया, तुम तो जानते ही हो " यह कहकर उसने गला साफ किया।

मेरा हृदय असह्य पीडा से टीस रहा था। मैंने पूछा

"सभी लोग तुमसे चिढने क्यो हैं?"

उसने मुझे कसकर अपने साथ चिमटा लिया और आख मारकर बोला

"क्योकि मैं उन लोगो जसा नहीं हू। समझे न? यही असल बात है। मैं उनसे भिन्न हू "

मेरी समझ मे न आया कि क्या कहू। सिफ उसके कोट की आस्तीन खींचता रहा। उसने कहा

"दिल मे किसी तरह का गुस्सा मत रखना," उसने दोहराया और फिर कान मे कहा, "और रोना भी नहीं "

पर खुद उसके धुधलाये चश्मे के नीचे से आसू टपकने लगे।

हम दोनो, पहले की तरह, बहुत देर तक चुप बठे रहे। केवल बीच-बीच मे एकाध शब्द बोल लेते थे। बस, एकाध शब्द।

उसी दिन शाम को सब से प्रेमपूवक विदा लेकर और मुझे एक बार जोरो से कलेजे लगाकर वह चला गया। मैं चुपके से फाटक के बाहर आ गया। सामानो से लदी उसकी गाडी सडक की कफ जमी लीक पर धचके के साथ चल रही थी और वह ऊपर बठा हिल रहा था। उसकी पीठ फिरते ही नानी गदे कमरे की सफाई करने लगी। मै जानते-बूझते हुए इधर से उधर दौडकर उसके काम मे बाधा डालने लगा।

बार-बार मुझसे टकराने के बाद वह जोर से बोली

"भाग यहा से!"

"तुमने उसे क्यो निकाल दिया?"

"तुझे इन बातो से मतलब?" वह बोली।

"तुम सभी लोग मूख हो," मैने कहा।

नानी एक भीगा चिथडा लेकर मुझे मारने लगी। चिल्लाकर बोली

"तुझे आज क्या हो गया है रे? तेरा माथा फिर गया है!"

"तुम नहीं, बाकी सभी मूख हैं!" मैंने सशोधन किया। पर इससे भी वह शात नहीं हुई।

रात के भोजन के समय नाना बोले

"धयवाद दो प्रभु को। आखिर यह निकला यहा से। मै तो उसे देखता था, तो मेरे कलेजे पर आरा चलने लगता था। भगाकर ही दम लिया बच्चू को।"

गुस्से के मारे मैंने एक चम्मच तोड डाला। उसके लिए बाद मे मेरी अच्छी मरम्मत हुई।

इस प्रकार उन अगणित लोगो मे से पहले व्यक्ति से मेरी मित्रता का अन्त हुआ, जो देश के सवश्रेष्ठ सपूत होते हुए भी अपने ही वतन मे अजनबी-से हैं

६

मै अपनी उपमा मधुमक्खी के छत्ते से दे सकता हू, जिसमे देश के अगणित साधारण प्राणियो ने अपने ज्ञान और दशन का मधु लाकर सचित किया है। सबो की बहुमूल्य देन से मेरे चरित्र का विकास हुआ। अवसर देनेवालो ने गन्दा और कडवा मधु दिया, फिर भी था तो वह ज्ञान–मधु ही।

'बहुत खूब' के चले जाने के बाद प्योत्र काका के साथ मेरा मित्रता हो गयी। वह नाना की तरह दुबले और साफ-सुथरे, लेकिन कद-काठी मे उनसे कहीं छोटे थे। उन्हे देखकर मुझे ऐसा लगता था मानो किसी बालक ने खेल मे बूढ़े के कपडे पहन लिये हैं। उनका चेहरा तात की बारीक बुनावटवाली टोकरी जसा लगता था, जिसके अन्दर से कुछ कुछ पीली झलक लिये दो हसती आखें यो झाका करती थीं जसे पिजडे म बन्द दो पछी। उनके धूमिल बाल घुघराले थे, दाढ़ी भी। वह पाइप पीते थे, जिसमे से बालो की तरह धूमिल और घूघर दार धुआ उठता था। वह लच्छेदार और मुहावरेदार भाषा मे बोलते थे। वह बात तो करते सुरीली टनटनाती और प्यारी आवाज म, पर मुझे सदा ऐसा लगता था कि वह लोगो की हसी उडा रहे हैं। वह अपनी कहानी या कहते थे

"मैं जिस जमींदारनी के यहा दास था, उसका नाम था तात्यान अलेक्सेयेव्ना। वह मुझसे बोली 'तुमको लोहार का काम करना होगा,' मैंने लोहार का काम सीख लिया, पर फौरन ही कहा गया, 'देखो, माली के लिए सहायक की जरूरत है।' मुझे भला क्या एतराज हो सकता था? कहावत है जिसकी बन्दरी वही नचावे। पर यह काम मुझसे निभा नहीं। तब मालकिन का हुक्म हुआ 'प्योत्र, मछली पकडना सीख।' जो हुजूर का हुक्म। बसी लेकर नदी पर डेरा डाल दिया मैंने। कुछ दिनो मे मछलियो के धधे मे मजा भी आने

लगा। लेकिन बेगम ने कोचवानी का काम सम्भालने के लिए मुझे शहर भेज दिया। चलो यह भी ठीक। कोचवानी ही सही, जो मर्जी सरकार की। सरकार की मर्जी फिर बदलने ही वाली थी कि भूदासो की मुक्ति का कानून पास हो गया। मैं रह गया शहर मे घोडे के साथ और आज तक बेगम की मर्जी पालने के बदले घोडे को पाल रहा हूं।"

घोडा बूढा और उजले रग का था। उसे देखकर ऐसा मालूम होता था कि नशे मे किसी रगसाज ने चितकबरा ब्रुश छिडक दिया हो। अजर-पजर देह और बाकुडी टागें—खूब बनावट थी उस घोडे की। सिर की जगह हड्डी का बडा-सा टोकरा था, जिसमे से दो झिल्लीदार आखें झाक रही थीं। गदन की जगह चमडे और नसा का लम्बा थला था, जिसके परले छोर पर सिर इस तरह लटका हुआ था, मानो उदासी के भार से अब गिरा तब गिरा। प्योत्र काका घोडे को बहुत मानते थे। उन्होंने उसका नाम रखा था 'ताका' और कभी उसपर हाथ नहीं उठाते थे। मेरे नाना ने एक बार उनसे पूछा

"घोडे को आदमियो का नाम क्यो दे रखा है तुमने?"

उसने जवाब दिया, "आप सरासर भूलकर रहे है, वासीली वासील्येविच! 'ताका' तो किसी आदमी का नाम नहीं होता—वह तो 'तात्याना' होता है!"

प्योत्र काका भी पढ़ना लिखना जानते थे और धार्मिक पुस्तको का उन्हें अच्छा ज्ञान था। नाना और उनके बीच अक्सर इस बात पर बहस हुआ करती थी कि कौन सन्त सबसे सिद्ध है। बाइबिल मे जिन पापिया का प्रसग है, उन्हे दोनो जी भरकर कोसा करते थे, खास कर एब्सलोम को। कभी-कभी वे व्याकरण को लेकर उलझ पडते थे। नाना कहते थे 'दुष्टपन', 'अराजकपन', 'मूर्तिपूजकपन' आदि और प्योत्र काका का कहना था कि इन शब्दो का शुद्ध रूप होना चाहिए, 'दुष्टताई', 'अराजकताई', 'मूर्तिपूजकताई'।

नाना तमतमाकर कहते, "इसमे क्या है—अपना अपना तरीका है। तुम्हारा 'ताई' मेरे लिए 'पन' है।"

लेकिन प्योत्र काका पर कोई असर न पडता—बठे धुए के गोले उडाते रहते। अन्त मे वह एक रद्दा रखते

"और आपका 'पन' ही कौन बडा खूबसूरत है? भगवान की नजर मे उसका मोल दो कौडी भी नहीं। वह जब आपकी प्राथना

होगा, तो मन ही मन कहता होगा प्रार्थना है तो, भाई, काफी लम्बी, पर दो कौड़ी की।"

नाना अपनी हरी आंखों को गुस्से से चमकाते हुए मेरी ओर मुड़कर चिल्लाते

"अलेक्सेई, तू यहां क्या कर रहा है? भाग यहां से!"

प्योत्र को सफाई बहुत पसन्द थी—अस्तव्यस्तता से सख्त नफरत। आंगन में वह चलते तो राह में पड़े लकड़ी के टुकड़ों, हड्डियों और ढेलों को ठेलकर किनारे कर देते और बिगड़कर कहते

"दुनिया भर की बेकार चीजों का यहीं ढेर लगा रखा है।"

वह बहुत बातूनी थे। यों वह सहृदय और खुशमिजाज लगते थे। लेकिन कभी-कभी उनकी आंखों के ऊपर एक झिल्ली-सी छा जाती थी और वह मुर्दे की तरह घूरने लगते थे। उस वक्त वह अंधेरे कोने में अपने गूंगे भतीजे की तरह मूक बैठ जाते और ज़रा भी छेड़ने से भुनक उठते। मैं पूछता

"क्या बात है, प्योत्र काका? यहां क्यों बैठे हो?"

वह रूखी आवाज़ में जवाब देते

"जाओ बाबा, अपना काम देखो।"

हमारे पड़ोस में एक रईस आकर बसा। वह अजीब आदमी था। उसके माथे पर एक बड़ा सा गुमटा था। पर्वों-त्योहारों के दिन वह छर्रेवाली बन्दूक लेकर खिड़की के क़रीब बैठ जाता और कुत्ता, बिल्ली, मुर्गा, कौआ या अच्छा न लगनेवाला कोई आदमी, जो भी सामने आ जाता, उसी पर बन्दूक चला देता। एक दिन उसने 'बहुत खूब' को भी इसी तरह अपना निशाना बनाया। छर्रे उसकी चमड़े की जैकेट से टकराकर नीचे गिर पड़े। कुछ जेब में चले गये। मुझे याद है कि उन छर्रों को हथेली पर रखकर वह उलट-पुलटकर गौर से उनका निरीक्षण करता रहा था। नाना ने कहा था कि पुलिस में रिपोर्ट कर दो। पर उसने छर्रों को रसोईघर के कोने में फेंकते हुए जवाब दिया था

"इसकी ज़रूरत नहीं है।"

एक बार उस निशानेबाज़ ने नाना की टांग को अपनी बन्दूक का निशाना बनाया। कुछ छर्रे उनकी पिण्डलियों में घुस गये। नाना गुस्से से आग-बबूला हो गये। उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट कर दी और गवाह

जुटाने लगे। इसके बाद एक ही दिन मे वह आदमी कहीं लापता हो गया।

उसकी बदूक छूटते ही प्योत्र काका रविवारवाली चौडे छज्जे की अपनी कन्रग टोपी पहनकर जल्दी से फाटक के बाहर निकल आते। गली की पटरी पर आकर वह अपने दोनो हाथ पीछे की ओर कोट के नीचे छिपा लेते, जिससे कोट मुर्गे की दुम की तरह ऊपर उठ जाता। फिर सीना तानकर निशानेबाज की खिडकी के नीचे से निकलते। एक बार गुजर जाते और कुछ न होता, तो फिर उसी तरह सीना ताने हुए लौटते। इस प्रकार कई बार वह निशानेबाज की खिडकी के सामने से आते जाते। हमारे मकान मे रहनेवाले सभी लोग तमाशा देखने के लिए बाहर जमा हो जाते। फौजवाला और उसकी स्वणकेशी बीवी अपने कमरे की खिडकी से सिर निकालकर झाकना शुरु कर देते। बेतलेग परिवार के मकान के भी लोग बाहर आ जाते। केवल कर्नल ओव्स्यानिकोव के यहा ऐसे मौके पर भी चहल पहल का कोई चिह्न नजर न आता।

कभी-कभी प्योत्र काका की कोशिश बेकार सिद्ध होती निशानेबाज शिकार को नामजूर कर देता, पर कभी दोनाली बदूक धाय धाय कर छर्रा उगल देती।

प्योत्र काका वसे ही निडर, चहलकदमी करते हुए लौट आते और बडी शान से ऐलान करते

"कोट मे लगा।"

एक दिन छर्रा गदन और कधे मे घुस गया। नानी ने सुई से उसे निकालते हुए पूछा

"तुम क्यो उस जगली को उकसाते हो? किसी दिन आंख-वाख मे छर्रा लग जायेगा, तो पता चल जायेगा।"

प्योत्र काका ने तिरस्कारपूण स्वर मे कहा

"तुम्हें तो कुछ मालूम ही नहीं, अकुलीना इवानोव्ना। उसे निशाना लगाना ही कहा आता है।"

"फिर भी तुम मौका क्यो देते हो उसे? उसे तो अच्छा ही लगता होगा।"

"अच्छा लगता होगा? मै तो रईसजादे को चिढ़ाने के लिए ऐसा करता हू।"

निकाले हुए छर्रों को अपनी हथेली पर निहारते हुए वह बाले
"इसे क्या खाक निशानेबाजी कहा जाये? अलबत्ता निशानेबाजी मामोत इल्योच जानता था। उन दिनो हमारी मालकिन तात्यान अलेक्सेयेव्ना का उसके साथ इश्क चल रहा था। उनका यही दस्तूर था, अर्दलियो के माफिक मद भी बदला करती थीं। मामात इल्यीच फौजी अफसर था। बदूक के ऐसे ऐसे करतब दिखाता था कि लोग दाता तले उगली दबा लेते। चालीस कदम गिनकर वह इग्नाश्का को खडा कर देता। इग्नाश्का वज्रमूख था। उसकी पेटी मे एक बोतल बाध दी जाती और वह दोनो पाव फलाकर खडा हो जाता और हें ह हसता रहता। बोतल टागो के बीच लटकने लगती। तब मामात इल्यीच निशाना दागता था और गोली सीधी बोतल मे, ठाय। क्या मजाल कि इधर से उधर हो जाये। एक बार मक्खी या किसी चीज ने इग्नाश्का को काट लिया और वह जरा हिल गया। गोली मूख के घुटने के जोड को पार कर गयी। डाक्टर बुलाया गया। उसने आव देखा न ताव झट टाग काट डाली। पलक मारते ही किस्सा तमाम। कटी टाग जमीन मे गाड दी गयी "

"और इग्नाश्का का क्या हुआ?"

"वह चगा हो गया। जिसके पास दिमाग ही नहीं, उसे टाग या हाथ की क्या जरूरत? वह तो बुद्धूपन की कमाई खाता है। ऐसो को सभी मदद देने को तयार रहते हैं, क्योकि उनसे किसी को नुकसान नहीं पहुचता। कहा भी है–'बुद्धू काम सुद्धू।'"

नानी पर इस कहानी का कोई असर नहीं हुआ। वह ऐसी दजनो कहानिया जानती थी। पर मेरे रोगटे खडे हो गये। मैंने पूछा

"क्या रईस लोग आदमी को जान से मार सकते थे?"

"क्यो नहीं? उन्ह कोई हर्जाना जो नहीं देना पडता था! कभी कभी तो रईसजादे एक दूसरे पर ही हाथ साफ किया करते थे। एक बार एक नया फौजी तात्यान अलेक्सेयेव्ना के यहा आकर ठहरा था। उससे मामोत की ठन गयी। दोनो ने अपनी अपनी पिस्तौल निकाल ली और बगीचे मे चले गये। वहाँ, झील के किनारेवाले रास्ते मे नये फौजी ने मामोत पर ऐसा निशाना लगाया कि गोली कलेजे के पार हो गयी। इस तरह मामोत साहब सुरधाम सिधारे और नये फौजी का

तबादला हुआ—वह गये काकेशिया। क़िस्सा ख़त्म, पैसा हज़म! इस तरह वे लोग एक दूसरे का ख़ात्मा करने से भी बाज़ नहीं आते थे। फिर किसानों या किसानों जैसे ऐरे ग़ैरे नत्थू खैरों की क्या गिनती थी। जितना को चाहो पटापट उड़ा दो। आजकल तो और भी आसान हो गया है, क्योंकि अब तो ग़ुलाम रहे नहीं। पहले तो रईस लोग यह भी सोचते थे कि यह अपनी मिल्कीयत है। पर अब तो इस बात का भी ख़याल नहीं रहा।"

नानी टोककर बोली

"उस वक्त भी वे बहुत ज्यादा ख़याल नहीं करते थे।"

प्योत्र ने कहा

"ठीक ही कहती हो। उस वक्त मिल्कीयत तो थी, पर कौड़ियों के मोल!"

मेरे साथ प्योत्र काका का व्यवहार सदा अच्छा होता था। मुझसे जब बात करते तो वयस्कों की तुलना में सहृदयता से और आंख मिलाकर। लेकिन उनमें कोई ऐसी बात थी, जो मुझे अच्छी नहीं लगती थी। लोगों को रोटी-मुरब्बा देते वक्त मेरी रोटी पर वह अधिक मुरब्बा लगाते थे। बाज़ार जाते, तो मेरे लिए मिठाइयां लाते और मुझसे हमेशा शान्त और संजीदा स्वर में बोलते। पूछते

"क्यों दोस्त, बड़े होने पर क्या बनने का इरादा है? सिपाही या दफ्तर का बाबू?"

"सिपाही।"

"यही अच्छा है। आजकल सिपाही होने में ज्यादा तकलीफ नहीं है। पादरी का काम भी मजेदार है—बस कह लिया, 'ईश्वर तू धन्य है' और काम बन गया। बल्कि सिपाही से पादरी का काम ज्यादा हल्का है। सबसे आसान काम मछली मारना है। उसमें कुछ सीखने की जरूरत नहीं—केवल आदत डाल लेनी चाहिए।"

वह मछलियों की बड़ी अच्छी नकल करते थे—रोहू किस तरह चारे पर चक्कर काटती है, या कतला और नन काटे में फंसने पर कैसे छटपटाती हैं।

एक दिन ढाढ़स देते हुए वह कहने लगे

"नाना की मार पड़ती है, तो बुरा लगता है न? लेकिन इन बातों का बुरा नहीं मानते। नाना मारते हैं तो तुम्हारे भले ही के लिए।

ग्रौर यह मार तो लडको का खेल है। असल मार तो तुमने देखी ही नहीं है। हमारी तात्यान अलेक्सेयेव्ना ने तो मारने-पीटने के काम के लिए एक खास आदमी रख छोडा था। ख्रिस्तोफोर उसका नाम था। वह इतना मशहूर था कि इलाके भर के जमींदारो की ओर से उसके लिए माग आया करती थी। लोग कहला भेजते थे 'तात्यान अलेक्सेयेव्ना, कृपा कर अपने ख्रिस्तोफोर को भेज दीजिये, हमारे दो आदमियो को पीटना है'। और वह बेचारी ख्रिस्तोफोर को भेज देती थी।"

वह निलिप्त भाव से अपनी जमींदारिन के घर दासो की पिटाई का वणन किया करते थे हवेली के ऊचे स्तम्भो वाले बरामदे मे वह लाल कुर्सी पर ठाठ से बठी हुई है—सर से पर तक दूध जसी सफेद पोशाक पहने। केवल कधे पर एक नीला गुलूबद है। और ख्रिस्ताफार से दास दासियो को पिटवा रही है।

"ख्रिस्तोफोर रियाजान के इलाके का रहनेवाला था—लेकिन लगता था बजारे या उक्रइनी जसा। उसकी मूछें एक कान से दूसरे कान तक फली हुई थीं, पर दाढ़ी सफाचट, जिससे चेहरा नीला लगता था। वह बुद्धू जसा लगता था। कहना कठिन है कि पदायशी ऐसा था या बना हुआ, क्योकि बनने मे भी मजा था—बुद्धू के सब क़सूर माफ। रसोईघर मे जाकर वह किसी बतन मे पानी भर लेता और मक्खी, तिलचटा या गुबरला पकडकर उसमे डाल देता और डालकर देर तक छडी से उसे गोते देता रहता। कभी कभी अपनी ही गदन से चिल्लड निकालता और उसे पानी मे डुबा देता "

ऐसी कहानिया मेरे लिए नयी नहीं थीं। नाना और नानी अक्सर इस तरह के किस्से सुना चुके थे। थोडे हेर फेर के बावजूद मूलत सभी मे मानव यत्रणा और अपमान का एक सा प्रसग रहता था। मैं इन कहानिया से ऊब चुका था। मैंने कहा

"कुछ दूसरी चीज सुनाइये।"

प्योत्र काका ने चेहरे की तमाम झुरिया मुह के पास बटोर लीं और उन्ह दोनो आखो की तरफ बिखेरते हुए बोले

"तुम बडे लालची मालूम होते हो। लेकिन खर, दूसरी चीज ही सुनो। हमारे यहां एक बावर्ची था "

"किसके यहा ?" मैंने पूछा।

"जमींदारिन तात्यान अलेक्सेयेव्ना के यहा।"

"तुम उसे तात्यान क्यो कहते हो ? वह तो औरत थी—तात्याना ?"

"हा, औरत ही थी वह, पर मूछो वाली औरत। उसके होठ पर काली रेखा थी। जन्म से वह काली जमन थी। काले जमन हबशियो की तरह होते हैं। तो वहा एक रसोइया था—बडी मजेदार कहानी है "

मजेदार कहानी यही थी कि रसोइया एक बार मास के समोसे बना रहा था, पर वे खराब हो गये। उसे एक ही बार मे सारे समोसे खा जाने की सजा दी गयी। नतीजा यह हुआ कि उसे दस्त आने लगे।

मैंने खीझकर कहा

"इसमे मजेदार क्या हुआ ?"

"तो मजेदार क्या होता है, तुम्हीं बताओ।"

"मैं नहीं जानता "

"नहीं जानते, तो चुप रहो।"

इसके बाद उनकी नीरस कहानिया का ताता फिर शुरू हो गया।

पर्वों-त्योहारो के अवसर पर मिखाईल मामा का उदास लद्धड साशा और याकोव मामा का चुस्त और चालाक साशा नाना के घर आ जाया करते थे। एक दिन हम तीनों आगन के किनारेवाली कोठरियो की छतो पर कूद फाद रहे थे। बेतलेंग परिवार के आगन मे कोई आदमी लकडियो के ढेर पर बठा हुआ कुत्ते के पिल्लों से खेल रहा था। वह हरा लम्बा कोट पहने हुए था, जिसके किनारे पर लोमडी के मुलायम बाल लगे थे। उसकी छोटी पीली चाद झलक रही थी। मेरा एक ममेरा भाई बोला कि किसी उपाय से इसका एक पिल्ला उडाना चाहिए। हम लोगो ने फौरन इसकी तरकीब सोच निकाली। तय किया कि दोना ममेरे भाई गली से होकर बेतलेग वालो के फाटक के पास खडे रहेंगे। इधर से मैं उस आदमी को डराऊगा। जब वह भागेगा, तो दोनो साशा आगन मे घुसकर एक पिल्ला उडा देंगे।

"उसे डराया किस तरह जाये ?"

एक साशा ने सुझाया

"ऊपर से उसकी गजी चाद पर थूक देना।"

किसी की गजी चाद पर थूकना बहुत बडा अपराध हो सक्ता है, मै यह नहीं जानता था। मै इससे कहीं अधिक भयानक अपराधा के बारे मे सुन चुका था और उन्हे आखों से देख चुका था। अत इस काम का पूरा करने मे मुझे जरा भी हिचक नहीं हुई।

उसके बाद तो जसे तूफान मच गया। बेतलेग वालो के घर स बहुत से मर्दों और औरतो ने आकर हमारे आगन को घेर लिया। सबके आगे एक सुन्दर युवक अफसर था। मेरे ममेरे भाई गली मे या घूम फिर रहे थे, जसे कुछ जानते ही न हो। नाना के सभी कोडे मेरी पीठ पर बरसे, और कस-कसकर, क्योकि बेतलेग जैसे रईस परिवारवाला को तुष्ट करने का सवाल था।

मार से घायल होकर मैं रसोईघर के चबूतरे पर लेटा हुआ था। प्योत्र काका मुझे देखने आये। वह त्योहार की बढिया पोशाक मे थे और बडे खुश नजर आ रहे थे। बाले

"शाबाश मेरे शेर। खूब किया। उस बूढे बकरे के लिए यही सजा चाहिए। उसका पूरा कुनबा थूकने के लायक है। उसकी खोपडी पर एक ईंट ही क्यो नहीं गिरा दी? और मजा आता।"

मुझे हरे कोटवाले उस भलेमानस का गोल, लोमहीन, बालको जसा चेहरा याद आ गया। सर पर थूक गिरा, तो बेचारा पिल्ले की तरह चौं चौं करता हुआ पीली चाद को अपने छाटे छोटे हाथो से पोछने लगा था। उस वक्त मै शम से गड गया था। मुझे अपने ममेरे भाइयो पर बेतरह गुस्सा आया था। लेकिन अपने सामने खडे इस गाडीवान के टोकरी के समान बुने हुए चेहरे को देखते हुए मै यह सब भूल गया। चेहरा हिल रहा था और वसा ही घृणित और डरावना लग रहा था जसा पीटते वक्त नाना का।

मैंने दोनो हाथो और परो से प्योत्र को ठेलते हुए चिल्लाकर कहा

"भागो यहा से।"

वह हसे और मटको मारते चबूतरे से नीचे उतर गये।

उस दिन के बाद उनसे बात करने को जी नहीं हुआ। मैं उनसे कतराने लगा और साथ ही चौकन्ना रहने लगा, क्योकि आशका थी कि वह कोई दुष्टता कर बठेंगे।

इस फाड के कुछ ही दिनो बाद एक और फाड हो गया। कर्नल ओव्स्यानिकोव की रहस्यमय नीरव कोठी के बारे मे मुझे बहुत दिनों से गहरा कुतूहल था। मुझे लगता कि वह भूरा मकान परियो के देश का भाग है, जहा विलक्षण प्राणी रहते हैं।

बेतलेग परिवार का मकान दूसरी ही तरह का था। वहा सदा चहल-पहल रहा करती थी। उस घर मे कई सुदरिया थीं और उनसे प्रेमालाप करनेवाले विद्यार्थियो और अफसरो का वहा बराबर ताता लगा रहता था। सदा धमाचौकडी मची रहती थी—नाचना, गाना, हसना, बोलना, हर तरह का कोलाहल। उस मकान की आकृति से ही चुलबुलेपन की बास आती थी। उसकी खुली खिडकियो के अदर से गमलो मे रखे पौधो की हरियाली झाका करती थी और खिडकिया बडी सजीव मालूम होती थीं। मेरे नाना इस घर से चिढ़े रहते थे। उसमे रहनेवालो को वह "अधर्मी और निलज्ज" कहा करते थे। खास कर स्त्रियो के बारे मे वह एक गदे शब्द का प्रयोग करते थे, जिसका अर्थ प्योत्र चाचा ने मुझे बडा रस लेते हुए समझाया था।

इसके विपरीत ओव्स्यानिकोव घराने के शात, कठोर मकान से वह बहुत प्रभावित थे।

वह एकमजिली इमारत थी, जो सुथरे खुले आगन मे, जिसपर घास का कालीन बिछा था, दूर तक फैली हुई थी। आगन के बीचोबीच एक कुआ था, जो खम्भो पर खडी छत से ढका हुआ था। घर गली से दूर हटकर बना हुआ था, मानो गली की जिदगी से मुह चुराना चाहता हो। सामने के भाग मे मेहराबदार, तग और जमीन से ऊचाई पर नक्काशीवाली तीन खिडकिया थीं। उनके शीशो पर सूर्य की किरणें इद्रधनुष की तरह सतरगी मालूम पडतीं। फाटक के दूसरी ओर अनाजघर बना हुआ था। उसमे भी मुख्य हवेली के जोड की तीन खिडकिया थीं, लेकिन दिखावे भर की। भूरी दीवार पर 'चौखट' तथा 'शीशा' रगकर हूबहू खिडकी की शक्ल दी गयी थी। न जाने इन नकली खिडकियो को देखकर क्यो मन कुठित हो जाया करता था। पूरा अनाजघर मानो इस बात की पुष्टि करता था कि हवेली आम लोगो की नजरो से दूर, अलग रहस्यमय जीवनयापन करना चाहती है। पूरी कोठी खाली अस्तबल और बडे फाटकवाले बग्घी घरो

समेत या खडी थी, मानो मन मे किसी बात की टीस छिपाये हो, या उसमे अभिमान भरा हो।

आगन मे कभी कभी एक लम्बा, दाढ़ीहीन बूढा लगडाता हुआ घूमता दिखाई पडता था। उसकी श्वेत नुकीली मूछें काटो जसी लगती थीं। एक और, गुलमुच्छो तथा टेढ़ी नाकवाला बूढा अक्सर अस्तबल से एक भूरे घोडे की लगाम थामे निकलता। घोडे की छाती सकरी और टागें पतली थीं। बाहर आकर घोडा चारा ओर देखता और मठ की विनम्र भक्तिन की तरह सिर हिलाता था। लगडा बुड्ढा जोर से घोडे की पीठ थपथपाता और पुचकारता। इसके बाद फिर उसे अधेरे अस्तबल मे पहुचा देता। मैं सोचता कि बुड्ढे को किसी जादूगर ने हवेली मे कद कर रखा है। वह भागना चाहता है, लेकिन बेबस है।

तीन छोटे छोटे लडके सुबह से शाम तक उस आगन मे खेला करते थे। तीनो की पोशाक एक सी होती थी—भूरा पतलून, जकेट और एक ही तरह की टोपी। तीनो का रग रूप भी एक समान था—गोल चेहरा और भूरी भूरी आखें। मैं उन्हे केवल उनके कद से पहचान सकता था।

बाड मे एक दरार थी। उसी से मैं उन लडको का खेलना देखा करता था। पर मेरी ओर उनका ध्यान कभी न जाता, जिससे मैं खिन्न रहता। उनका पारस्परिक सदभाव और नये-नये खेल, जो मैंने कभी नहीं खेले थे, देखने मे बडे अच्छे लगते। उनका पहनावा और एक दूसरे के प्रति सौहार्द बडा ही मनभावना मालूम देता था। सबसे छोटा, गोल मटोल, नटखट और गेंद जसा था। बडा भला लगता था वह। दोनो बडे भाई उसका बहुत खयाल रखते थे। वह गिर जाता, तो दोनो बडे लडके, जसा कि स्वाभाविक है, हस पडते, पर उस हसी मे ओछापन न होता। फौरन सहारा देकर वे उसे उठाते और उसके हाथो और घुटनो को पत्ते या रूमाल से झाड देते। मझला कहता

"बला लद्धड है!"

तीनो न कभी लडते झगडते, न एक दूसरे को छकाने की कोशिश करते। और तीनो ही स्वस्थ, सुघड और फुर्तीले थे।

एक दिन मैंने पेड पर चढ़कर सीटी बजानी शुरू की। सीटी की आवाज सुनकर तीनो खडे हो गये और एक दूसरे से सटकर मेरी ओर

देखने लगे। फिर उनमे कुछ सलाह होने लगी। मैंने सोचा वे ढेलेबाजी शुरू करेंगे, इसलिए नीचे उतरकर जल्दी जल्दी जेब मे रोडे भर लिये। फिर चढ़ा, तो वे आगन के दूर कोने मे अपने खेल मे मशगूल हो चुके थे। मुझे अफसोस हुआ। पर मैं अपनी तरफ से युद्ध का ऐलान नहीं करना चाहता था। इसी बीच किसी ने खिडकी से पुकारा

"बच्चो! चलो अन्दर। जल्दी!"

कलहसो की टोली की तरह वे धीरे धीरे घर की ओर रवाना हो गये।

मैं अक्सर बाड के पास पेड पर बैठकर उन्हे देखा करता था। मन मे यह आशा रहती थी कि वे मुझे भी खेलने को बुलायेंगे, पर उन्होने कभी ऐसा नहीं किया। मैं पेड पर बैठा कल्पना में डूब जाता था–मै भी उनके साथ खेल रहा हू। खेलते-खेलते उनके हसने पर मैं भी हस पडता, या कुछ कह देता। वे तीनो विस्मय से मेरी ओर देखने या आपस मे बात करने लगते। मैं झेंपकर नीचे उतर आता।

एक दिन वे लोग आखमिचौनी खेलने लगे। मझला भाई 'चोर' बना था। वह अनाजघर के एक कोने मे दोनो हाथो से आख दाबकर खडा था। बाकी दोनो भाई छिपने चले गये। बडा भाई अनाजघर के छप्पर के नीचे रखे स्लेज मे घुस गया, पर छोटा कुए का चक्कर काट रहा था। उसकी समझ ही मे नहीं आ रहा था कि कहा छिपे।

'चोर' चिल्लाया, "एक दो "

घबराहट मे छोटा कुए पर चढ गया और रस्सी पकडकर खाली बालटी मे बैठ गया। बालटी उसे लेकर कुए मे चली गयी। केवल अन्दर की दीवारो से उसके टकराने का झनझन शब्द सुनाई पडा।

मुझे काटो तो लहू नहीं। अब भयानक काड हो जायेगा, यह समझते मुझे देर न लगी। चिल्लाकर मै आगन मे कूद पडा

"लडका कुए मे गिर गया! "

मेरे कुए तक पहुचते पहुचते मझला लडका भी वहा पहुच चुका था। उसने रस्सी थाम ली थी। पर बोझ उससे सम्भल नहीं रहा था। वह खुद भी खिचा जा रहा था, फिर भी कसकर रस्सी को थामे हुए था। उगलिया कटी जा रही थीं। तब तक मैने भी रस्सी पकड ली। इस बीच बडा भाई भी दौड आया और तीनो ने मिलकर बालटी ऊपर खींच ली।

"कृपया सावधानी से," बडा भाई बोला।

लडका निकल आया। वह बुरी तरह डर गया था। दाहिने हाथ की उगलिया फट गयी थीं और उनमे से खून निकल रहा था। एक गाल भी बुरी तरह छिल गया था। कमर तक कपडे पानी से तर थे। चेहरा फक। पर वह मुस्कराया और कापता हुआ बोला

"मै मै लुढक गया "

मझला भाई बोला

"बला बुद्धू है।" और उसे गले से लगाकर रूमाल से उसके चेहरे का खून पोछने लगा। बडे ने माथे पर बल डालकर कहा

"अब तो पकडे जायेंगे। चलो घर चले।"

मैंने पूछा

"तुम लोगो की पिटाई होगी क्या?"

उसने सिर हिलाया और अपना हाथ मेरे हाथ की तरफ बढ़ाते हुए बोला

"तुमने बडी फुर्ती दिखायी।"

उसकी प्रशसा से मै बाग-बाग हो गया और उसका हाथ अपने हाथ मे लेने की सुधि ही न रही। मै सभलू तब तक उसने मझले से कहा

"जल्दी चलो, नहीं तो सर्दी लग जायेगी इसे। घर मे इतना ही कहगे कि गिर पडा। कुए का नाम लेने की जरूरत नहीं है।"

छोटा सिर हिलाकर बोला

"ठीक है। हम लोग कह देंगे कि मैं गढे मे गिर पडा।"

और वे चले गये।

सारी बाते आनन फानन हो गयीं। मैंने ऊपर देखा, तो जिस डाली पर मै बठा हुआ था, वह अब भी हिल रही थी, उसके पीले पत्ते झडकर नीचे गिर रहे थे।

एक हफ्ते तक तीनो भाई आगन मे नहीं दिखाई पडे। फिर जब वे आये, तो हमेशा से अधिक उत्साह मे थे। बडे ने मुझे देखते ही मत्रीपूर्ण स्वर मे कहा

"आओ, हम लोगो के साथ खेलो।"

हम लोग पुरानी स्लेज मे चढ़ गये और वहां बडी देर तक एक दूसरे को देखते हुए बातें करते रहे।

मैंने पूछा
"तुम लोगो को भी मार पडी थी?"
"खूब तरह," बडे ने जवाब दिया।
मुझे आश्चय हुआ कि इन बच्चो को भी मेरी तरह मार पडती है। यह मुझे अयाय लगा।
छोटे ने पूछा
"तुम चिडियो को क्या पकडते हो?"
"उनका गाना सुनने के लिए।"
वह बोला
"मत पकडा करो उनको। उहे उडने देना चाहिए।"
"ठीक है अब कभी न पकड गा।"
"नहीं, पहले एक पकडकर मुझे दे देना।"
"कौनसी?"
"जो गानेवाली हो, पिंजडे मे रखने लायक।"
"लाल लोगे?"
"बिल्ली उसको खा जायेगी," मझला बोला, "और बाबूजी नहीं रखने देंगे।"
"ठीक कहते हो," बडे ने कहा।
"तुम्हारी मा नहीं है?" मैंने सवाल किया।
"नहीं," बडे ने जवाब दिया। पर मझले ने भूल सुधारते हुए कहा
"मा है। पल वह हमाली नहीं है। हमाली मा मल गयी।"
"ऐसी को सौतेली मा कहते हैं," मैंने कहा और बडे ने सिर हिलाकर सहमति प्रकट की
"ठीक है।"
तीनों थोडी देर के लिए विचार मे डूब गये।
सौतेली मा क्या होती है, यह मैंने नानी की कहानियो से अच्छी तरह जान लिया था, इसलिए तीनों भाइयों की चुप्पी को मै आसानी से समझ गया। तीनो एक दूसरे से सटकर बठे थे, जसे मटर के तीन दाने। मुझे उस सौतेली मा की कहानी याद आ गयी, जो डायन थी और जिसने कपटजाल फलाकर असली मा की जगह ले ली थी। अत मैंने तीनो भाइयो को सात्वना देने की कोशिश की

"घबराने की कोई बात नहीं, तुम्हारी अपनी मा फिर लौट आयेगी।"

बडे ने कधे झटककर कहा

"जो मर गया, वह कसे लौट आयेगा? मरा आदमी फिर नहीं आता "

नहीं आता? क्या बात कही? कितनी बार अमृत की दो बूदें पडते ही मामूली मुर्दे की बात कौन कहे, जिनकी बोटी-बोटी अलग कर दी गयी थी, वे भी उठ बठे। कितनी बार तो ऐसा हुआ कि मौत ईश्वर ने नहीं भेजी थी। वह डायन या जादूगर के टोने का नतीजा थी।

मैं बडे उत्साह के साथ नानी की कहानिया सुनाने लगा। पर बडे ने मुस्कराकर कहा

"यह सब हम लोग सुन चुके हैं। यह तो परियो की कहानिया हैं।"

बाकी दोनो भाई बडे ध्यान से मेरी बात सुन रहे थे। छोटे की भौंह सिकुडी हुइ और होठ सटे हुए थे। मझले की एक कोहनी घुटने के ऊपर थी और दूसरा हाथ छोटे भाई के गले मे, जिससे वह मुझसे सटा हुआ था।

बातो मे काफी शाम हो गयी। गुलाबी बादल घरो की छता पर झुक आये। अचानक सफेद मूच्छो वाला एक बुड्ढा वहा आ पहुचा। वह पादरियो जैसा लम्बा भूरा कोट पहने था और उसके सिर पर रोएदार टोपी थी। मेरी ओर उगली दिखाकर वह बोला

"यह कौन है?"

बडे ने खडे होकर मेरे नाना के घर की ओर इशारा किया और बोला

"उस घर मे रहता है "

"यहा किसने इसको बुलाया?"

तीनो लडके चुपचाप स्लेज से नीचे उतरकर घर के अन्दर चले गये। उन्हे जाता देख मुझे शाम को गज मे घुसते हुए कलहसो की याद आ गयी।

बुड्ढे ने कसकर मेरे कधो को पकड लिया और आगन पार कर फाटक पर पहुचा दिया। मै डर से रोने रोने को हो रहा था, लेकिन

वह इतनी तेजी से जा रहा था कि रो पडने के पहले ही मै फाटक के बाहर हो गया। वहा वह मुझे डाटकर बोला

"खबरदार जो फिर अन्दर पर रखा!"

मैंने गुस्से से जवाब दिया

"मैं तुमसे मिलने थोडे ही आया था, बुडढे कहीं के!"

उसने फिर मुझे पकड लिया और घसीटता गली की पटरी पर ले चला। बार बार हथौडे की-सी चोट करता हुआ वह एक ही प्रश्न दुहरा रहा था

"तुम्हारा नाना घर पर है?"

मेरी बदकिस्मती! नाना घर पर मौजूद थे। बुडढा तश मे था और नाना उसके सामने खडे थे—गदन सीधी किये, दाढी की नोक ऊपर उठी हुई और तावे के सिक्को जसी गोल गोल तथा ज्योतिहीन आखो मे झाकते हुए जल्दी जल्दी कह रहे थे

"माफ कीजिये, कनल साहब! इसकी मा दूसरे शहर चली गयी है, मैं काम मे रहता हू और दूसरा कोई देखनेवाला नहीं है।"

कनल साहब एक बार शेर की तरह गरजे, जिससे घर हिल गया और लकडी के खम्भे की तरह मुडकर चले गये। कुछ देर बाद मैं बोरे की तरह प्योत्र काका की गाडी मे फेंक दिया गया।

घोडे को खोलते हुए काका ने पूछा

"फिर पिटाई हुई? इस बार क्या हुआ था?"

जब मैंने सारी बात कह सुनायी, तो वह गुस्से से तमककर बोले

"तुम ऐसे लोगो से दोस्ती क्यो करने गये थे? वे लोग रईसा के साहबजादे है, भया! उनसे मिलने का नतीजा देख लिया न? अब सूद समेत इसका बदला लेना।"

वह इसी तरह बक बक करते रहे। मेरे ऊपर चोट का असर था, इसलिए शुरू मे मैंने उनकी बातें बहुत ध्यान से सुनीं। पर उनका टोकरी की तरह बुना हुआ चेहरा इतने वीभत्स रूप से कापने लगा कि मुझे सहसा याद आया कि आज उन लडको को भी मेरी ही तरह पिटाई हुई होगी और बेचारो ने मेरा कुछ नहीं बिगाडा था।

"उनसे क्यो बदला लूगा," मैंने कहा, "वे भले लडके हैं और तुम जो कुछ कह रहे हो, वह सब झूठ है।"

उन्होंने घूरकर मेरी ओर देखा और सहसा जोर से चिल्लाये

"उतरो मेरी गाडी से।"

"गधा कहीं का!" नीचे कूदते हुए मैंने कहा।

वह आगन मे मेरे पीछे दौडने लगा, पकडने मे असफल रहा, भागता और चिल्लाता रहा

"क्या कहा मैं गधा हू? मै झूठा हू? ठहर तो "

नानी आवाज सुनकर ओसारे मे निकली। मैं उसके नजदीक चला गया। प्योत्र ने शिकायत की

"इस छोकडे ने मेरे नाक मे दम कर दिया है। मैं इसकी पचगुनी उम्र का हू, पर यह मुझे गन्दी गन्दी गालिया देता है "

मुह पर सरासर झूठ सुनकर मेरी अक्ल गुम हो जाती थी। उस वक्त भी मेरी समझ ही मे न आया कि क्या कहू। पर नानी ने दृढ़ता के साथ जवाब दिया

"प्योत्र, तुम भी कसी बातें करते हो? मैं हरगिज नहीं मान सकती कि यह तुम्हे गन्दी-गन्दी गालिया देता है।"

पर नाना होते, तो उस गाडीबान की बात फौरन मान लेते। उस दिन से प्योत्र और मुझमे अनबन रहने लगी। भीतर ही भीतर दोना मे जग छिड गयी। वह मौका पाता, तो मुझे धक्का देता या मेरे ऊपर घोडे की लगाम चला देता, पर ऐसा बनकर जसे गलती हो गयी हो! मेरी पालतू चिडियो का उसने पिंजडा खोल दिया और एक दिन तो उनपर बिल्ली लगा दी। हमेशा बढा चढाकर नाना से मेरी शिकायत करता। मैं भी उसके साथ हमउम्र का सा सलूक करता था—मानो वह कोई लडका हो, जिसने बूढे का नकली वेश धारण कर रखा हो। मै चुपके से उसकी चप्पल का चमडा ढीला कर देता, जब वह उसे पहनकर बाहर निकलता, तो टूट जाती। एक दिन मैंने उसकी टोपी मे काली मिच की बुकनी छिडक दी, जिसके फलस्वरूप वह एक घण्टे तक छींकता रहा। मेरा भी जहा तक वश चलता, ईंट का जवाब पत्थर से दिया करता था। पर्व-त्योहारों पर वह अक्सर छिपकर दिन भर मेरे पीछे लगा रहता था और कई बार "रईसा के साहबजादा" के साथ मुझे खुफिया तौर से मिलते देखकर उसने नाना से जाकर चुगली खा दी।

उन लडको के साथ मेरी दोस्ती जारी थी और इसमे अब मुझे अधिकाधिक आनन्द आने लगा था। नाना के मकान और ओव्स्यानिकोव की बाड के बीच एक जगह छोटा कोना था, जहा दो पेडो और घनी झाडी उग आयी थी। झाडी के नीचे बाड मे मैंने छोटा-सा छेद कर लिया था, जिसमे से तीनो भाई—अकेले या एक साथ दो—आकर मुझसे चुपके चुपके बात किया करते थे। बातचीत के वक्त कम से कम एक आदमी पहरा देता, ताकि कनल हम लोगो को देख न ले।

वे लोग अपने नीरस जीवन का ब्योरा सुनाते थे। उसे सुनकर मेरा चित्त खिन्न हो जाता। कभी चिडियो की बात होतीं और कभी कोई अन्य बालोचित प्रसग छिड जाता। पर जहा तक मुझे याद है, तीनो भाई कभी अपनी सौतेली मा या बाप की चर्चा नहीं करते थे। अक्सर वे मुझसे केवल कहानिया सुनाने को कहते और मै नानी से सुनी कहानिया सुना देता। अगर बीच मे कुछ भूल जाता, तो उन्हें रोककर फौरन नानी के पास दौड जाता। नानी खुशी से भूला टुकडा याद करा देती।

मैं अक्सर उन्हे अपनी नानी के बारे मे बताया करता था। एक दिन बडे लडके ने दीघ निश्वास छोडते हुए कहा

"नानिया सभी अच्छी होती हैं। हम लोगो की भी ऐसी ही अच्छी नानी थी "

वह "था", "हुआ करता था", "कभी हमारी भी थी" आदि शब्दों का इतनी बार और इस ढग से प्रयोग करता था, मानो ग्यारह साल का बालक नहीं, सौ बरस का बूढ़ा हो। उसके हाथ नाजुक और उगलिया लम्बी और पतली थीं। यह मुझे अभी तक याद है। वह खुद लम्बा, पतला और नाजुक था—आखें गिरजाघर के दीप की तरह निमल और लजीली। मुझे उसके दोनो भाई भी बडे प्यारे लगते थे। सबो ने मेरा दिल जीत लिया था। मुझे सदा प्रेरणा होती कि उनकी भलाई का कोई काम करू। पर सबसे अधिक स्नेह मुझे बडे के प्रति था।

हम लोग बातचीत मे इस तरह लीन हो जाते कि प्योत्र काका के आने का पता न चलता। वह पीछे से आकर कहते

"ए ए ए! फिर?"

हम सभी चौंक पडते।

मैंने अनुभव किया था कि इन दिनों प्योत्र काका पर चिडचिडपन के अवसर दौरे पडते थे। वह काम से लौटते, तो मैं फौरन ताड जाता कि आज पारा कितनी डिग्री पर है। साधारणत वह फाटक धीरे-से खोलते, जिससे कब्जे से लम्बी चू चू की आवाज निकलती थी। पर जिस दिन पारा गरम रहता था, उस दिन फाटक की चूल ऐसे छोटी सी चू करती मानो दद से एकबारगी कराह उठी हो।

उनका गूगा भतीजा शादी करने के लिए देहात चला गया। प्योत्र अस्तबल के ऊपर के एक कमरे मे अकेले रहने लगे। कमरे की छत नीची थी। उसमे सिफ एक खिडकी थी। अलकतरे, पुराने चमड, तम्बाकू और पसीने की अजीब गध से कोठरी भरी रहती थी। इस गध के कारण मै उसके अदर पर नहीं रख सकता था। इन दिना वह रात को सोते वक्त लम्प जलता छोड देते थे। नाना इससे बहुत नाराज होते थे। वह कहते

"प्योत्र! किसी दिन तुम घर जला डालोगे।"

उसने उनकी नजर बचाते हुए कहा

"नहीं, इसका खतरा नहीं है। मैं सोते वक्त लम्प को पानी के बतन मे रख देता हू।"

आजकल वह हम लोगो से नजर चुराने लगे थे और नानी की दावतो मे भी नहीं शरीक होते थे, न मुरब्बा बाटते थे। चेहरा सूख गया था, झुर्रिया और गहरी हो गयी थीं और चलते वक्त बीमारो की तरह लडखडाते थे।

एक रोज रात को खूब बफ गिरी थी। नाना तथा मैं सबेरे उठते ही उसे कुदाल से हटा रहे थे कि फाटक पर खटका हुआ और पुलिस का एक सिपाही बडे रोब से अदर दाखिल हुआ। फाटक बद कर वह उसी से सटकर खडा हो गया और अपनी मोटी भूरी उगली से उसने नाना को पास आने का सकेत किया। जब नाना नजदीक गये, तो अपनी बडी सी नाक उनके मुह के पास सटाकर उसने कुछ कहा, जिसपर नाना विस्मित होकर बोले

"यहा पर! कब? मुझे तो कुछ खबर नहीं है "

और अचानक हास्यजनक ढग से उछलकर वह चिल्लाने लगे

"हे भगवान! नहीं? भला ऐसा भी ..."

"श्श्!" कहकर पुलिसवाले ने उन्हें सावधान होने का संकेत दिया।

नाना घूमे और मुझे खड़ा देखकर बोले

"जा! दुकान घर में रख आ।"

मैं एक कोने मे छिपकर दोनो की गतिविधि देखने लगा। वे अस्तबल के ऊपर गाड़ीबानवाले कमरे मे घुसे। पुलिसवाला दाहिने हाथ का दस्ताना उतारकर उसे अपनी बायीं हथेली पर मारते हुए बोला

"ताड़ गया मामले को! इसी लिए घोड़ा छोड़कर भाग गया।"

मैं रसोईघर मे नानी को सारा हाल सुनाने दौड़ा। वह आटा गूंध रही थी और मेरी बातों पर आटे से सना सिर हिलाती जा रही थी। बातें खत्म हो जाने पर अविचल स्वर मे बोली

"होगा, कहीं कुछ चोरी-वोरी की होगी? तू जाकर खेल। तुझे इन बातों से क्या?"

मैं फिर आंगन मे पहुंचा, तो नाना नंगे सिर फाटक पर खड़े थे। टोपी हाथ मे थी और आंखें आकाश की ओर। वह सीने पर सलीब का चिह्न बना रहे थे। चेहरा गुस्से से तमतमाया हुआ था और एक टांग कांप रही थी।

मुझे देखकर जोरों से पैर पटकते हुए बोले

"तुझे घर मे जाने को कहा था न?"

मेरे पीछे-पीछे वह भी रसोईघर मे आये और नानी से बोले

"वर्वारा की मां! जरा इधर तो आना।"

दोनों बगल के कमरे मे चले गये और कुछ देर तक खुसुर-फुसुर करते रहे। नानी बाहर आयी, तो उसके चेहरे पर नजर पड़ते ही मैं समझ गया कि कोई भयानक वारदात हो गयी है।

"तुम क्यों इतनी घबराई हुई हो?" मैंने पूछा।

वह मन्द स्वर मे बोली

"तू अपना मुंह बन्द रख।"

इसके बाद दिन भर घर मे भय और तनाव का एक रहस्यमय वातावरण छाया रहा। नाना और नानी भयभीत दृष्टि से एक दूसरे

की ओर देखते और रह रहकर आपस मे ऐसे शब्द फुसफुसाते, जिनका मैं अर्थ नहीं निकाल पाता था और जिनकी वजह से मेरी शका और बढ़ती जाती थी।

नाना ने भर्राये हुए गले से कहा

"वर्वारा की मा! देव प्रतिमाओं के सभी दीप तो जला दो।"

सबो ने जल्दी जल्दी खाना खाया, पर किसी को भूख न थी, मानो वे किसी के आगमन की प्रतीक्षा मे हो। नाना ने 'उह' किया, फिर गला साफ करते हुए बोले

"शैतान से वास्ता रखनेवाला का यही हाल होता है। इसी को देखो—देखने मे कैसा धर्मात्मा और ईमानदार मालूम होता था। कौन सोच सकता था कि पेट मे पाव हैं उसके?"

नानी ने लम्बी सास खींची।

जाडे का धुपहला दिन खत्म होने मे ही न आता था और घर के भीतर के वातावरण मे दम घुट रहा था।

शाम के करीब एक और पुलिसवाला आया। उसके केश लाल थे और वह खूब मोटा-ताजा था। रसोईघर की बेंच पर बैठकर वह ऊघने लगा। बीच-बीच मे खर्राटा भरकर वह सिर हिलाता।

नानी ने पूछा

"इसका पता कैसे लगा?"

दो क्षण चुप रहकर उसने अपने रूखे कर्कश स्वर मे जवाब दिया

"हम लोगो को सब कुछ पता लग जाता है।"

मैं खिडकी के करीब बैठकर पाला जमे शीशे पर सन्त जार्ज का अक्स उतारने के लिए मुह से एक पुराना सिक्का सेक रहा था।

सहसा फाटक पर किसी के पैरो की धमक सुनायी पडी और दरवाजा भडाक से खुल गया। देहरी पर पेत्रोव्ना खडी थी। उसने चिल्लाकर कहा

"जरा दौडो, देखो तुम्हारे आगन मे क्या काण्ड हो गया है!"

यकायक उसकी दृष्टि पुलिसवाले पर पडी। उसे देखते ही वह उलटे पाव ड्योढी मे भागी। पर सिपाही ने दौडकर उसका घाघरा पकड लिया और खुद भी घबराये स्वर मे बोला

"रुको जरा! कौन हो तुम? क्या है आगन मे?"

वह धम से घुटनो के बल ज़मीन पर बठ गयी और रोने लगी।
हुए कण्ठ से बोली
"मैं गाय दुहने गयी तो देखती क्या हू कि काशीरिन के आगन
किसी की टाग बाहर निकली हुई है।"
"तू झूठ बोल रही है, हरामजादी!" नाना ने गुस्से से आग
ला होकर कहा। "पिछवाडे की बाड इतनी ऊची है कि तुझे उस
: से कुछ दिखाई नहीं दे सकता। उसमे छेद भी नहीं है। तू सरासर
बोल रही है। वहा कुछ भी नहीं है।"
पेत्रोव्ना ने एक हाथ से अपना माथा पकडा और दूसरा नाना
ओर बढ़ाकर चिल्लायी
"तुम सच कहते हो। मैं झूठ बोल रही थी। मै जा रही थी कि
ानक मुझे तुम्हारी बाड की ओर किसी आदमी के पैरो के चिह्न
ाई दिये और एक जगह की बफ रौंदी हुई है। मैं ऊपर चढ़ी तो
ती हू कि वह पडा हुआ है "
"कौन? "
यह 'कौन' एक डरावनी चीख की तरह निकला। इसके बाद सभी
ालो की तरह रसोईघर से आगन की तरफ भागे। वहा कोनेवाले
: मे, जिसमे बफ भर गयी थी, प्योत्र काका पडे हुए थे। उनकी
5 अधजले शहतीर के सहारे टिकी हुई थी, सिर छाती के ऊपर
ुक रहा था। दाहिने कान के नीचे एक लम्बा घाव था—जसे किसी
खुला हुआ मुह। उसके किनारे किनारे नीले धब्बे थे, जो दातो की
त जसे लग रहे थे। भय से मेरी आखें मुद गयीं। पलको की ओट
मैंने देखा—उनकी छुरी घुटना पर दाहिने हाथ की काली, ऐंठी
ालियो की बग़ल मे पडी थी। बायें हाथ पर बफ की एक तह जम
ी थी। उनके दुबले पतले शरीर के नीचे की बफ गली हुई थी।
टी सी लाश मुलायम भुरभुरी बफ मे गड गयी थी। इस अवस्था मे
नका शरीर और भी बालको जसा लग रहा था। दाहिनी ओर बफ
: एक टेढा-मेढ़ा लाल नक्शा बन गया था, जो किसी पक्षी जसा
खाई पड रहा था। बायीं ओर बर्फ बेदाग़, चिकनी चमक रही थी।
ाया इस तरह झुका हुआ था मानो बदगी कर रहे हों। घुघराली
ढ़ी छाती से लगी हुई थी, नीचे छाती पर ताबे का एक बडा सा

फ़ास पड़ा था, जिसके चारो ओर ख़ून के धब्बे पड़ गये थे। उस हल्ले गुल्ले से मेरा सिर चक्कराने लगा। पेत्रोव्ना का चीख़ना ख़त्म ही नहीं हो रहा था। पुलिसवाला वलेय से कहीं जाने को कह रहा था। और नाना चिल्ला रहे थे

"परो के दाग न मिटने पायें।"

अचानक वह कुछ सोचने लगे और उन्होंने आखें नीची कर लीं। और तब अधिकारी स्वर मे जोर से बोले

"सिपाही जी! हल्ला-गुल्ला करने से कुछ लाभ नहीं। उसे तो ईश्वर ने अपने हाथ से सज़ा दे ही दी है। हम लोग बेकार ही प्रभु की करनी मे दख़ल देना चाहते हैं। छि!"

भीड़ मे चुप्पी छा गयी। सभी निश्वास छोड़ते हुए मृत व्यक्ति को घूर रहे थे और सलीब का चिह्न बना रहे थे।

कुछ और लोग पेत्रोव्ना के मकान की तरफ से बाड़ लाघकर बगीचे मे आते और आपस मे फुसफुसाते। फिर भी तब तक ख़ामोशी ही थी, जब तक कि नाना चारो ओर देखकर परेशानी से चिल्ला नहीं पड़े

"भैया! यह क्या कर रहे हो तुम लोग—देखो तो रसभरी के तमाम पौदे कुचल डाले? क्या पड़ोसियो से ऐसे ही सलूक किया जाता है?"

नानी हाथ पकड़कर मुझे अदर ले गयी। मैंने पूछा

"उसने क्या किया था?"

वह रोती हुई बोली, "देखा नहीं तूने?"

उस दिन बड़ी रात गये तक तरह तरह के अजनबी लोगो का हमारे रसोईघर तथा उसके पासवाले कमरे मे आना-जाना लगा रहा। कमरे मे पुलिसवालो का बोलबाला था। उनके अलावा एक और आदमी था, जो गिरजाघर का छोटा पादरी मालूम होता था। वह एक किताब में कुछ लिखता जा रहा था। बीच-बीच मे टकारपूर्ण स्वर मे वह पूछता था

"फिर क्या हुआ? फिर क्या हुआ?"

नानी प्यालियों मे चाय डालकर सभी को पिला रही थी। रसोईघर की मेज़ पर बड़ी-बड़ी मूछों वाला, गोल-मटोल चेचकरू आदमी बैठा था, जो खरखरी आवाज़ मे कह रहा था

"उसका असली नाम कोई नहीं जानता। इतना ही पता लग सका है कि वह मेलात्मा का रहनेवाला था। उसका भतीजा गूगा बना हुआ था। पकडे जाने पर उसका मुह खुल गया—उसने सारी कहानी सुना डाली। इन लोगो के साथ एक तीसरा भी था। उसने भी पुलिस मे बयान दिया है। इन सबो का वर्षों से यही रोजगार था। वे ज्यादातर गिरजाघरो पर ही हाथ साफ किया करते थे।"

पेत्रोव्ना पसीने से लथपथ हो रही थी, चेहरा लाल। उसके मुह से निकला, "हे भगवान!"

मैं अलावघर पर लेटा हुआ था। वहा से नीचे बैठे सभी लोग नाटे, मोटे और बदसूरत दिखाई दे रहे थे

१०

एक शनिवार को मैं खूब तडके उठकर पेत्रोव्ना के बाग मे लाल चिडिया पकडने गया। फदा लगाकर मैं बडी देर से इतजार कर रहा था, पर एक भी चिडिया हाथ नहीं आ रही थी। वे लाल सीना ताने, गर्व से इधर से उधर फुदक रही थीं। चारो तरफ बर्फ की चादर फैली हुई थी। अपनी सुदरता के गर्व मे डूबी ये चिडिया उस धवल चादर पर चहलक़दमी कर रही थीं। कोई फुर से उडकर झाडियो मे घुस जाती, जिनकी डालिया बर्फ से झुकी जा रही थीं। डालियो पर झूमती बर्फ की नीली चमक के बीच वे चमकीले फूलो के समान सुदर मालूम पड रही थीं। यद्यपि शिकार हाथ नहीं लग रहा था, पर वहा का दृश्य इतना रमणीक और हृदयग्राही था कि मुझे अफसोस नहीं हो रहा था। सच तो यह है कि मैं सच्चा शिकारी था ही नहीं। शिकार पाने से ज्यादा शिकार करना ही मेरा उद्देश्य हुआ करता था। चिडियों के जीवन के रग-ढग और उनके केलि कौतुक का परिवेक्षण करना ही मेरा प्रधान लक्ष्य होता था।

जाडे का दिवस दर्पण जैसा स्वच्छ होता है। बर्फीली चादर से ढके मैदान के छोर पर अकेले बैठकर जाडे के दिन की पारदर्शी खामोशी मे चिडियो का कलरव, और जाडे की पूर्वसूचना देनेवाली तीन घोडो की बर्फ-गाडी की घटियो की घुनन घुन सुनना बहुत भला लगता है

जब ठंड हड्डियों मे घुसने लगी और ऐसा मालूम हुआ कि कान पाले से जम जायेंगे, तो मैंने जाल और पिंजड़ा समेटा और बाड़ लांघकर घर चला। हमारा फाटक खुला हुआ था और एक लम्बा चौड़ा देहाती एक बड़ी, बंद स्लेज को, जिसमे तीन घोड़े जुते हुए थे, हांके बाहर चला जा रहा था। घोड़ों की देह से भाप उठ रही थी और देहाती मस्त होकर सीटी बजा रहा था। गाड़ी को देखकर न जाने क्यों मेरा कलेजा मुह को आने लगा। मैंने गाड़ीवाले से पूछा

"तुम्हारी गाड़ी पर कौन आया है?"

वह मेरी ओर मुड़ा, उसने मेरी तरफ देखा, स्लेज मे बैठा और बोला

"पादरी साहब।"

पादरी आया है, तो किसी किरायेदार के घर आया होगा—मैंने सोचा।

उधर देहाती घोड़ों को कोड़ा लगाते हुए बोला

"चलो, बेटे!"

घोड़ों ने टांगें हवा मे उछालीं और गाड़ी की घंटी घुनन घुन कर बज उठी। जब गाड़ी निकल गयी, तो मैंने फाटक बंद किया और अंदर दाखिल हुआ। रसोईघर मे पहुचते ही बगल के कमरे मे मा की गम्भीर आवाज सुनायी पड़ी। वह कह रही थी

"तो अब क्या होगा? मुझे फांसी दे दोगे—यही न?"

मुझे कोट उतारने की भी सुधि न रही। हाथ का पिंजड़ा फेंक फाक मैं ड्योढ़ी की ओर लपका। पर नाना ने मुझे पकड़ लिया। आंसू घोटते हुए, आखें फाड़कर उन्होंने मेरी ओर देखा और बोले

"तेरी मा आयी है। जा मिल ले उससे पर ठहर!" यह कहकर उन्होंने मुझे इतने जोर से झकझोर दिया कि मैं गिरते गिरते बचा। इसके बाद मुझे दरवाजे की तरफ ठेलते हुए कहा "जा! जा! अंदर!"

दरवाजे पर पहुचकर मैं सकपका गया। पाले से ठिठुरी, कांपती उंगलियों से कुण्डी खिसक ही न रही थी। किसी तरह दरवाजा खुला तो मैं चौखट पर खड़ा रह गया—बुत बना-सा। मा बोलीं

"अच्छा! यह हैं हजरत! कितना बड़ा हो गया है रे तू। चीन्ह नहीं रहा है मुझे? इस तरह कपड़े किसने पहनाये हैं? और कान तो,

जरा देखो, बिल्कुल सुन्न हो रहे हैं? अम्मा, जल्दी से थोडी हस की चरबी देना तो!"

वह देर तक मुझे सटाये, कमरे के बीच खडी होकर मेरे कपडे बदलती और मुझे गेंद की तरह घुमाती रही। उसके लम्बे चौडे शरीर पर लाल रग की मुलायम और गरम पोशाक थी, जो लबादे की तरह चौडी थी। उसमे बडे बडे काले बटन टके हुए थे, जो कधे से आरम्भ होकर तिरछी रेखा बनाते हुए कमर तक और फिर कमर से एक दम नीचे तक चले गये थे। ऐसी पोशाक मैंने पहले नहीं देखी थी।

उसका चेहरा छोटा तथा अधिक सफेद मालूम होता था। पर आखें पहले से बडी और गहरी तथा बाल ज्यादा सुनहले लग रहे थे। मुह बिचकाते हुए उसने मेरे कपडे एक ओर फेंक दिये और उदात्त स्वर मे बोली

"अरे तू बोलता क्यो नहीं? मा को देखकर खुशी नहीं हो रही है? जरा कमीज तो देखो इसकी? कितनी मैली है! छि!"

इसके बाद वह मेरे कानो पर हस की चरबी मलने लगी। कान दुखने लगे, पर उसके शरीर से आनेवाली फूलो की ताजा सुगध बहुत अच्छी लग रही थी। मै और सटकर उसका चेहरा निहारने लगा। उत्तेजना के कारण मेरे मुह से शब्द नहीं निकल रहे थे। नानी मेरी हरकतो पर टीका टिप्पणी करती जा रही थी। वह शिकायत कर रही थी

"यह बिल्कुल ढीठ हो गया है। अब तो नाना से भी नहीं डरता तेरी ही उपेक्षा का यह फल है, वर्वारा!"

मा ने जवाब दिया

"शिकवा शिकायत बद भी करो, मा! सब ठीक हो जायेगा।"

मा के आगे घर की सारी चीजें फीकी और पुरानी लग रही थीं। मै स्वय नाना से कम पुराना नहीं मालूम हो रहा था। मा मुझे जाघो मे दबाये अपने गरम और भारी हाथ मेरे माथे पर फेर रही थी। बोली

"इसके बाल कितने बढ गये हैं! कटवाने होगे। और अब स्कूल मे भी नाम लिखाना होगा। पढना चाहता है कि नहीं, रे?"

"मै पढ गया हू," मैंने जवाब दिया।

"अभी कुछ और पढ़ना बाकी है   अरे, तू कैसा मजबूत हो गया है?"

यह कहकर और मेरे साथ खिलवाड़ करती हुई वह हसने लगी। उसकी हसी मे स्नेह का सागर उमड़ा पड़ रहा था।

बूढ़े नाना कमरे मे आये, गुस्से से तमतमाया चेहरा और लाल आखें। मा ने ठेलकर मुझे किनारे कर दिया और तीखेपन से बोली

"क्या तू किया? मैं चली जाऊ यहा से?"

नाना खिड़की के पास खड़े होकर नाखून मे बर्फ को खुरच रहे थे–बिल्कुल मौन वातावरण मे ऐसा तनाव आ गया कि मुझे लगा कि मेरे कान और आखें सारे शरीर पर फैल गयी हैं। जी हो रहा था कि खूब जोर से चिल्ला पड़ू और न चिल्ला सकने के कारण कलेजा फटा जा रहा था। नाना रुखाई से बोले

"अलेक्सेई, तू बाहर जा।"

मा ने फिर मुझे अपने पास खींच लिया और बोली

"क्यो?"

"तू कहीं नहीं जायेगी," नाना ने कहा। "मैं मना कर रहा हू   "

वह उठ खड़ी हुई और कमरे का चक्कर लगाने लगी, जैसे आकाश मे सध्याकालीन मेघ का टुकड़ा। नाना की पीठ के पास रुककर उसने कहा

"बाबूजी, मेरी बात सुनिये   "

मुड़कर वह चीख उठे

"चुप रह!"

मा ने अविचल स्वर मे कहा

"देखिये, गरजिये नहीं मुझपर इस तरह।"

नानी, जो सोफे पर बैठी हुई थी, बरबस उठ खड़ी हुई और तर्जनी दिखाकर धमकाती हुई बोली

"वर्वारा!"

और नाना हार खाकर कुर्सी पर धम से बैठ गये और लगे आप ही आप बड़बड़ाने

"यह क्या हो रहा है? यह हो क्या रहा है? मैं कौन हू? यह कैसा खेल-तमाशा है?"

सहसा वह फिर परायी-सी आवाज मे चिल्ला उठे

"वर्वारा!' तूने हम लोगो का मुह काला कर दिया!"

"तू बाहर जा," नानी मुझसे बोली।

खिन्न मन, मैं रसोईघर मे चला गया और अलावघर पर जा बैठा। वहां से दूसरे कमरे की आवाजें सुनाई पड रही थीं। कभी सब एक साथ ही उत्तेजित स्वर मे बोलने लगते थे और कभी चुप्पी का आलम छा जाता था, मानो सब नींद मे बेखबर हो गये हो। उनकी चर्चा का विषय यह था कि मा ने एक बालक को जन्म दिया था, जिसे वह किसी के घर छोड आयी थी। लेकिन यह पता नहीं चल रहा था कि नाना किस बात के लिए नाराज हो रहे थे—इसलिए कि मां ने बिना इजाजत बालक पैदा किया है या इसलिए कि वह उसे दूसरे के यहा छोड आयी है?

अत मे वह रसोईघर मे आये—चेहरा लाल, बाल बिखरे हुए, पस्त। पीछे-पीछे नानी भी आयी। वह अपने ब्लाउज के छोर से आसू पोंछ रही थी। नाना धडाम से बेंच पर बठ गये और लगे दातो से होठ चबाने, जो सफेद पड गये थे। नानी उनके सामने घुटनों के बल बठ गयी। मद और दुखी स्वर मे वह कहने लगी

"बाब, माफ कर दो उसे। ईसा के लिए उसे माफ कर दो। बडे बडे डूब जाते हैं, वह बेचारी किस खेत की मूली है। रईसो और सेठों के घरानो मे क्या ऐसी बातें नहीं होतीं? बेचारी अबला है बाबू, माफ कर दो उसे। कौन है, जिसमे कमजोरी नहीं "

नाना दीवार की ओर खिसक गये, नानी की ओर देखा, व्यग्यपूर्वक मुस्कराये और रोनी आवाज मे कहने लगे

"बेशक, बेशक! भला तुम क्यो न माफ कर देने को कहोगी? कौन अपराध है, जो तुम माफ न कर दोगी? ऊह। शर्म आनी चाहिए तुम्हे!"

इसके बाद झुककर उन्होंने उसके कधे पकड लिये और उन्हें झकझोरते हुए बोले

"ऊपर भगवान है। उसे हम कौन मुह दिखायेंगे? वह पाप का दण्ड दिये बिना नहीं रहता। हमारा तुम्हारा क्या है। चला चली की वेला आ गयी है, लेकिन अब भी चन नहीं, न चन की आशा है।

गाठ बाध लो मेरी बात, भिखमगो की मौत न मरे हम लोग तो कहना?"

नानी ने उनके हाथ पकड लिये और मधुर हसी हसती हुई बगल मे बैठ गयी। बोली

"भिखमगा होना ही बदा होगा, तो हो जायेंगे। भाग्य से क्या डरना? तुम घर मे रहोगे, मैं झोली लेकर निकल जाऊगी। दो मुट्ठियो के लिए मुझे कोई दरवाजे से न फेरेगा। भूखो नहीं मरेंगे हम लोग। इसलिए क्या रखा है इन बातो मे? इनकी चिंता मे देह घुलाना बेकार है।"

अचानक नाना के मुह से एक अजीब-सी आवाज निकली और वह नानी के गले से चिमटकर बालक की तरह सिसकने लगे

"तू भोंदू है, बिल्कुल भोंदू—मेरी अच्छी भोंदू। तू ही तो एक अपनी बची है। तेरी सिधाई पर ईसा की माता भी वारी जायेगी। सब कुछ खोकर भी तू सतोष का पाठ पढ़ने को तयार है। हम लोगों ने इन बच्चों के लिए कौनसा पाप नहीं किया। उनके लिए खून-पसीना एक किया। अब जब कि चला चली की वेला है, तो कुछ नहीं बच रहा। कुछ भी नहीं "

अब और सहना मेरे लिए असह्य हो गया। मैं अलावघर से नीचे कूद पडा। आखो से आसुओं की धारा जारी थी। मैं दौडकर नाना, नानी से सट गया। मेरी खुशी का ठिकाना न था—मा लौट आयी थी और नाना तथा नानी अपार स्नेह से बातें कर रहे थे, अभूतपूर्व दृश्य था। दोनों ने मुझे अपनी बाहो मे भरते, अपने आसुओ से तर करते और प्यार से पुचकारते हुए मुझे भी अपने दुख का साझीदार बना लिया।

नाना मेरे गाल के पास मुह सटाकर अस्फुट स्वर मे कहने लगे

"देखो इस नटखट को, यह भी आ गया। अब इसकी मा आ गयी। अब बूढ़े शतान और गुस्सैल नाना को तू क्यो पूछेगा? लाड लडाने और प्यार से बिगाडनेवाली नानी से भी अब क्यो दीठ मिलायेगा? अरे, तुम लोग "

हम दोनो को एक किनारे करके नाना उठ खड़े हुए। रुष्ट स्वर मे बोले

"सभी हम लोगो को छोडना चाहते हैं। कोई नहीं चाहता कि बुड्ढे-बुढ़िया के पास रहे। सभी अलग रास्ता पकडना चाहते हैं खर, बुला लाओ उसे। वह भी सोच ले। जल्दी से बुलाओ!"

नानी चली गयी और नाना पूजावाले कोने मे जा खडे हुए और सिर नवाकर बोले

"दयानिधान प्रभु! देखा न!"

इतना कहकर उन्होंने जोर से छाती ठोकी। मुझे यह अच्छा नहीं लगा। ईश्वर के सामने इतने अभिमान से बोलना मुझे कभी नहीं भाया।

इतने मे मा आ गयी। उसकी खुशनुमा लाल पोशाक ने कमरे मे उत्फुल्लता का वातावरण उत्पन्न कर दिया। वह मेज के पासवाली बेंच पर नाना और नानी के बीच बठ गयी। उसकी चौडी लाल आस्तीनो ने दोना की पीठ को ढक लिया। वह अत्यन्त नरमी और गम्भीरता के साथ दोनो से बात करने लगी। नाना और नानी मौन होकर उसकी बाते सुन रहे थे। मा की बग़ल मे दोनो इतने छोटे लग रहे थे, मानो वही मा हो और वे दोनो बालक।

भावातिरेक से चूर होकर मैं अलावघरवाले चबूतरे पर ही नींद मे बेखबर हो गया।

उस दिन शाम को नाना और नानी अपनी सबसे अच्छी पोशाक पहनकर गिरजाघर की प्रार्थना मे गये। नाना रगरेजो के मुखिया की शानदार पाशाक और ऊपर मे फर का कोट पहने हुए थे। उनकी ओर आख मारकर नानी मा से बोली

"जरा देख तो अपने बाप को। बकरे की तरह कसे साफ-सुथरे लगते हैं।"

मा खुलकर हस दी।

जब उसके कमरे मे मैं और वह अकेले रह गये, तो वह पर अपने नीचे मोडकर सोफे पर बठ गयी और मुझे बगल मे बठने का इशारा किया। बोली

"इधर आकर बठ। अपना हाल चाल कह। खूब आराम से तो नहीं कटी होगी?"

हाल चाल कैसा है, यह मैं स्वय नहीं जानता था। मा ने पूछा

"नाना खूब मारते हैं न?"

"अब उतना नहीं मारते।"

"सच? अच्छा जो जी मे आये, कहता चल।"

नाना के बारे मे कुछ कहने को मेरा मन नहीं हुआ। इसलिए मैं उसे बतलाने लगा कि इसी कमरे मे एक बडा ही अच्छा आदमी रहा करता था, लेकिन उसे कोई नहीं चाहता था और अत मे नाना ने उसे निकाल दिया। स्पष्टत यह कहानी मां को पसद नहीं आयी। उसने कहा

"कोई और बात बता।"

मैंने उसे पडोस के तीन लडको के बारे मे बताया और कनल द्वारा उनके आगन से अपने निकाले जाने की कहानी कही। मा ने मुझ चिमटाते हुए कहा

"छि। वह आदमी ह या जानवर?"

इसके बाद वह हठात चुप हो गयी और माथे पर बल डालकर, गर्दन हिलाते हुए फर्श की ओर देखने लगी। मैंने सवाल किया

"नाना क्या तुमसे इतना बिगडे हुए हैं?"

"कसूर मेरा ही है।"

"मैं भी यही समझता हू। तुम बच्चे को उनके पास क्या नहीं लायीं? "

वह चौंक पडी। उसकी भौंहो पर बल पड गया और उसने होठ काट लिये। पर दूसरे ही क्षण वह ठठाकर हस पडी और उसने मुझे फिर चिमटा लिया। बोली

"जरा भी अक्ल नहीं है तुझे। ऐसी बात नहीं किया करते, समझा न। इस बात को भूल जाना चाहिए।"

कुछ देर तक वह मुझसे कुछ कहती रही—अजीब तरह की कठोर, गम्भीर बातें—जिनका सिर-पर मैं कुछ नहीं समझ सका। इसके बाद उठ खडी हुई और कमरे मे चहलकदमी करने लगी। उसकी मोटी भौंहें हिल रही थीं और उगलिया ठुड्डी से खेल रही थीं।

मेज पर मोमबत्ती जल रही थी। उसका प्रतिबिम्ब आईने मे झलक रहा था। फर्श पर मन्दी परछाइयां हिल रही थीं, पूजा के कोने मे प्रतिमा के सामने एक दीया जल रहा था। पाले से जमी खिडकियां चादनी मे रुपे की तरह चमक रही थीं। मां चारों तरफ यों देख

रही थी, मानो खाली दीवारो या छत मे कुछ ढूढ़ रही हो। उसने पूछा

"तू कितने बजे सोता है?"

"थोडी देर बाद।"

"ठीक है। आज तो तू दोपहर मे भी सोया है," उसने निश्वास छोडते हुए कहा। मैंने पूछा

"तुम चली जाओगी?"

उसने चकित होकर कहा

"जाऊगी कहा?" इसके बाद मेरा सिर अपने हाथो में लेकर वह इतनी देर तक मेरी आखो मे टकटकी लगाये देखती रही कि मेरे आंसू न रुक सके। मा ने पूछा

"तू रो क्यो रहा है?"

"मेरी गरदन दुख रही है।"

पर दरअसल मेरा कलेजा दुख रहा था। एक टीस के साथ मेरा हृदय कह रहा था कि वह इस घर मे टिकेगी नहीं। उसे जाना ही पडेगा।

फर्श के क़ालीन को परो से एक तरफ ठेलते हुए उसने कहा

"बडा होने पर तू बिल्कुल अपने पिताजी की तरह लगेगा। नानी ने तुझे पिताजी के बारे मे बताया है?"

"हां।"

"वह मक्सिम को जी जान से प्यार करती थी। और वह भी उसे बहुत मानते थे।"

"मैं जानता हू," मैंने कहा।

मा ने मोमबत्ती की ओर देखा और नाक भौं सिकोडकर उसे बुझा दिया।

"यह ज्यादा अच्छा है," उसने कहा।

बिना मोमबत्ती के कमरा और अधिक ताजा और स्वच्छ मालूम पडने लगा। जमीन पर फली मली परछाइयो की जगह छनकर चाद की नीली रोशनी आ रही थी। खिडकी के शीशो पर सुनहला रग प्रतिबिम्बित हो रहा था।

"यहा आने के पहले तुम कहा थीं?"

उसने कई शहरो के नाम बताये, मानो भूली बिसरी कहानी सुना रही हो। साथ ही कमरे मे बाज की तरह चक्कर काटती रही।

"यह पोशाक तुम्हे कहा मिली?"

"मैने खुद तयार की है। मैं अपना काम खुद करती हू।"

मा औरो से कितनी भिन्न है, यह विचार मेरे लिए बडा सतोषदायक था। लेकिन अफसोस की बात यह थी कि वह बोलता ही बहुत कम थी। मेरे पूछने पर ही वह कुछ कहती थी।

थोडी देर बाद फिर मेरे साथ सोफे पर आ बठी और हम दोना देर तक गुप चुप, एक दूसरे से सटे बठे रहे। इतने मे नाना और नानी गिरजाघर से लौट आये—मोमबत्ती और लोहबान की महक मे बसे, शात और स्थिर।

रात के भोजन के वक्त खाने की मेज पर शाति और गम्भीरता का मधुर वातावरण छाया था। कोई जरूरत से अधिक नहीं बोल रहा था और जो बोलता था, वह भी बडी सावधानी से, मानो पास ही कोई बालक सो रहा हो, जो जरा से खटके से भी जग पडेगा।

नाना मुझे धार्मिक शिक्षा दे चुके थे। मा ने अब मेरी सामान्य पढाई की ओर ध्यान देना शुरू किया। उसने मेरे लिए नयी किताबें खरीद दीं, जिनमे से एक का नाम था "रूसी भाषा ज्ञान"। इस किताब से मैंने दो-तीन दिनो मे सामान्य वणमाला सीख ली। अक्षर ज्ञान होते ही मा को मुझे कविताए रटाने का विचार सूझा। उसका यह निणय हम दोनो के लिए निष्ठुर यातना बन गया।

पहली कविता, जो मुझे पढनी पडी, वह यह है

सीधी सादी राह बडी है,
  जिसका ओर न छोर कहीं है
खेता-खलिहानो से होकर,
  बस्ती बस्ती निकल, गयी है
नहीं कुल्हाड़ें, लगी कुदाल,
  दी न किसी ने मिट्टी डाल
सुम और टापें कई हजार,
पडीं कि राह हुई तयार।

इस कविता को सुनाते समय मै सदा 'बडी' की जगह 'चढ़ी,' 'होकर' की जगह 'सोकर' और 'डाल' की जगह 'झाल' कह देता था। मा रुष्ट होकर कहती

"बेवकूफ! राह चढ़ेगी कसे। कह 'सीधी-सादी राह बडी!"

उसकी बात मेरी समझ मे न आती हो, ऐसा न था, फिर भी मेरे मुह से 'बडी' की जगह 'चढ़ी' निकल जाता। मैं स्वय परेशान था।

मा को गुस्सा आ गया। वह कहने लगी, तू जिद्दी है, बेवकूफ है आदि। उसका यह दोषारोपण मेरा कलेजा मसोसने लगा। मैंने पूरी कोशिश की कि उस कम्बख्त कविता के सही शब्द बरजबान हो जायें। मन मे मैंने उन्हें कई बार दुहरा भी लिया और बिल्कुल सही सही। पर ज्योही सुनाने की बारी आती थी, फिर शब्दो का घनचक्कर शुरू हो जाता था। इन पक्तियो के प्रति प्रगाढ़ घृणा से मेरा रोम रोम भर गया। मैंने चिढ़कर उन्हे बिगाडना शुरू किया। अनुप्रासो की मैंने पूरी सूची तयार कर ली और उन्हे बठाने लगा। कविता जितनी ही अधिक ऊटपटाग होती जाती, उतना ही मुझे अधिक सतोष प्राप्त होता।

इस मानसिक खेल का मुझे निष्ठुर परिणाम भी भुगतना पडा। एक दिन जब पढ़ाई बडे सुचारु रूप से चल रही थी, मा ने पाठ के अन्त मे वही कविता सुनाने को कहा। मैंने सुनानी शुरू की, पर मेरे मुह से कविता की जगह शब्दो का निरर्थक प्रवाह बह निकला

टेढ़ी-मेढ़ी रेग रेंग
हींग बेचे तोगे बेंग
अरिया परिया आरपार
सरसर राह हुई तयार।

मुझे कुछ देर के बाद होश आया कि मैं क्या कह रहा हू। मा इस बीच मेज पर हाथ टिकाकर उठ खडी हुई। प्रत्येक शब्द पर जोर देकर वह बोली

"यह कविता कहा सीखी है तूने?"

अपने कारनामे पर मैं स्वय स्तम्भित था। मैंने जवाब दिया

"मैं नहीं जानता।"

"तू खूब जानता है! बता!"

"योही सीख ली।"

"योही! योही कसे?"

"खेल मे।"

"जा, फौरन कोने मे जा!"

"कोने म?"

"हा, कोने मे मैं कहती हू न!" उसने आपे से बाहर होकर कहा।

"किस कोने मे?"

वह मुह से कुछ नहीं बोली, पर उसने मेरी ओर लाल आंखो से ऐसे देखा कि मेरी बची-खुची अक्ल भी गुम हो गयी। वह क्या कह रही है और मैं क्या कर रहा हू, इसका बदहवासी के मारे मुझे होश नहीं रहा। पूजावाले कोने में छोटी-सी गोल मेज रखी थी, जिसपर सूखे सुगधित फूलो तथा पत्तिया वाला गुलदान रखा था। दूसरे कोने मे एक सन्दूक था, जिसपर ऊनी आसनी बिछी हुई थी। तीसरे कोने मे पलग था और चौथे मे दरवाजा। मैंने उसकी आज्ञा का मतलब समझने की जी-तोड कोशिश की, पर बेकार। मैंने कहा

"तुम मुझे क्या करने को कह रही हो?"

वह धम से कुरसी पर बठ गयी तथा अपना माथा और गाल मलने लगी। बोली

"नाना ने तुझे कभी कोने मे खडा किया है या नहीं?"

"कब?"

"कभी भी?" दो बार मेज पर हाथ पटकते हुए वह गरजकर बोली।

"नहीं। मुझे तो याद नहीं है।"

"तू जानता है कि नहीं कि कोने मे खडा करना एक सजा है?"

"नहीं। कोने मे खडा करना सजा कसे है?"

"हे भगवान, इस लडके से पार पाना कठिन है," वह निश्वास छोडकर बोली। "अच्छा यहां आ।"

मैंने पास आकर कहा

"तुम मुझे डांट क्या रही हो?"

"तू क्यो हमेशा कविता को उलट पलटकर पढता है?"

मैंने उसे समझाने की कोशिश की कि मन मे पढ़ने पर कविता

ठीक-ठीक बोलता हू, पर जोर से बोलते ही दूसरे शब्द निकलते हैं।

"तू बात बना रहा है?"

मैंने क़सम खायी कि ऐसी बात नहीं है। पर दूसरे ही क्षण में स्वय सोचने लगा कि शायद मैं सचमुच ही बात बना रहा हू। हठात, थोडा रुककर मैंने पूरी कविता ठीक सुना दी, बिल्कुल ठीक। मैं स्वय आश्चर्यचकित और अभिभूत हो गया।

यह अनुभव करते हुए कि मानो मेरा चेहरा अचानक सूज गया है, कान गर्म और भारी हो गये हैं, सिर मे अप्रिय शोर हो रहा है, मैं शर्म से जलता हुआ मा के सामने खडा था और आसुओ से भीगी आखो से मैंने यह देखा कि मा का चेहरा निराशा से कसे काला पड गया है, होठ भिच गये हैं और माथे पर बल पड गया है।

उसने पूछा

"इसका मतलब? इससे तो यही पता चलता है कि तू बात बना रहा था?" उसका स्वर अपरिचित सा लग रहा था।

"मैं नहीं जानता। अनजाने "

"तुझसे पार पाना कठिन है, भाई," उसने सिर नीचा करके कहा, "जा यहा से।"

वह मुझे नयी नयी कविताए रटाने लगी, पर मेरा मस्तिष्क उन्हे स्वीकार करने से इनकार कर देता था। छदो को तोड-मरोडकर उनकी जगह दूसरे शब्द बठाने की आदत-सी पड गयी, जो लाख कोशिश करने पर भी छूटने का नाम न लेती थी। सहज स्वाभाविक रूप से शब्द आप ही आप विकृत होने लगते थे। सही शब्दो की जगह दूसरे, नये शब्द रेल पेल करते हुए आ जाते थे। अक्सर पूरी की पूरी पक्ति परिवर्तित हो जाती थी। असली पक्ति जोर लगाने पर भी याद न आती थी। मुझे स्मरण है कि राजकुमार व्याजेम्स्की का एक दर्दीला पद मुझे खास तौर से परेशान किया करता था।

भोर भोर से रात ढले तक हाय
बूढे-बुढ़िया, बेवाए और अनाथ

खिडकी तले खडे टुकडे के लिए पसारें हाथ!

मै तीसरी पक्ति हमेशा छोड दिया करता था

गुहारते हैं दिन करुण असहाय।

मा खीझ उठती थी। उसने मेरी स्मरण शक्ति के कारनामो के बारे मे नाना से कहा। वह क्रुद्ध होकर बोले

"बात और कुछ नहीं है। लडका बिगड गया है। उसकी स्मरण-शक्ति बिल्कुल ठीक है। सारे भजन उसे याद हैं, मुझसे भी बेहतर। उसकी याददाश्त पत्थर की लकीर की तरह ठोस है। एकाध बार कसकर पिटाई करो, बस ठीक हो जायेगा।"

मेरी नानी ने भी कहा

"परिया की कहानिया और गीत सब उसे कठस्थ है। गीत और कविता मे फक ही क्या है?"

बात सच थी। मैं महसूस करता था कि क़सूर मेरा ही है। पर ज्योही मैं कोई कविता रटने बठता, दूसरे शब्द तिलचटो की फौज की तरह मेरे मस्तिष्क पर घेरा डाल देते

साझ सकारे मेरे द्वारे
लूले लगडे और बिचारे
रोयें बिलखें हाथ पसारें
अहर गुजारें पहर गुजारें
रोटी मागें दात निपोर
ले जायें पेत्रोव्ना की ओर
उसकी गाय को रोटी देके
और ठीक से पसे लेके
पी-पी के बौरायें नीच
लोटें अली-गली के बीच।

रात को नानी की बगल मे लेटकर मैं कभी किताबों की और कभी अपनी बनायी चीजें उसे सुनाया करता। कभी कभी वह हसने लगती, पर अधिकतर, वह झिडकियो से मेरा स्वागत करती। वह कहती

"तू स्वय देख ले कि चाहने पर सब कुछ कर सकता है। लेकिन बेचारे भिखमगो का इस तरह मजाक़ बनाने का तुझे कोई अधिकार

नहीं है। प्रभु ईसा स्वय भिखमगे थे। यही हाल सभी सतो का भी था।"

जवाब मे मैंने बडबडाना शुरु किया

उफ भिखमगे।
गदे! नगे!
घिन होती है!
नाना से भी!
जी मे कुछ भिनभिन होती है!
हे भगवान!
इनसे कसे छूटे जान?
जान बचे जसे-तैसे भी
भिखमगो से
औ' नाना की कडी छडी से!

नानी बिगडकर बोली

"दुष्ट कहीं का! बडो के बारे मे इस तरह बोलने से जीभ मे कीडे पड जाते हैं। और नाना ने सुन लिया, तो खूब दुर्गति करेंगे तेरी।"

"सुनने दो," मैंने सक्षिप्त उत्तर दिया।

नानी ने मीठे स्वर मे मुझे पुचकारते हुए कहा

"तुझे कभी अपनी बेचारी मा के लिए चिता नहीं होती? उसकी जिदगी तो यो ही पहाड है। और तू है कि नयी आफत बनना चाहता है!"

"उसकी जिदगी क्यों पहाड है?"

"मुह बद कर! ऐसी बातें अभी तेरे जानने की नहीं हैं।"

"मैं जानता हू—नाना ही "

"मैंने कहा न, बद कर मुह।"

मेरे मानसिक कष्ट का ठिकाना न था। ऐसा लगता था कि निराशा का सागर मुझे सदा के लिए निगल जायेगा। पर किसी कारण मैं इस बात को औरो से छिपाना चाहता था। अत मेरा धडका खुल गया

और मैं अधिकाधिक उद्दण्ड होता गया। मा पाठो की सख्या बढ़ाती जाती थी और वे दिनादिन मेरे लिए अधिक मुश्किल होते जाते थे। हिसाब मुझे बहुत आसान लगता था, पर लिखने का काम पहाड मालूम होता था तथा व्याकरण भी मुझे नहीं आता था। यह विचार कि मा के लिए नाना के घर दिन गुजारना अत्यन्त कष्टकर है, मुझे शूल की तरह बेधा करता था। मा हर रोज अधिकाधिक उदास रहने लगी थी। सब को वह इस तरह देखती मानो बरी और बेगाने हो और घटों बगीचे मे खुलनेवाली खिडकी के पास बठी रहती और एकदम मुरझा सी गयी थी। आने पर दो चार दिन तक वह काफी फुर्तीली और ताजादम दिखाई पडी थी, पर अब आखा के नीचे काले गढ़े पड गए थे। अब पहनावा ठीक रखने या बाल काढ़ने की भी उसे सुध नहीं रहती थी। अक्सर वह सारा दिन अस्त-व्यस्त सी रहा करती—पुरानी वास्कट पहने, बाल बिखराये। उसका अनाकर्षक भेष में रहना मुझे बडा अखरता था, क्योकि मेरे विचार मे उसे सदा सुदर, रोबीली और साफ-सुथरी—सभी से बढ़ चढ़कर होना चाहिए था।

पढ़ाते पढ़ाते वह शून्य दृष्टि से दीवार या खिडकी की ओर देखने लगती। सवाल पूछती तो अनमने स्वर मे और जवाब मिलने के पहले ही अन्यमनस्क हो जाती। वह दिनोदिन चिडचिडी होती जा रही थी और बात बात मे मुझे डाट बठती थी। इससे भी मेरे दिल को ठेस लगती थी, क्योकि मा ऐसी होनी चाहिए थी कि सबसे नेक और अच्छी, जसी परियो की कहानी मे।

कभी कभी मैं उससे सवाल करता

"हम लोगो के यहा तुम्हारा मन नहीं लगता?"

"चुपचाप पढ़!!" वह झल्लाकर उत्तर देती।

मैंने देखा कि नाना कोई ऐसा काम कराना चाहते हैं, जिससे नानी और मा दोनो घबडायी हुई हैं। अक्सर वह मा के साथ कमरा बन्द करके चिल्लाते थे। उनकी आवाज गडरिये निकानोर की लकडी की बासुरी के समान ही अप्रिय होती थी। ऐसे ही एक अवसर पर मा ने ऐसे गरजकर जवाब दिया कि उसकी आवाज सारे घर मे गूज उठी। वह बोली

"यह हरगिज, हरगिज नहीं होगा!"

उसने बाहर निकलकर जोर से दरवाजा बद कर दिया। नाना भीतर ही चिल्लाते रह गये।

यह घटना शाम को घटी थी। नानी रसोईघर मे नाना के लिए कमीज सी रही थी और आप ही आप कुछ बडबडाती जा रही थी। जब दरवाजा बद होने की आवाज आयी, तो वह बोली

"हे भगवान! वह किरायेदारों के यहा चली गयी।"

नाना दौडते हुए रसोईघर मे आये और उसके सिर पर एक थप्पड जड दिया। ऐसा करने से खुद उनका हाथ टीस उठा और उसे झटकारते हुए वह फुकार छोडकर बोले

"डायन कहीं की! तू ही ने उसे सब बता दिया है।"

नानी ने अपने सिर का रूमाल सभालते हुए शात स्वर मे कहा

"तुमको न अक्ल आयी, न आयेगी! तुम चाहते हो कि मै गूगी बन जाऊ, लेकिन कहे देती हू कि तुम जो चाल चल रहे हो, मैं वह न चलने दूगी "

नाना उसपर टूट पडे और लगे मुह पर थप्पडो और मुक्को की वर्षा करने। नानी ने उन वारो को रोकने की कोशिश नहीं की, पर जबान नहीं बद हुई

"और मारो, और मारो। मूख कहीं के, जितना जी मे आये पीट लो।"

मैं अलावघर के चबूतरे पर बठा हुआ था। वहीं से मैं नाना के ऊपर तकिया, कम्बल और जूते फेंकने लगा, पर गुस्से मे उन्होने इधर ध्यान नहीं दिया। नानी जमीन पर गिर पडी और वह लातो से उसे पीटने लगे। पीटते पीटते उन्होंने ठोकर खाकर पानी की बालटी गिरा दी। कमरे मे पानी फल गया। वह खो-खो करते हुए उठे, उठकर एक बार पागलो की तरह चारो ओर देखा और इसके बाद कोठे पर भागे। नानी कराहती हुई उठी और बेंच पर बठकर अपने केश ठीक करने लगी। मैं कूदकर नीचे उतरा।

मुझे देखकर वह गुस्से से बोली

"बेवकूफ कहीं का! तूने तकिया और कम्बल गदा कर दिया। उठा इन सब को। तुझे इन बातो मे पडने को किसने कहा? और बुड्ढे का तो दिमाग़ ही फिर गया है।"

14•

सहसा वह चीख उठी और घबराकर मुझे बुलाया। अपना सिर मेरे सामने करके वह बोली

"ज़रा सिर को देख तो, क्यों इतने ज़ोर से दर्द हो रहा है?"

उसके केशों के घने गुच्छों को हटाकर मैंने देखा—बालों का एक क्लिप खाल में धस गया था। उसे खींचा तो एक और क्लिप गड़ा नज़र आया। मेरी उंगलियां बेजान-सी हो गयीं।

"मां को बुला लाना बेहतर होगा," मैंने कहा, "मुझे डर लग रहा है।"

"क्या कहता है रे—मां को बुलायेगा?" नानी चिल्लाकर बोली, "यह तो कह कि खैरियत है कि वह यहां नहीं थी और उसे कुछ नहीं मालूम। और तू है कि उसे बुला लाना चाहता है! भाग यहां से।"

उसने स्वयं उन घने गुच्छों को टटोलना शुरू किया। हुनरमंद, लस बुननेवाली की उंगलियां बालों में दौड़ने लगीं। मैंने भी कलेजा कड़ा करके दो और क्लिप खोज निकाले। मैंने पूछा

"बहुत दुख रहा है?"

"थोड़ा सा। कल गुसलखाने में पानी गरम कर माथा धो डालूंगी।" फिर मुझे फुसलाते हुए बोली

"लेकिन मां से मत कहना। दोनों में यों ही नहीं पट रही है। समझा? नहीं कहेगा न? मेरा लाल दुलारा!"

"नहीं।"

"ठीक। भूलना मत। अच्छा ला, कमरा जल्दी से ठीक कर डालें। और मेरा चेहरा देख ले, उसपर निशान विशान तो नहीं है? नहीं न? बिल्कुल ठीक "

वह फर्श को साफ करने लगी। मेरे हृदय से आवाज़ निकली

"तुम सचमुच महात्मा हो—इतनी मार और यत्रणा सहने पर भी तुम्हारा यह व्यवहार!"

"क्या बकबक कर रहा है तू? सत और महात्मा क्या ऐसी ही जगहों में रहते हैं?"

वह घुटनों के बल होकर फर्श धो रही थी और मैं अलावघर की पैड़ी पर बैठकर सोच रहा था कि नाना को किस प्रकार इसका मज़ा चखाया जाये।

आज पहली बार उन्होंने इस भोंडे और भयानक ढग से मेरे सामने नानी को पीटा था। कमरे मे धीरे धीरे अधेरा छा रहा था और मेरी आखों के सामने उनका लाल चेहरा और हिलते हुए लाल बाल नाच रहे थे। दिल गुस्से से जल रहा था और मैं सोच नहीं पा रहा था कि किस उपाय से ऐसा बदला लू कि उन्हें हमेशा के लिए पाठ याद हो जाये।

इस घटना के दो दिन बाद मैं उनके कोठेवाले कमरे मे जा रहा था, तो देखा कि वह खुले सदूक़ के सामने फर्श पर बठे कुछ काग़ज पत्तर उलट रहे हैं। उनकी बग़ल मे एक कुर्सी पर उनकी जत्री खुली रखी थी। मोटे धूमिल काग़ज के बारह पन्ने अलग महीने की तारीखों के अनुसार चौकोरो मे विभाजित थे और हर चौकोर मे सतो के चित्र बने थे। नाना इस जत्री को बडी हिफाजत से रखते थे। जिस दिन वह मुझपर अधिक मेहरबान होते थे, उसी दिन उसे छूने की इजाजत मिलती थी। उन आकर्षक छोटे-छोटे चित्रो से मुझे भी बडा स्नेह था, क्योकि उनकी जीवनियां मैं कहानी के रूप मे सुन चुका था। किरिक और उलीता, शहीद वर्वारा, पत्तेलमोन तथा अन्यो के जीवन वृत्तात से मैं खूब परिचित था। खास कर ईश्वर भक्त अलेक्सेई के त्यागमय जीवन और उसके बारे मे नानी के भावमय गीतो का मेरे ऊपर गहरा प्रभाव पडा था। इन सकडो सतो को देखकर हृदय को बडी सात्वना मिलती थी। ढाढ़स होता था कि ससार मे त्यागियो का कभी अभाव नहीं रहा है।

मैंने निश्चय किया कि नाना की इस जत्री को काट डालूगा। जब वह एक नीला-सा काग़ज, जिसपर उकाब का चित्र बना हुआ था, पढ़ने के लिए खिडकी के पास गये, तो मैं जत्री लेकर नीचे भागा। वहा नानी की दराज से कैंची लेकर मैं अलावघर पर चढ गया और लगा सतो के सिर काटने। पहली पात का सिर धड से उडा लेने के बाद मुझे अफ्सोस होने लगा। मैं अब सिर छोडकर पूरे चौकोर को काटने लगा। दूसरी पात की कटाई जारी ही थी कि नाना कमरे मे दाखिल हुए। अलावघर की पैडी पर खडे होकर उन्होंने पूछा

"तू किससे पूछकर जत्री उठा लाया है?"

अचानक उनकी दृष्टि कटे हुए चौकोर चित्रो पर पडी, जो चबूतरे पर बिखरे हुए थे। उन्होने उन्हे उठाया, चेहरे के पास ले गये, फेंका,

फिर से उठाया, उनके जबड़े भिंच गये, दाढ़ी हिलने लगी और उन्होंने इतने जोर का फुकारा छोड़ा कि सारे कागज बिखर गये।

मेरी टाग पकड़कर नीचे खींचते हुए वह गरजे

"यह क्या कर डाला तूने?"

मै हवा मे फेंका गया, पर नानी ने मुझे सभाल लिया।

"आज मैं तुझे जान से मार डालूगा," कहते हुए नाना मेरे तथा नानी के ऊपर घूसे बरसाने लगे।

इतने मे मा आ गयी और मुझे कोने मे करके खुद सामने खड़ी हो गयी। नाना के मुक्को को रोकते हुए चिल्लाकर बोली

"दिमाग बेच दिया है क्या? जरा होश से काम लो।"

नाना खिड़की के पासवाली बेंच पर ढह पड़े और छाती पीटते हुए बोले

"तुम लोग सत्यानाश कर डालोगे मेरा। तुम सभी मेरे खिलाफ हो गये हो।"

मा ने शात स्वर मे कहा

"शर्म नहीं आती क्या तुम्हे? तुम यह सब क्या नाटक करते रहते हो? छि!"

नाना फिर गरजने और परो से बेंच पीटने लगे। उनकी दोनो आखें बद थीं और दाढी की नोक हास्यास्पद रूप मे छत की ओर उठी हुई थी। मुझे ऐसा लगा कि वह मा के सामने पागलो जैसा व्यवहार करने के कारण सचमुच लज्जित हैं और इसी लिए उनकी आखें शर्म से बद हैं।

मा ने बिखरे कागजो को बटोरते हुए कहा

"मै इन टुकड़ों को कपड़े पर चिपका दूगी। जब्री पहले से भी बेहतर और अधिक मजबूत हो जायेगी। बिल्कुल फट तो गयी है।"

वह नाना को उसी स्वर मे समझा रही थी, जिस स्वर मे पढ़ाई के वक्त मुझे कठिन पाठ समझाया करती थी। अकस्मात नाना उठ खड़े हुए, उन्होंने सावधानी से अपनी कमीज और वास्कट ठीक की तथा गला साफ करते हुए बोले

"ठीक है, इन्हें आज ही चिपका देना। मैं बाकी पन्ने भी दे जाऊगा "

वह बाहर चले गये। जाने के पहले दरवाजे पर रुककर मेरी ओर टेढी उंगली दिखाते हुए बोले

"इसकी खूब अच्छी तरह पिटाई होनी चाहिए।"

मां ने कहा

"ठीक बात है।" और मेरी ओर मुडकर बोली

"क्यो रे, तुझे यह बदमाशी कहा से सूझी?"

"मैंने जानकर किया है। अगर फिर नानी को मारेंगे, तो अब की मैं उनकी दाढी ही कतर डालूगा।"

नानी अपना फटा हुआ ब्लाउज उतार रही थी। मेरी बात सुनकर वह सिर हिलाती हुई बोली

"क्यो रे, इसी तरह जबान बद रखना सीखा है तूने।" और फर्श पर थूककर कहा, "भगवान करे तेरी जीभ फूलकर तालू से सट जाये, जिससे तेरा बकवास करना ही बद हो जाये।"

मां ने उसे ध्यान से देखा, रसोई में चक्कर लगाया और फिर मुझसे पूछा

"नानी को कब मारा था नाना ने?"

नानी झट टोककर बोली

"छि वर्वारा! तू लाज घोकर पी गयी है। लडके से ऐसी बातें पूछी जाती हैं? तुम्हे इन बातो मे पडने से मतलब?"

मा ने स्नेहपूर्वक उसे गले लगाते हुए कहा

"अम्मा, मेरी प्यारी अम्मा "

नानी रुधे गले से बोली

"छोड मुझे, बडी आयी अम्मा वाली!"

दोनो मौन होकर कुछ क्षण एक दूसरे को देखती रहीं और इसके बाद अलग अलग हो गयीं दरवाजे के पार नाना चले जा रहे थे।

मा जिस दिन आयी थी, उसी दिन से फौजवाले की मनचली बीवी से उसकी खूब पटने लगी थी। प्राय हर रोज शाम को वह उसके यहा जाया करती थी, वहां बेतलेग वालो के यहा से भी लोगो का आना जाना हुआ करता था—सुदर जवान लडकिया, छैले अफ्सर आदि। मेरे नाना को यह पसद नहीं था और अक्सर रात के भोजन के समय चम्मच से उधर इशारा करते हुए वह कहते थे

"देख! आज फिर महफिल जमी हुई है। अब रात भर सोना हराम हुआ।"

शीघ्र ही उन्होंने किरायेदारों को नोटिस दे दिया। जब वे चले गये, तो वह दो गाड़ियों में तरह-तरह की कुर्सियां और मेजें ले आये और उन्हें खाली कमरों में भरकर ताला लगा दिया। हम लोगों से बोले

"इन कमरों में कोई किरायेदार नहीं बसायेंगे। अब हम खुद ही दावत किया करेंगे।"

त्योहारों पर मेहमानों का जुटाव होने लगा। आनेवालों में नानी की बहन मात्र्योना इवानोव्ना भी थी। वह धोबिन थी। खूब लम्बी नाकवाली यह बुढ़िया बड़ी बकवादी थी। वह धारीदार रेशमी पोशाक पहनकर और सिर पर सुनहरे रंग का रूमाल बांधकर आती थी। उसके साथ उसके दोनों बेटे भी आया करते थे। एक का नाम था वासीली। वह नक्शानवीस था। बड़े-बड़े बाल और सलेटी रंग की पोशाकवाला यह नौजवान नेकदिल और खुशमिजाज था। छोटे भाई का नाम वीक्तोर था। उसका सिर घोड़े जैसा था और पतले चेहरे पर झाइयां थीं। ड्योढ़ी में गलोश उतारते समय वह सर्कस के मसखरों की तरह चिल्लाता था

"अन्द्रेई पापा, अन्द्रेई पापा "

मुझे उसके ढंग पर आश्चर्य होता था और डर भी लगता था।

याकोव मामा अपनी गिटार लेकर आते। उनके साथ गंजे सिर और चुप्पे स्वभाव का एक काना घड़ीसाज आता, जो अपने लम्बे काले कोट के कारण पादरी जैसा लगता था। वह हमेशा एक कोने में बैठता था। वहीं गर्दन एक ओर झुकाये और सफाचट चिबुक को उंगली पर टिकाये मुस्कराया करता था। उसका रंग सांवला था और कानी आंख सबको एकटक ताका करती थी। वह बहुत कम बोलता और कोई बात होती, तो कहता

"कोई हर्ज नहीं, कोई हर्ज नहीं—तक्लीफ करने की जरूरत नहीं है! "

जब मैंने उसे पहले पहल देखा, तो बरबस मुझे बहुत दिन पहले का एक दृश्य याद हो आया, जब हम लोग नोवाया सड़कवाले मकान

मे रहते थे। एक दिन सडक पर ढोल नगाडों की भयानक आवाज सुनायी पडने लगी और जेल से एक ऊची, काली गाडी निकलकर चौक की तरफ चली। गाडी को चारो ओर से सिपाहियो तथा जनता की बडी भीड ने घेर रखा था। उसमे एक बेंच पर एक आदमी, जिसकी खोपडी गोल टोपी से ढकी हुई थी और हाथ साकलो से बधे थे, बठा हुआ था। जब उसकी देह हिलती, तो साकले खनखना उठतीं। उसके गले मे एक काली तख्ती लटक रही थी, जिसपर बडे-बडे सफेद अक्षरो मे कुछ लिखा हुआ था। उसका सिर झुका हुआ था, मानो तख्ती के लेख को पढ़ रहा हो।

मा ने घडीसाज से मेरा परिचय कराते हुए कहा

"यह मेरा बेटा है।" पर मैं डर से ठिठक गया और हाथ मिलाने के बदले मैंने उसे पीठ के पीछे छिपा लिया।

वह बोला

"तकलीफ करने की जरूरत नहीं है।" बोलते वक्त उसके मुह का एक कोना डरावने ढग से दाहिने कान की तरफ फैल गया। मेरी पेटी पकडकर उसने फुर्ती से मुझे अपनी ओर खींच लिया और ऐसा तेज झटका दिया कि मैं लटटू की तरह घूम गया। मेरा कमरबद छोडते हुए उसने प्रशसासूचक स्वर मे कहा

"अच्छा लडका है "

मैं चमडे की आराम-कुर्सी मे जमकर बठ गया, जो इतनी बडी थी कि आदमी उसमे मजे से सो सकता था। नाना हमेशा डींग मारा करते थे कि पहले यह आराम-कुर्सी जाजिया के एक राजकुमार की होती थी। उस कोने मे बैठकर मैं महफिल मे रग लाने की बडो की कोशिशें देखा करता था। मैं घडीसाज को भी निहारा करता था। यह बडे रहस्यमय ढग से अपने चेहरे का भाव परिवर्तित किया करता था। उसका चेहरा घिनौना और अजीब-सा था, जो निरतर पिघलकर बहता-सा ज्ञात होता था। जब वह मुस्कराता, तो उसके मोटे होठ दाहिनी तरफ खिसक जाते और छोटी-सी नाक यो डोलने लगती, जसे चाशनी मे पकौडी। उसके बडे-बडे कान भी, जो सदा खडे रहते थे, डोलना शुरू कर देते। कभी वे उसकी सही-सलामत आख की भौंह के साथ तनकर ऊपर चले जाते और कभी लटककर जबडे की हड्डी से सट जाते।

मुझे ऐसा लगता था कि चाहने पर यह आदमी अपने कानों से हथेलियों की भाँति अपनी नाक को ढक सकता है। कभी-कभी वह निश्वास छोड़कर अपनी छोटी-सी काली जीभ बाहर निकालता, जो सरल की लोढ़ी की तरह गोल थी। उसे अपने मोटे, मोमजामे जैसे होंठों के चारों ओर फेरकर वह अन्दर वापस कर लेता था। मुझे उसकी इन क्रियाओं से हँसी से अधिक विस्मय हुआ करता था। इसी से मैं उसे एकटक देखता रह जाता।

मेहमान लोग चाय में 'रम' मिलाकर पीते थे, जिसकी महक जले प्याज जैसी होती थी। वे नानी की हलकी शराबों का भी मजा लेते जाते थे, जो सुनहले, हरे या कोलतार जैसे काले रंगों की होती थीं। इसके अलावा दही और लाजवाब शहद के पुए चलते थे। वे खाते-पीते, माथे से पसीना पोंछते और साथ-साथ नानी की रसोई की तारीफ करते जाते। जब पेट भर जाता, तो सब कुर्सी पर तन जाते—फूले हुए, चेहरे लाल। इसके बाद अलसाये-से याकोव मामा से गितार पर कुछ सुनाने की फरमाइश होती।

वह झुककर तारों पर हाथ फेरना आरम्भ करते और साथ ही अप्रिय आवाज में गीत गुनगुनाना शुरू करते

जैसे-तैसे जी लेते थे
रो-गा के खा-पी लेते थे
हल्ला-गुल्ला भरपूर था
पर असल पहुंच से दूर था
कि आ।।।ईईईई क्वानवाली!
नये मद की खोज में मतवाली!

मुझे तो ऐसा लगता मानो इस गीत में उदासी का सागर लहरा रहा हो। मेरा मन व्यथा से भर जाता। नानी भी कहती

"याकोव, कोई और गीत गाओ, कोई असली गीत।"

फिर अपनी बहन की ओर मुड़कर कह उठती

"माश्योना, तुझे याद है न पहले जमाने के वे रसीले गीत?"

धोबिन लपाक से अपनी सरसरानी पोशाक को ठीक करते हुए कहती

"ग्राजकल नये-नये गीत चलते हैं "

मामा अधमुदी आखो से नानी की तरफ ताक्ते मानो वह दूर, बहुत दूर हो और गिटार के तारो पर अपनी निराशाभरी धुन बजाते जाते। उनका भद्दा-सा गीत जारी रहता।

ऐसी ही एक शाम को नाना घडीसाज के साथ किसी गुप्त मत्रणा मे लीन थे। बीच-बीच मे वह उगलियो से कोई चीज दिखाते जाते थे। घडीसाज ने मा की दिशा मे ताककर सिर हिलाया। उसके तरल चेहरे के भाव विलक्षण ढग से परिवर्तित हो रहे थे।

मा सदा की तरह सेर्गेयेव बधुओ के बीच बैठी थी। वह शात, गभीर स्वर मे वासीली से कुछ कह रही थी, जिसने नि श्वास छोडकर जवाब दिया

"हु! इसके बारे मे सोचना पडेगा "

वीक्तोर के चेहरे पर सतुष्ट मुस्कान फल गयी और पाव हिलाते हुए उसने सहसा पतली आवाज मे गाना शुरू किया

"अन्द्रेई पापा, अन्द्रेई पापा "

सब लोग बातचीत बन्द कर उसकी ओर देखने लगे। उसकी मा ने बडे अभिमान के साथ लोगो को बताया

"यह गीत उसने ठेठर* मे सीखा है। वहा गाया जाता है "

इस तरह की दो-तीन दावतो की मुझे खूब याद है, क्योकि उनमे शाम कटनी मुश्किल हो गयी थी—इतनी उदास और निर्जीव थीं वे। इसके बाद एक इतवार को वही घडीसाज गिरजाघर की प्रार्थना खत्म होने के बाद दोपहर को हमारे घर आया। मैं मा के कमरे मे बैठा सिलाई मे उसकी मदद कर रहा था। वह कमखाब के एक कपडे मे जडे नकली मोतियो को खोल रही थी। यकायक दरवाजा खुला और नानी ने सिर आगे बढाकर घबराये स्वर मे कहा

"वर्वारा, वह आया है!" दूसरे ही क्षण सिर गायब हो गया।

मां न चौंकी, न हिली। एक मिनट के बाद दरवाजा फिर खुला और नाना आकर बोले

"वर्वारा, जरा कपडे पहनकर बाहर आओ।"

---

*ठेठर—थियेटर का गवारू अपभ्रश।

मां ने उनकी ओर देखने या उठने की कोशिश किये बिना पूछा
"कहां?"
"पहले ही बहस मत करने लगो। चुपचाप चली आओ, भगवान तुम्हें सुखी करेगा। यह बहुत बढ़िया कारीगर है और स्वभाव का भी बडा भला है। वह हर तरह से अलेक्सेई का बाप होने योग्य "
नाना असाधारण तपाक के साथ बोल रहे थे और बोलते समय हाथो से जाघ पर ताल देते जा रहे थे। उनकी कोहनिया इस ढग से काप रही थीं, मानो हाथ आगे बढ़ना चाहते थे, पर वह जोर लगाकर उन्हें रोके हुए हों।
मां ने शांत स्वर मे कहा
"मैं कह चुकी हू यह हरगिज, हरगिज नहीं होगा "
नाना तेजी से उसकी ओर बढ़े। उनके हाथ आगे की ओर थे, जसे अधा मार्ग टटोल रहा हो। गुस्से से कापते हुए वह गरजकर बोले
"चलो, नहीं तो झोटा पकडकर ले चलूगा "
"क्या कहा, झोटा पकडकर ले जाइयेगा?"
मा उठ खडी हुई—चेहरे का रग फक और आखो मे चुनौती। अचानक वह अपने कपडे उतारकर जमीन पर फेंकने लगी। जब तन पर केवल शमीज रह गयी, तो वह नाना से बोली
"लो, अब घसीटकर ले चलो मुझे। क़सम है तुम्हें।"
नाना दात निपोडकर उसके मुह के सामने मुट्ठियां भाजने लगे। बोले
"वर्वारा! कपडे पहन लो!"
मा उन्हें ढकेलकर दरवाजे की ओर बढ़ी और बोली
"चलो, मैं चल रही हू।"
नाना सप की तरह फुकारते हुए बोले
"शाप दूगा।"
"परवाह नहीं।"
वह दरवाजा खोलकर निकलने को हुई, पर नाना ने शमीज का कोना पकड लिया। वह घुटनो के बल गिर पडे और फुसफुसाये
"वर्वारा! शतान की बच्ची! मुझे सब के सामने जलील मत कर!" और धीरे धीरे दु खभरे ढग से ठुनकने लगे, "वर्वारा की मा! ओ मां!"

नानी ने पहले ही दौडकर रास्ता रोक लिया था। जिस तरह मुर्गों को दरबे मे हाकते हैं, वसे ही वह मा को अन्दर हटा रही थी। वह बडबडाती जा रही थी

"वर्वारा! पागल हो गयी है क्या तू? जा घर मे, बेशर्म कहीं की!"

मा को कमरे मे ढकेलकर उसने दरवाजे की चटखनी चढा दी और तब नाना की ओर मुडी। एक हाथ से सहारा देकर उसने उन्हें ऊपर उठाया और दूसरा हाथ नचाते हुए बोली

"बुड्ढा पागल। दिमाग खराब हो गया है तेरा।"

कपडे की गुडिया की तरह उसने उन्हें सोफे पर बठा दिया। उनका सिर गुडिया की ही तरह लचक रहा था, होठ खुले थे।

मा को डाटकर नानी बोली

"पहन अपने कपडे।"

मा गिरे कपडो को बटोरते हुए बोली

"मैं उसके पास नहीं जाऊगी, नहीं जाऊगी! जान लो तुम लोग!"

नानी ने मुझे सोफे से नीचे ठेलते हुए कहा

"दौडकर एक गिलास पानी ले आ!"

वह फुसफुसाकर बोली, पर स्वर मे आदेश था, जिसकी अवहेलना करना असभव था। मैं ड्योढ़ी मे दौडा। बाहरवाले कमरे मे कोई चहलकदमी कर रहा था। उधर मा की आवाज कान मे आ रही थी। वह कह रही थी

"कल मैं यहा से चली जाऊगी।"

मैं रसोईघर में जाकर खिडकी के पास बठ गया, स्वप्न मे खोया सा।

नाना काखते-कराहते रहे और अस्फुट स्वर मे नानी का बडबडाना जारी था। उसके बाद दरवाजे के जारो से बद होने की आवाज आयी और फिर भयानक सन्नाटा छा गया। यकायक याद आया कि मुझे पानी लाने के लिए भेजा गया है। झट से एक बनन मे पानी भरकर मैं ड्योढ़ी की तरफ चला। सामनेवाले दरवाजे से घडीसाज साहब निकले जा रहे थे। सिर उनका झुका हुआ था, हाथो से अपनी

बालदार टोपी सहला रहे थे और गले से भर्रायी आवाज निकल रही थी। पीछे-पीछे नानी थी। दोनो हाथ सामने बाधे, झुककर उसे विदाई देती हुई वह शांत स्वर मे बोली

"आप खुद ही समझ सकते हैं--जबदस्ती तो किसी के दिल में आपके लिए जगह बनायी नहीं जा सकती!"

वह चौखट के पास आकर लडखडाया, फिर आगन के पार हो गया। नानी दरवाजे पर खडी होकर सलीब का चिह्न बनाने लगी। उसकी देह हिल रही थी--पता नहीं सिसकिया भरने के कारण या हसी से।

मैं दौडकर उसके पास गया और पूछा "क्या बात है?"

उसने मेरे हाथ से लपककर पानी का बतन ले लिया, जिससे पानी छलककर मेरे पाव पर गिर पडा।

"कहा चला गया था तू पानी लाने? जल्दी से दरवाजा बद कर दे," नानी बोली!

वह मा के कमरे मे लौट गयी और मैं रसोईघर मे। वहा से उनके कराहने, नि श्वास छोडने और फुसफुसाने की आवाजें सुनायी पड रही थीं, मानो दोना किसी भारी चीज को कमरे मे खिसका रही हो।

आज मौसम बडा सुहाना था। चारो ओर जाडे की धाम फली हुई थी। उसकी चमकीली किरणें दोनो खिडकियो के बफ जमे शीशे से कमरे के अदर झाक रही थीं। मेज पर खाना परोसा हुआ था। जस्त की तश्तरिया किरणा के प्रकाश मे चमक रही थीं। शीशे की सुराही मे सुनहले रग का क्वास भरा था। दूसरी मे नाना की वोदका रखी थी, जिसमे स्वाद के लिए मसाले की सुगधयुक्त हरा पत्तिया डली थीं। खिडकी के शीशे पर जमी बफ एक जगह गोलाकार पिघली हुई थी। उसके पार घरो की छतो पर बिछी बफ की चादर सूरज रोशनी मे जगमगा रही थी। पक्षियो के दरबे और चारदीवारी के खभों के ऊपर भी उसी तरह बफ की टोपिया जगमगा रही थीं। खिडकी पर पिजडो मे मेरी पालतू चिडिया धूप मे खेल रही थीं। कमरे मे 'गफिचो' और 'बुलफिचों' का कलरव और 'गोल्डफिच' की मीठी तान गूज रही थी। लेकिन शीत की सुनहली धूप और चिडियो के गान में मुझे तनिक भी रस नहीं आ रहा था। मन आज इस आनद का स्वागत करने को तयार न था। जी मे आया कि पिजरो के द्वार खोल दू और

कर दू पछियों को आज़ाद। मैं पिंजड़ो को उतारने लगा। इतने मे नानी दौड़ी हुई कमरे मे आयी। उसे अचानक याद आया था कि अलावघर में केक गरमाने के लिए रख आयी थी। वह चिल्लाकर बोली

"सत्यानाश! मैं भी कसी भुलक्कड हू!"

उसने अलावघर मे से केक निकाल लिया। उसकी पपडी जलकर काली हो गयी थी। उसे हाथ से थपथपाते हुए उसने गुस्से से थूका

"हो गया खत्म! अब खाओ गरम-गरम केक! सब शतान हैं! सत्यानाश हो तुम्हारा! उल्लू कहीं का! तू यहां बैठा क्या ताक रहा है टुकुर-टुकुर! सब को उठाकर पटक दू।"

वह रोने लगी। केक की पपडी के टुकड़ो को उलटती-पुलटती, उगलियों से ठोकती, वह उन्हें आंसुओ से तर कर रही थी।

मां और नाना अदर आये। नानी ने जले हुए केक को इतने जोर से मेज पर दे मारा कि रकाबिया झनझना उठीं। बोली

"देखो! तुम लोगो के कारण यह क्या हो गया है। सत्यानाश हो तुम्हारा!"

मा अब स्वस्थ और प्रसन्नचित्त दीख रही थी। वह नानी को गले से लगाकर शांत करने लगी। नाना थके हारे से लग रहे थे। वह मेज पर बठ गये, गमछा गले मे लपेट लिया और सूरज की किरणो के कारण सूजी आखो को सिकोडते हुए अस्फुट स्वर मे बोले

"छोडो भी! बहुत खाया है केक हम लोगो ने। ईश्वर आजकल कजूस हो गया है। वर्षों का भुगतान मिनटो मे चाहता है और सूद नदारद। वर्वारा! चलो इधर आकर बठो छोडो इन बातो को।"

ऐसा लगा कि उन्हें खब्त सवार हो गया है। जितनी देर तक खाना चलता रहा वह ईश्वर, अधर्मी अहाब और पिता होने की तकलीफों का बखान करते रहे। अत मे नानी ने बिगडकर उन्हे टोका

"ओह! क्या बक-बक लगाये हुए हो तुम! चुपचाप खाओ भी।"

मा हसने लगी। उसकी उज्ज्वल आखो मे खुशी की झलक थी। मुझे हलकी थपकी देकर वह बोली

"डर गया था न तू?"

नहीं, तब तो मैं बहुत नहीं डरा था, पर अब मुझे कुछ अजीब सा लग रहा था, माजरा समझ मे नहीं आ रहा था।

पर्व-त्योहारों पर सभी खूब डटकर भोजन करते थे और बड़ी देर तक। आज भी यही हुआ। यह विश्वास करना कठिन था कि यही लोग केवल आधा घंटा पहले एक दूसरे पर इस क़दर गरज-बरस रहे थे, हाथापाई करने को तैयार थे, सिसक और आंसू बहा रहे थे। न यही विश्वास होता था कि उन्होंने यह कुछ गम्भीरतापूर्वक किया था, कि इनके लिए रोना मुश्किल है। क्षण भर मे घर मे तूफान मच जाता और क्षण ही मे सब ऐसे शात हो जाते, मानो कुछ हुआ ही न हो। यह उस घर की आम कैफियत थी। मैं भी उसका आदी हो गया था। पहले की तरह अब मैं इस सबसे व्यथित नहीं होता था।

बहुत दिनो बाद मैंने महसूस किया कि रूसी अपनी ग़रीबी और जीवन की नीरसता के कारण ही ऐसा करते हैं। व्यथा और रंज उनके मनबहलाव के ज़रिये हैं। बदनसीबी बच्चों की तरह उनका खिलौना है, जिससे अपनी बदक़िस्मती पर उन्हें बहुत कम ही शर्म आती है।

जब जीवन की धारा एकरस बहती है, तो विपत्ति भी मन बहलाने का साधन बन जाती है। घर मे आग लग जाना भी नवीनता का रस प्रदान करता है। कहावत भी है "सादे चेहरे पर मस्सा भी अलंकार होता है"।

११

इस घटना के बाद परिवार मे मा की प्रतिष्ठा बढ़ गयी। वही घर की मुखिया बन गयी और नाना अपना स्थान खोकर शात और अलग-थलग हो गये, जो कि उनके चरित्र के प्रतिकूल था।

वह अब घर से बहुत कम बाहर निकलते थे और ज़्यादातर कोठेवाले कमरे मे पड़े एक रहस्यमय पुस्तक पढ़ा करते थे, जिसका शीर्षक था—मेरे पिताजी की कुछ टिप्पणिया। इस किताब को वह अपने खास सदूक़ मे ताला लगाकर बन्द रखते थे। मैंने कई बार देखा कि उसे निकालने से पहले वह अपने हाथ धो लेते थे। किताब छोटे आकार की, मोटी-सी थी, चमड़े की लाल जिल्दवाली। मुखपृष्ठ हल्के नीले रंग का था। उसपर काली स्याही से, जिसका रग मिट चला था, लिखा था—माननीय वासीली काशीरिन को सादर एव सप्रेम। उसके नीचे किसी के अपरिचित हस्ताक्षर थे, जिसके अक्षर पख फैलाकर उड़ते

पक्षियो जसे ज्ञात होते थे। नाना चमडे की मोटी जिल्द उलटने के बाद बडी सावधानी से रुपहली कमानी का अपना चश्मा चढ़ाते और देर तक उक्त लेख पर नजर गडाये रहते। इस बीच कई बार नाक सिकोडकर वह चश्मे को ठीक करते। मैंने उनसे बहुत बार इस किताब के बारे मे पूछा, पर हर बार वह यही जवाब देते थे

"यह सब अभी तेरे जानने की चीज नहीं है। थोडे दिन और ठहर जा—जब मै मरुगा, तो यह किताब और अपना फर का कोट तुझे दे जाऊगा।"

अब वह मा से कम बोलते थे और बोलते भी थे तो अदब से। जब मा कुछ कहती थी, तो वह कान लगाकर उसकी बात सुनते थे और इस बीच प्योत्र श्काका की तरह कुछ बडबडाना, हाथ नचाना और आखें झपकाना जारी रखते और फिर हाथ झटककर कहते "ठीक है! जसा चाहती हो, वसा करो "

उनके सदूको मे अनेक अदभुत पोशाके भरी हुई थीं—कमखाब के घाघरे, साटिन की वास्कटें, सोने की तारकशी के कपडे, बिना बाह के कुरते, जिन्हे 'साराफान' कहते हैं, मोतियो के काम की पगडीनुमा टोपिया, चटकीले रगो के रूमाल और गले के छोटे दुपट्टे, मोटे दानो के मोर्दोवी हार और रगबिरगे नगो के मनके। इन कपडो को लाकर वह मा के कमरे मे मेज और कुर्सियो पर सजा देते। मा उनकी तारीफ करना शुरू कर देती, तो वह कहते

"हमारे जमाने मे लोग बडी सज धज से रहा करते थे। अब तो वह दिखायी नहीं पडता। उस वक्त बेशकीमत कपडे पहनने का रिवाज था। पर साथ ही रहन सहन सादा था और आपस मे आज से ज्यादा मेल जोल भी रहा करता था। अब वह जमाना लौटकर आने को नहीं है पहनकर देखो इन्हे "

एक दिन मा बगल के कमरे मे जाकर सुनहरे कामवाला गहरे नीले रग का साराफान और मोतियो से जडी पगडीनुमा टोपी पहनकर आयी। नाना को बाअदब सलाम करते हुए उसने पूछा

"पसद आया हुजूर को?"

नाना मुह बाकर मा को देखने लगे। उनका चेहरा गव से चमक उठा और मा को चारो तरफ से निहारकर कहने लगे

15—615

"गजब है वर्वारा! काश तू किसी अमीर घर मे पैदा हुई होती और नजदीक कोई क़द्रदान होता "

घर के आगेवाले दोनो कमरो पर अब मा का अधिकार था। वहा वह अक्सर अपने मेहमानो का स्वागत किया करती थी। आगंतुकों म अधिकतर दोना मक्सिमोव भाई, प्योत्र नाम का एक विशालकाय ख़ूबसूरत फौजी अफसर और येव्गेनी नामक उसका भाई रहा करते थे। अफसर की दाढ़ी खूब बडी और सुनहरी थी, आखें नीली। बड़े आदमी के गजे सिर पर थूकने के कारण इसी अफसर के सामने नाना ने मेरी मरम्मत की थी। येव्गेनी भी लम्बा था, पर उसका चेहरा पीला था और टागें पतली। उसकी छोटी-सी नुकीली, काली दाढी थी। उसकी बडी-बडी आखें काले आलूबुखारो जसी थीं। वह सदा हरी वर्दी पहने रहता था, जिसमे सुनहले बटन लगे हुए थे। कम चौड़े कंधों पर सुनहरा फीता टका हुआ था। उसके लम्बे घुघराले बाल ऊचे ललाट पर लटक आया करते थे। वह उन्हे झटककर ऊपर फेंक दिया करता था। साथ ही वह इस तरह मुस्कराया करता था, मानो सब के ऊपर कृपा के कण बिखेर रहा है। अपनी फटी-सी आवाज मे वह सदा कुछ न कुछ बोलता ही रहता था। उसका तकिया-कलाम था

"मुझसे पूछते हो, तो मेरा दृष्टिकोण यह है "

मा आखो को आधा मूदकर उसकी बातें सुनती और अक्सर बीच ही मे टोककर कह बठती

"येव्गेनी वासील्येविच! क्षमा कीजियेगा, पर अभी आप बच्चे हैं "

"बिल्कुल ठीक अभी बच्चा ही है," विशालकाय अफसर, अपनी बात पर जोर देने के लिए जाघ पर हाथ पटकता हुआ, झट बोल उठता।

बडे दिनो की छुट्टियां ऐसी ही रगरलियो मे बीतीं। लगभग हर रोज शाम को मा और उसके मित्र रग-बिरगी पोशाकें पहनकर लोगो से मिलने मिलाने जाया करते थे। इन अवसरो पर मा की पोशाक सबसे शानदार हुआ करती थी।

इस मस्त टोली के फाटक से बाहर होते ही, घर भयानक सन्नाटे मे डूब जाता, मानो धरती मे समा गया हो। नानी कलहस की तरह

कमरो मे चक्कर काटने और सामानो को झाडने-बुहारने मे लग जाती और नाना अलावघर की गर्म टाइलो से पीठ सेकते हुए अपने आप से कहते

"ठीक है, गाडी जसे चलती है चलने दो। यह भी देख ही ले। क्या हाथ लगता है इससे "

बडे दिनो की छुट्टियो के बाद मा ने मेरा और मिखाईल मामा के बेटे साशा का नाम स्कूल मे लिखा दिया। साशा के बाप ने दूसरी शादी कर ली थी और नयी मा ने आते ही साशा के साथ बुरा सलूक करना आरम्भ कर दिया था। वह उसे बुरी तरह पीटा करती थी। अन्त मे नानी ने नाना से कहकर साशा को अपने पास बुला लिया। हम दोनो एक महीने तक साथ-साथ स्कूल जाते रहे। इस अरसे मे हमे जो कुछ सिखाया गया, उसमे से केवल एक बात मुझे याद है। वह यह कि नाम पूछने पर केवल 'पेशकोव' कहकर जवाब देना काफी नहीं है, कहना चाहिए, "मेरा नाम है पेशकोव।"

दूसरे, यह सीखा कि शिक्षक से यह नहीं कहना चाहिए

"देखिये महाशय! इस तरह डाटिये मत। मैं आपसे नहीं डरता "

मुझे स्कूल बिल्कुल पसद नहीं आया। इसके विपरीत मेरे ममेरे भाई की तबीयत वहां खूब लगने लगी। उसके वहां बहुत-से दोस्त निकल आये। लेकिन एक दिन पढ़ाई के वक्त उसे नींद आ गयी और सपने मे डरावने स्वर मे चिल्ला उठा

"नहीं-नहीं, मैं नहीं करूगा "

नींद खुलते ही उसने कमरे से बाहर जाने की इजाजत मागी, जिसपर लडको ने उसे बहुत चिढ़ाया। दूसरे दिन जब हम लोग स्कूल चले, तो सेनाया चौकवाले सूखे नाले पर पहुचकर वह खडा हो गया और मुझसे बोला

"तू जा, मैं नहीं जाता। आज मैं घूमने जाऊगा।"

उसने वहीं बर्फ मे अपनी किताबें गाड दीं और चल दिया। जनवरी का महीना था और धरतीतल धूप मे जगमगा रहा था। ममेरे भाई को घूमने जाते देख मेरा भी मन ललचाया, पर इस ख्याल से कि मां को दुख न हो जी दबाकर स्कूल चला गया। स्वभावत साशा की किताबें

को बर्फ मे से किसी ने निकाल लिया। अत अगले दिन स्कूल न जाने का उसे असली बहाना मिल गया। तीसरे दिन नाना को मालूम हो गया कि वह स्कूल नहीं जाता।

हम दोनो का मुकदमा पेश हुआ। भोजन की मेज पर बैठकर नाना, नानी और मा ने जिरह करनी शुरू की। साशा ने नाना के सवाल के जो अनूठे उत्तर दिये थे, वे मुझे याद है। नाना ने पूछा

"तू स्कूल क्यो नहीं गया था?"

विनीत आखो से नाना के साथ नज़र मिलाकर उसने जवाब दिया

"मैं स्कूल का रास्ता भूल गया।"

"रास्ता भूल गया?"

"हा। मैं इधर से उधर भटकने लगा "

"तू अलेक्सेई के पीछे-पीछे क्यो नहीं गया? उसे तो रास्ता याद था।"

"अलेक्सेई भी आख से ओझल हो गया था।"

"अलेक्सेई भी ओझल हो गया था?"

"जी।"

"ऐसा क्यो कर हुआ?"

साशा ने एक क्षण सोचा और फिर नि श्वास छोडकर उत्तर दिया

"बर्फीली आधी चलने लगी, इसलिए मुझे कुछ दिखाई नहीं दिया।"

सभी लोग हस पडे, क्योकि उस दिन खुलकर धूप निकली थी-बादल-बदली का नामोनिशान न था। साशा के होठो पर भी हलकी मुस्कान उठी, पर नाना ने दात निकालकर व्यग्यपूर्ण स्वर मे सवाल किया

"तूने उसका हाथ या पेटी क्यो नहीं पकड ली?"

"हाथ पकड तो लिया था, पर आधी ने अलग फेंक दिया।"

वह धीरे धीरे और हताश स्वर मे सवालो के उत्तर दे रहा था। वह बिल्कुल बेअक्ल की तरह झूठ बोलता जा रहा था। मैं हैरान था समझ ही मे नहीं आ रहा था कि वह क्या इतनी ढिठाई कर रहा है।

हम दोनो पर कसकर मार पडी और इसके बाद एक पेंशनयाफ्ता दमकलवाला हमे स्कूल पहुचाने के लिए रखा गया, जिसका हाथ टेढा था। उसका काम यह देखना था कि साशा ज्ञान विज्ञान के पथ से भटक न जाये। लेकिन यह तरकीब व्यथ साबित हुई। अगले दिन जब हम लोग नाले पर पहुचे, तो मेरे ममेरे भाई ने परो से नमदे के लम्बे जूते निकाले और एक दाहिनी ओर तथा दूसरा बायीं ओर फेंककर खुद केवल मोजे पहने चौक की ओर भागा। हमे पहुचाने के लिए रखा गया बूढा पहले मुह बाकर देखने लगा, फिर जूतो को उठाने दौडा। जूते खोजने के बाद डर के मारे मुझे लेकर वह घर लौट आया।

दिन भर नाना, मा और नानी शहर मे भगाडे की खोज करते रहे। शाम को वह मठ के पास, चिरकोव की मधुशाला मे मिला। वहा वह नाच दिखा रहा था। पकडकर उसे घर लाया गया। घर पर आकर उसने चुप्पी साध ली – किसी सवाल का जवाब ही नहीं, न हा न हू। हताश लोगो ने उसे मारने-पीटने का खयाल भी छोड दिया। अलावघरवाले चबूतरे पर मेरी बगल मे लेटा हुआ पर हवा मे उछालता हुआ वह कहने लगा

"न सौतेली मा मुझे चाहती है, न पिताजी और न दादा। फिर मैं उन लोगो के साथ क्यो रहू? मुझे दादी से ज्योही पता लग जायेगा कि डाकू लोग कहा रहते हैं, मै उनके पास ही भाग जाऊगा। तब तुम्हे भी अफसोस होगा। बोल, तू भी चलेगा मेरे साथ?"

उसके साथ भागना मेरे लिए असम्भव था। उस वक्त मेरे मन मे दूसरा ही मनसूबा था – मैं अफसर बनना चाहता था, जिसकी बडी-सी सुनहरी दाढी हो और इस काम मे सफलता प्राप्त करने के लिए पढना आवश्यक था। मैंने साशा को अपना यह मनसूबा बता दिया। एक क्षण सोचने के बाद उसने सहमति प्रकट की। बोला

"यह भी अच्छी बात है। तू अफ्सर हो जायेगा और मैं डाकुओ का सरदार। तू मुझे गिरफ्तार करने निकलेगा और हम दोनो मे से या तो कोई मारा जायेगा या गिरफ्तार कर लिया जायेगा। तब मैं तुझे मारूगा नहीं।"

"मैं भी तुझे नहीं मारूगा।"

हम लोगा ने यही त किया।

तब तक नानी भी ग्रा गयी ग्रौर ग्रलावघर के ऊपर चढकर हम लोगो से बाते करने लगी। उसने दुलार से कहा

"मेरे छौने! लाल! दुलारे।"

हम लोगो की हालत पर रहम करते-करते वह साशा की सौतेली मा मोटी नावेज्दा मामी को, जो किसी भटियारखानेवाले की बेटी थी, बुरा भला कहने लगी। इसके बाद उसने सभी सौतेली माम्रा ग्रौर सौतेले बापो को कोसना ग्रारम्भ किया। इसी पर उसने वीर साधु यूनस की कहानी छेड दी, जिसने बाल्यावस्था मे ही ग्रपनी पापिन सौतेली मा को भगवान के दरबार मे दड दिलाया था। उसका पिता बेलोग्रोजेरो झील का मछुग्रा था, जिसने

स्यारन सी जोरू पायी थी, जो डायन सी लील गयी,
दारू का चसका दे दे कर डाले होश हवास हवा
पिला पिला के धुत्त किया, फिर मुह मे धर दी एक दवा
जिसने ऐसा ग्रसर किया, तत्काल कुम्भकर्णी छायी
पति को गहरी नींद सुला वह ताबूती डोगी लायी
बाध-बूध डोगी मे डाला, ख ुद चप्पू को थाम लिया
ग्राधी झील पार करके ही दम लेने का नाम लिया,
मझधारे मे जहा धार हारी हारी सी बहती थी
झुझलायी-सी ग्रौर झवायी, झखमारी-सी बहती थी,
मानो बाट जोहती सी हत्यारन की सहमी-सहमी
सोच-सोच कर गडी-गडी बेहया नार की बेरहमी,
वहीं पापिनी डोगी से उतरी कगार पर भार देकर
फिर डोगी को उलट दिया ख ुद भी तो डुबकी खायी, पर
बेचारा पति ग्रतल तले मे जा डूबा जैसे पत्थर
ग्रतरजामी के सिवाय जाना न किसी ने यह चक्कर,
पति डूबा पत्नी तेजी से तर के लगी किनारे पर
पुक्का फाड लगी रोने रेती पर लोट-पोट होकर,
जिसको इतनी निममता से मारा ग्रपने हाथा ग्राप
उसका ले ले नाम लगी करने दिखावटी करुण विलाप,
सुनके लोग जुटे, सबके सब करने लगे दिली ग्रफसोस

कावक्ली के रण्डापे पर रोये प्राण मसोस-मसोस,
हा, तेरी यह भरी जवानी! यों न फूटती थी तक्दीर!
हा, इतनी दारुण निक्ली तुझपर विधना की स्याह लकीर!
लेकिन क्या करना है?—जीना-मरना लगा हुआ है साथ,
सुख-दुःख जीवन-मरण हमारे सब उस परमपिता के हाथ!

* * *

सब थे दुःखी, सिर्फ उसका सौतेला पूत इयोनुक्का
उसके धार धार आंसू के भयरजाल में आ न सका,
उसकी छाती पर धर के वह अपने नन्हे-नन्हे हाथ,
बोला उसके कानों में चुपके से धिक्कारों के साथ
ऐ ठगल की पुतली, त्रिया-चरित्तर की चालों की खान,
दगाबाज ऐ निसाचरी, यह झूठ-मूठ रोदन मत ठान,
घड़ों बहा ले भले, आंसुओं पर किस तरह करूं विश्वास,
खुशियों-बांसों उछल रहा जब तेरा दिल छाती के पास,
आओ, चलें करें फरियादें, सरग अदालत के इजलास
परमपिता से और देवताओं से चलो करें अरदास
सान चढ़े छुरे को कोई फेंके आसमान की ओर,
जितनी भी ताक़त हो उसका लगा भिड़ा कर सारा जोर
यदि हो मेरा दोष—छुरा मेरी गरदन पर अपना काम करे
यदि हो तेरा दोष—छुरा फिर तेरा काम तमाम करे
धीरे से सौतेली अम्मा जरा सौतिया पूत की ओर मुड़ी
घिन्ना कौंधी मुद्रा से घूरती दिखी कुछ कुढ़ी-कुढ़ी
फिर उठ कर इयोना के आगे सीना ताने खड़ी हुई,
बोली बात, डाह के—बदले के—माहुर से कढ़ी हुई
उल्लू है तू रे अकालजमा, बबूल का पिल्ला है।
ठुनगाभिन जादुई हुण्डारन की उधार का पिल्ला है,
यह क्या बकबक है? किस घण्डूखाने की गप लाया है,
तेरी जीभ ने जाल झूठ का यह कैसा फैलाया है!
उसके रंग ढंग देखे तो दंग रह गये सारे लोग
सुना गुना, समझा कि दाल में काला सा लगता है जोग,
बकर-बकर मुंह लगे ताकने, लगे सोचने आपो आप

जहर भरे बोलो के पीछे छिपा हुआ है कोई पाप,
रग भाप कर लाग मुहोमुह गुपचुप करने लगे विचार
निकल भीड से खडा हुआ कोई बूढा मछुआ सरदार,
चारो ओर खडे भाईबदो को झुक कर किया सलाम,
और मान भारी शब्दो मे अर्ज किया यह फर कलाम
नेक भाइयो, मेरे हाथो दे दो सान चढी तलवार
और सभी के आगे ही मैं फेंकू उसे गगन के पार,
थके पच ऊपर परमेसुर, हो जावेगा सत्त नियाव
लौटी धार करेगी पापी के ऊपर ही मारक घाव,
सतजुगिया बूढे के हाथो लाके धरी गयी तलवार
पके छुराये सिर के चारो ओर माज कर उसकी धार
बूढे बाबा ने उसको उडियाया मेघलोक के पार,
जाने कहा अलोप हुई वह उन्नचिरैया सी उड कर
बडी देर तक राह निहारी गयी कि अब आयी मुड कर,
गगन अटा की अमल छटा लख लख के आखें पथरायी
तनी-तनी गरदनें अकड सी गयीं पुतलिया चौधायीं,
लोग भीड कर सट आये, टोपिया उतर आयीं सर की
लोग मौन हो खडे रहे, औ' मौन रात चुपके सरकी,
इसी तरह भिनसार हुई, फिर झील मे प्रथम किरण कौंकी
टौंकी उधर सौतेली अम्मा, औ' इधर वह पचायत चौंकी,
इतने मे कौंधती लवा सी औचक उतर पडी तलवार
हत्यारन के ऐन कलेजे भौंचक उतर पडी तलवार,
झट घुटनो टेक ध्यान धरके बठे धरमी मछए
दीन भाव से परमपिता के पूत प्रार्थनालीन हुए,
धन्य धन्य भगवान तुम्हारे न्याव धरम की जय जयकार!
फिर बूढे मछुए ने अपने पास इयोना को लिया पुकार,
साथ लिया, लेके पहुचा उस तपसी मठ मे दूर-सुदूर
वेर्जेनेत्स नदिया के तट पर, जहा बरसता तपका नूर,
कथा पुराणो की प्रसिद्धिवाली कीतेज नगरी के पास *

तम्बोव प्रदेश के बोरिसोग्लेब्स्की जिले के कोल्युपानोव्का गाव मे मैंने इस कहानी का एक और ही पाठान्तर सुना था। उसमे छुरी

दूसरे दिन नींद खुलने पर देखा कि देह मे लाल लाल दाने निकल आये हैं। चेचक का भयानक प्रकोप हुआ था। लोग मुझे कोठे के पीछेवाले कमरे मे ले गये। हाथ और पैरो मे चौडी पट्टी बाध दी गयी। आख से कई दिनो तक सुझायी नहीं पड़ता था। वहा पडा मैं बीमारी से लडता रहा। रोज अजीब अजीब भयानक सपने आते थे। एक दिन ऐसे ही सपने के चलते मेरे प्राण जाते जाते बचे। इस अकेले कमरे मे केवल नानी मेरे नजदीक आया करती थी। छोटे बच्चो की तरह वह चम्मच से मुझे खाना खिलाती और तरह-तरह के किस्से-कहानिया सुनाया करती थी। मै अच्छा होने लगा। हाथ पाव की पट्टी खोल दी गयी थी। केवल उगलियो पर दस्तानो के रूप मे पट्टिया बाध दी गयी थीं, ताकि मैं घावो को खरोच न सकू। एक दिन शाम को नानी के आने का वक्त हो गया, फिर भी वह न आयी। मुझे बडी चिन्ता हुई। सहसा मुझे ऐसा मालूम हुआ कि नानी कोठे की सीढी पर मुह के बल पडी हुई है, धूल मे लथपथ। उसके दोनो हाथ फले हुए हे और प्योत्र काका की तरह गदन आधी कटी हुई है। पास के अधेरे मे एक बडी-सी बिल्ली, हरी हरी आखें फाडे नानी की ओर बढी चली आ रही है।

मै चारपाई से उछला और परो और कधो के धक्के से दोहरी खिडकी को चूर कर नीचे कूद पडा। जहा मै गिरा, वहा बफ का एक ढेर जमा था। मा की उस वक्त दावत चल रही थी। इसलिए किसी ने खिडकी टूटने या मेरे गिरने की आवाज न सुनी। फलस्वरूप मै काफी देर तक इसी तरह बफ पर पडा रहा। गिरने से हड्डी नहीं टटी, केवल कधो के जोड उखड गये और कई जगह शीशे से बुरी तरह कट गया। पर गिरने की धमक से मेरे पाव बहुत दिनो के लिए नाकारा हो गये। लगभग तीन महीने तक चलना फिरना असम्भव हो गया। मैं दिन भर कमर मे अधचेतन पडा घर मे पहले से अधिक चहल पहल, दरवाजो के पहले से अधिक खुलने और बन्द होने तथा लोगा के कहीं ज्यादा आने जाने की आहट सुनता रहता था।

लौटकर सौतेले बेटे की ही छाती के पार हुई बतायी गयी है, क्योंकि उसने अपनी सौतेली मा पर झूठा इलजाम लगाया था। —ले०

बड़े जोर का जाड़ा था। बर्फ की आंधियां छतों को कपा देतीं। कोठे के दरवाजे के बाहर हू-हू कर बहती हवा खिड़की की झिलमिली को खड़खड़ाती। चिमनी से ऐसी आवाज होती, मानो निर्जन मैदान में कोई मातम मना रहा है। दिन भर मैं कौओं का कांव-कांव सुना करता। रात को दूर खेतों में भेड़ियों का रोदन सुनायी पड़ता। इसी संगीत के सुरों में मेरी आत्मा परिपक्वता प्राप्त कर रही थी। इसके बाद शर्मीली चाल से वसन्त का आगमन हुआ। धीरे-धीरे, किन्तु अधिकाधिक खुलकर वह खिड़कियों की राह अपनी चमकीली आंखों से झांकने लगा। छत पर और बरसाती में बिल्लियां जोर से चीखने चिल्लाने लगीं। दीवार के उस पार से विविध अस्फुट स्वरों में वसंत के आगमन का संकेत सुनायी पड़ने लगा। कभी पेड़ों में लटकी बर्फ की चूड़ियां खटके के साथ भूमि पर चू पड़तीं, कभी छत पर जमी बर्फ की सिल्लियां फिसलकर जमीन पर आ जातीं। घण्टियों की घनघनाहट में भी अब नयी टंकार थी, जो जाड़ों में नहीं सुनायी दिया करती थी।

नानी मुझे देखने आयी। आजकल उसके मुंह से प्रायः वोदका की दुर्गंध निकला करती थी। कभी-कभी वह एक बड़ी-सी उजली चाय दानी लाकर मेरी चारपाई के नीचे छिपा देती और कनखी मारकर कहती

"बबुआ! नाना से मत कहियो!"

मैंने पूछा, "तुम पीती क्या हो?"

"श्श श्श!" करते हुए वह बोली, "चुप! बड़ा होने पर तू खुद ही जान जायेगा।"

इसके बाद चायदानी की टोंटी से एक घूंट लेकर वह आस्तीन से मुंह पोंछती। चेहरे पर आनन्द से मधुमय मुस्कान छा जाती। मेरी ओर मुड़कर वह कहती

"हां तो साहबजादे! कल मैं क्या सुना रही थी तुझे?"

"मेरे पिताजी के बारे में।"

"कहां तक कहा था?"

मेरे जवाब देने के बाद उसकी सुरीली वाक्धारा आरम्भ हो जाती। और मैं उसके रस में सराबोर हो जाता—घंटों के लिए।

पिताजी की कहानी उसी ने छेडी थी। उस दिन पीने को नहीं मिला था और वह उदासचित्त थी। बोली

"रात सपने मे तेरे बाप को देखा। हाथ मे छडी लिये वह सीटी बजाता हुआ खेतो मे टहल रहा था। पीछे-पीछे जीभ लपलपाता हुआ एक चितकबरा कुत्ता था। न जाने क्यो, आजकल मक्सिम साव्वातेयेविच बहुत सपनो मे आ रहा है—लगता है उसकी आत्मा अशान्त होकर भटक रही है "

इसी के बाद पिताजी की कहानी का क्रम आरम्भ हुआ, जो कई गामों तक चलता रहा। नानी की सभी कहानिया की भाति यह कहानी भी अतीव रोचक थी।

पिताजी के पिता फौजी सिपाही थे, जो तरक्की पाते हुए अफसर के ओहदे तक पहुच गये, पर उसके बाद ही अपने मातहतो के साथ बेरहमी का सलूक करने के कारण उन्हे साइबेरिया भेज दिया गया। साइबेरिया मे ही मेरे पिताजी का जन्म हुआ। बाबा बचपन से ही उन्हे बडी निष्ठुरता के साथ पीटा करते थे। फलस्वरूप उन्होने कई बार घर से निकल भागने की कोशिश की। एक बार वह जगल मे जा छिपे। बाबा ने उनके पीछे शिकारी कुत्ते छोड दिये, मानो वह खरगोश रहे हों। एक बार पकडे जाने पर उन्होने पिताजी को इतनी बेरहमी से पीटना शुरू किया कि पडोसियों ने आकर छुडाया और उन्हे छिपा दिया। मैंने पूछा

"क्या बच्चा को सदा से इसी तरह पीटने का रिवाज है?"

नानी ने शान्त स्वर मे जवाब दिया

"हा।"

वह बहुत छोटे थे, जब उनकी मा मर गयी। नौ वर्ष की उम्र मे बाप की भी मृत्यु हो गयी। इसके बाद उनका लालन-पालन उनके धर्मपिता द्वारा हुआ, जो बढई का काम करते थे। उन्होने पेर्म नगर मे उनका नाम बढ़इयो के सघ मे लिखा दिया, लेकिन पिताजी वहा से भाग गये। कुछ दिन वह बाजारो मे अधो को रास्ता दिखाया करते थे। लेकिन १६ वर्ष की उम्र मे वह नीज्नी नोव्गोरोद चले आये जहा कोलचिन के स्टीमरो मे वह एक बढ़ई की मातहती मे काम करने लगे। बीस वर्ष की उम्र होते होते वह लकडी का सामान बनाने और कुर्सी,

सोफे आदि मे गद्दी लगाने और कपड़ा चढ़ाने के काम मे उस्ताद हो गये। वह जिस दुकान मे नौकरी करते थे, वह नाना के कोवालिया सड़कवाले मकाना की बग़ल मे थी।

"इसके बाद की कहानी बिल्कुल सादी है," नानी ने हँसकर कहा। "घरो की चहारदीवारियाँ तो बहुत ऊची नहीं होतीं और लोग साहसी होते हैं। एक दिन मैं और वर्वारा बगीचे मे रसभरी चुन रही थीं कि सहसा देखती क्या हू कि तेरा बाप चारदीवारी के अन्दर दाखिल है। मेरी अक्ल गुम—क्या करू, क्या न करू? वह सेब के वृक्षो का झुरमुट पार कर हमारे पास आया। लम्बा चौड़ा, तन्दुरुस्त शरीर, केवल उजली कमीज और मख़मली पतलून पहने हुए। न पाव मे जूते, न सिर पर टोपी, लम्बे लम्बे बाल चमड़े के फीते से बधे हुए। और जानते हो हजरत आये किस लिए—यह कहने के लिए कि 'वर्वारा को मुझसे ब्याह दो'। इसके पहले मैंने उसे दो एक मतबा खिड़की के पास चक्कर लगाते हुए देखा था। उसे देखकर मेरे मन मे हुआ करता था कि 'लड़का है बड़ा सुदर।' मैंने उससे कहा, 'पहले तो यह बताओ, नौजवान, कि किसी भले आदमी के घर आने का क्या यही रास्ता है?' वह झट घुटना के बल मेरे सामने बैठ गया। बोला, 'अकुलीना इवानोव्ना! मेरा जीवन तुम्हारे हाथा मे है—चाहो तो इसे रख लो, चाहो ख़त्म कर दो। वर्वारा तुम्हारे सामने है, उससे भी पूछ लो। प्रभु ईसा के नाम पर, किसी तरह हम दोनो का विवाह करा दो। यह काम तुम्हारे ही वश का है।' मै उसका प्रस्ताव सुनकर अवाक रह गयी—देखो तो भला इस लड़के को! नजर उठाकर देखती हू तो तुम्हारी मा सेबो के झुरमुट मे छिपी हुई उसे इशारे कर रही है। छछूदरी का चेहरा लाल रतनार जसे रसभरी का दाना, और आखो मे छलछल आसू। 'यह क्या सत्यानाश किया तूने मूख छोकरी,' मैंने कहा, 'तेरा सिर फिर गया है।' और तेरे बाप से मैंने कहा, 'साहबज़ादे! होश है तुम्हे कि क्या कर रहे हो? कुछ हैसियत को भी सोचा है अपनी?' उन दिना तुम्हारे नाना पैसेवाले आदमी थे—जायदाद का बटवारा नहीं हुआ था, उनके पास चार मकान थे, इसके अलावा काफी रुपया भी था। अपने समाज मे अच्छी प्रतिष्ठा थी। कुछ ही दिन पहले उनके नौ वष तक रगरेजो के मुखिया रह चुकने

के उपलक्ष्य मे समारोह मनाया गया था और तुम्हारे नाना को सब ने मिलकर कलाबत्तू का बन्द गले का शानदार कोट और टोपी भेंट की थी। उन दिनो उनके रोब दाब का ठिकाना न था। मैंने सारी बात समझायी तेरे बाप को। मेरा कलेजा थर थर काप रहा था, साथ ही दोनो की हालत देखकर तरस भी आ रहा था—दोनो के चेहरे मुरझा गये थे। सारी बाते सुनने के बाद तेरा बाप बोला, 'मै जानता हू कि वासीलो वासील्येविच अपनी मर्जी से कभी वर्वारा को मुझसे नहीं ब्याहेंगे, इसलिए मुझे उसका अपहरण करना होगा। इसी काम मे हम लोग आपकी मदद चाहते हैं।' वर्वारा के अपहरण मे मेरी मदद? जरा सोच तो! मैंने उसे टरकाने की कोशिश की, पर वह भला कब टलनेवाला था? बोला, 'मुझे पत्थरो से मारो, पर मदद मेरी करनी ही होगी तुमको। मैं हरगिज हार नहीं मान सकता।' इसके बाद वर्वारा भी वहा आ गयी और उसके गले मे हाथ डाल कर बोली, 'हम लोग पति पत्नी बन चुके हैं—मई से ही। केवल विवाह की रस्म बाकी है।' यह सुनने के बाद मुझे काटो तो खून नहीं। ऐसा लगा कि दोना ने मेरे सिर पर लाठी जमा दी है।"

नानी की पूरी देह हसी से काप रही थी। उसने नाक मे नास डाली, आखें पोछीं और आनन्दोच्छवास के साथ बोली

"विवाह और विवाह के बिना पति पत्नी होने मे क्या अन्तर है, इसे तू बडा होने पर समझेगा, लेकिन बिना विवाह किसी लडकी के बच्चा होना भयानक बात है। इस बात को बडे होने पर याद रखना। किसी कुमारी लडकी को भूलकर भी ऐसी आफत मे मत डालना। ऐसा करेगा तो भारी पाप लगेगा—उस लडकी की जिन्दगी बरबाद हो जायेगी और जो बच्चा होगा, वह भी हरामी कहलायेगा। नानी की इस बात को हरगिज मत भूलना। स्त्रियो पर तरस खाना, उन्हें हृदय से प्यार करना, केवल क्षणिक सुख का साधन मत समझना। मेरी यह सीख याद रखना।"

वह दो क्षण के लिए विचारो मे डूब गयी। इसके बाद सभलकर फिर कहना शुरू किया

"मैं बडी उलझन मे पड गयी। मक्सिम को मैंने चपत लगाया और वर्वारा का झोटा पकड कर खींचा, पर मक्सिम ने अक्ल की बात

कही, 'मारने से अब क्या होगा?' और छोकरी भी बोली, 'पहले इसका कोई उपाय निकाल दे, फिर पेट भर पीट लेना हम दोना को।' आखिर मैंने मक्सिम से पूछा, 'अच्छा यह तो बताओ कुछ पसे-वसे भी हैं तुम्हारे पास?' वह बोला, 'पसे तो थे, पर सब मैंने वर्वारा के लिए अगूठी खरीदने मे खर्च कर दिये।' मैंने पूछा, 'कितने पसे रहे होगे-यही तीनेक रूबल?' वह बोला, 'नहीं, ये तो सौ रूबल थे, पर मैंने सबकी अगूठी खरीद ली।' सौ रूबल की अगूठी? और वह भी उस सस्ती के जमाने मे। मैं दोना का मुह देखने लगी। कसे बेअक्ल हैं ये! तेरी मा बोली, 'मैंने अगूठी तेरे डर से फश मे जडी लकडी के नीचे छिपा दी है। उसे बेचा जा सकता है।' यह दूसरा लडकपन हुआ! सचमुच दोनो अभी बिल्कुल बच्चे थे। खर, त पाया कि हफ्ते के अन्दर विवाह हो जाये। मैंने पादरी से बात ठीक करने का जिम्मा लिया। इसके बाद तो मेरे आसुओ का तार टूटने को ही न आता था। चौबीसो घण्टे तुम्हारे नाना का भय लगा रहता था। और वर्वारा भी डर से थर-थर कापा करती थी। किसी तरह सारा इतजाम पक्का हो गया।

"लेकिन कारखाने का एक मिस्तरी था, जो दिल का बडा काला था। वह तेरे बाप से बर रखता था। वह बहुत दिनो से दोनो पर नजर रखे हुए था। उसने सारा मामला भाप लिया। बेटी को मैंने नयी पोशाक मे सजाकर चुपके से फाटक के बाहर निकाला। थोडी ही दूर पर तीन घोडो वाली बग्घी खडी थी। वह उसमे बठ गयी। मक्सिम ने सीटी से इशारा किया और गाडी रवाना हो गयी। मैं घर से लौटी, तो आखें आंसुओ से तर हो रही थीं। लेकिन ड्योढ़ी मे खडा हुआ वही दुष्ट मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। वह बोला, 'अकुलीना इवानोव्ना! मैं बडा सीधा आदमी हू और नहीं चाहता कि मेरे कारण दोना के सुख मे बाधा पहुचे। मुझे तुम पचास रूबल दे दो, तो काम चल जाये।' लेकिन पैसे मेरे पास कहा? पसे रखने का मुझे शौक न था, इसलिए एक पाई भी जमा नहीं करती थी। अत मैंने कहा, 'भाई, मेरे पास पसे ह ही कहां कि तुम्हें दे सकू।' वह बोला, 'अच्छा तो तुम वादा करो कि बाद मे दे दोगी,' 'वादा?' मैंने जवाब दिया। 'वादा करने पर भी रुपया कहा से आयेगा मेरे पास?' तब

वह बोला, 'तुम्हारा पति इतना पैसेवाला है। उससे चोरी चोरी क्या तुम कुछ पसे पार नहीं कर सकतीं?' लेकिन मैं ऐसी बेग्रक्ल कि उसे बाता मे लगाकर नहीं रखा, बल्कि उसके मुह पर थूककर घर के अन्दर चली गयी। वह आगन मे दौडा और इसके बाद तो ऐसा हल्ला मचा कि कुछ पूछो मत।"

उसने पलके मूद लीं और चेहरे पर एक हल्की-सी मुस्कान खेल गयी।

"उस हल्ले की याद से आज भी कलेजा काप उठता है। तुम्हारे नाना सुनते ही ऐसा तडपे जसे घायल बाघ। उनके सारे मनसूबो पर पानी फिर गया था। वर्वारा को देखकर वह अक्सर अभिमान से कहा करते थे कि इसकी शादी किसी रईस या लाट से करूगा। मिल गये यही उनके लाट साहब! पर जोडी बनाना आदमी के वश की बात नहीं है। यह तो मा मरियम का काम है। तुम्हारे नाना आंगन मे इस तरह दौडने लगे, मानो आग ने घेर लिया हो। चिल्लाकर उन्होंने याकोव, मिखाईल, कोचवान क्लिम और छाइयोवाले उस मिस्तरी को जमा किया। देखता हू कि उन्होने चमडे के पट्टे से बधा हुआ लोहे का टुकडा ले लिया। मिखाईल ने बन्दूक ले ली। घोडे हम लोगो के बडे तेज थे और घर की हल्की फुल्की बग्घी भी खूब तेजी से चलती थी। मैंने मन ही मन सोचा कि आज दोनो पकडे गये तो खर नहीं। पर उसी समय वर्वारा के इष्ट देवताओ ने मुझे एक अक्ल सुझायी। मैंने चाकू लेकर बग्घी के बम के पास रास को काट दिया, ताकि रास्ते मे गाडी खुल जाये। और यही हुआ। रास्ते मे बम अलग हो गया। तुम्हारे नाना, मिखाईल और क्लिम मरते मरते बचे, पर इसका नतीजा यह हुआ कि रास्ते में उन्हे देर हो गयी और जब वे गिरजाघर मे पहुचे, तो भगवान की कृपा से वर्वारा और मक्सिम का विवाह सम्पन्न हो चुका था। दोनो गिरजे के बरामदे मे एक दूसरे का हाथ थामे खडे थे।

"इसके बाद तो सभी मक्सिम पर टूट पडे। पर वह सयो से तगडा था—वसी ताक़तवाले आदमी कम मिलते हैं। मिखाईल को उसने बरामदे से बाहर ढकेल दिया, जिससे उसकी बांह मुडक गयी। क्लिम को भी उसने पटक दिया। नतीजा यह हुआ कि तेरे

नाना, याकोव और उस मिस्तरी की हिम्मत नहीं पडी कि आगे बढें।

"पर गुस्से के बावजूद मक्सिम ने बुद्धि से काम लिया। नाना से वह बोला, 'लोहे का यह टुकडा रख दो। मैं नहीं चाहता कि लडाई झगडा हो। जो भी मैंने प्राप्त किया है प्रभु की मर्जी से और अब किसी को उसे मुझसे छीनने का अधिकार नहीं है। इसके अलावा मुझे तुमसे और कुछ नहीं चाहिए।" सब लोग उसकी बात सुनकर पीछे हट गये। नाना बग्घी मे जा बैठे और वहीं से चिल्लाकर बोले, 'वर्वारा यह आख़िरी विदाई है। आज से तुम न मेरी बेटी, न मै तुम्हारा बाप। और न अब मैं तुम्हारा मुह देखूगा। आज से मैंने यही समझ लिया कि तुम जिन्दा भी हो तो मेरे लिए मरी समान।' घर आकर उन्होने मुझे पानी पी पीकर कोसा और अच्छी तरह मेरी पिटाई भी की। पर मैंने चू तक नहीं की। मै जानती थी कि जो होना था, वह हो गया और धीरे धीरे यह तूफान ठण्डा हो जायेगा। थोडे दिनों के बाद वह मुझसे बोले, 'अकुलीना, आज से समझ लो कि बेटी हमारा सदा के लिए चली गयी और ससार मे हमारी-तुम्हारी कोई लडकी नहीं है।' और मै मन ही मन सोच रही थी, 'बक ले, लालमुहे बुड्ढे, जो जी मे आये बक ले। तेरा तो पानी का बुलबुला है। देखती हूँ कितनी देर ठहरता है तेरा गुस्सा!'"

मैं सास रोककर कहानी सुन रहा था। कहानी के कुछ अशो से मुझे अचम्भा हुआ, क्योंकि नाना ने मा के विवाह की कहानी बिल्कुल दूसरी ही तरह से बतायी थी। यह जरूर है कि वह इस विवाह के विरुद्ध थे और उसके बाद मा को घर आने से मना कर दिया था, पर उनकी कहानी के अनुसार विवाह गुप्त रूप से नहीं हुआ था और वह स्वय गिरजाघर मे उपस्थित रहे थे। किसका ब्योरा सही और किसका गलत है, यह मै नानी से पूछना नहीं चाहता था, क्योंकि अधिक रोमानी होने के कारण मुझे नानीवाला ब्योरा ही अधिक पसन्द था। कहानी कहते वक्त वह अपनी पूरी देह डोलाती जाती थी, मानो नाव पर बैठी हो। कथानक का भयानक या अफ्सोसनाक अश आने पर उसका डोलना अधिक तेज हो जाता और वह एक हाथ इस तरह ऊपर उठा लेती जैसे वार बचा रही हो। अक्सर वह पलकें मूद लेती।

उस वक्त उसकी भौंह हिलने लगतीं और झुर्रीदार गालो पर मनमोहक मुस्कान फल जाती। वह किसी का अपराध नहीं गुनती और सच्ची सहृदयता के साथ सभी को माफ कर देती थी। यही बात मेरे मम को छू लिया करती थी। अक्सर ऐसे मौके आते जब मै अपेक्षा करता था कि उसके मुह से रोष के कड़ुवे शब्द निकले।

कहानी जारी रही, "तो, पहले दो हफ्ते तक मुझे पता नहीं चला कि मक्सिम और वर्वारा कहा हैं। इसके बाद एक लडके की माफ्त उन्होंने एक सदेश भेजा। अगले शनिवार को गिरजाघर मे प्रार्थना के बहाने मै घर से निकली और उनके पास गयी। वे बहुत दूर, सुएतिस्की सडक पर एक मकान के उपगृह मे रहते थे। आगन के चारो ओर तरह तरह के मजदूर रहा करते थे। हर ओर गदगी और शोरगुल का राज था, पर उन दोनो को मानो इसकी खबर ही न थी। वे अपनी ही दुनिया मे डूबे हुए थे—बिल्ली के बच्चों की तरह अपनी ही क्रीडा कौतुक मे मस्त। मैं उनके लिए थोडी चाय और चीनी, कुछ दलिया, मुरब्बा, आटा और सूखी खुमिया ले गयी थी। कुछ रुपये भी थे—मुझे याद नहीं कितने, पर नाना से जितने भी चुराना सम्भव हो सका था, सभी ले गयी थी। चोरी करना बुरा नहीं, बशर्ते अपने लिए न की जाये। तेरा बाप इन उपहारो को देखकर बिगड गया। बोला, 'हम लोग क्या भिखमगे हैं कि यह सामान लायी हैं।' और वर्वारा भी लगी उसी के सुर मे सुर मिलाने। बोली, 'मा, यह सब करने की जरूरत?' लेकिन खर, सामान मैंने उन लोगो के पास छोड ही दिया। मैंने तेरे बाप से कहा, 'तुम्हे अक्ल नहीं है। भगवान ने मुझे तेरी मा की पदवी दी है।' और वर्वारा से कहा, 'मूख कहीं की। तू मेरे पेट की जनी है। यह किस किताब मे लिखा है कि मा की देन लौटा दी जाये। धरती पर मा का इस तरह अपमान होने से आकाश मे प्रभु की मा रोने लगती है।' मेरी बात सुनकर मक्सिम ने मुझे गोद मे उठा लिया और लगा कमरे मे कूदने, बल्कि मुझे लिये ही एक बार तो उसने नाच भी दिखा दिया। था भी वह भालू की तरह तगडा! और अपने उस पति को लेकर वर्वारा इतनी इतराती थी कि कुछ मत पूछो। धरती पर मानो पाव ही नहीं पडते थे। बात-बात मे वह 'अपने घर' का ऐसे प्रसग छेडती जसे असली गृहिणी हो। मेरे

तो मारे हसी के पेट मे बल पड गये। चाय के वक्त नयी गृहस्थिन की कलई खुल गयी। छेने की टिकिया ऐसी पकी थीं कि चबाने मे भेडिये के दात भी बेकाम हो जायें। और घर का बना छेना बेहद सख्त था।

"बहुत दिनों तक यही क्रम चलता रहा। तू पेट मे आ गया था, पर नाना तेरे अब भी ऐसी चुप्पी साधे हुए थे कि पूछो मत। बड़ा स्वभाव का पुराना ज़िद्दी जो ठहरा। मैं चुपके से उन लोगो से मिल आया करती थी। उन्हे यह बात मालूम थी, पर अब भी ऐसा बने हुए थे, मानो उन्हे खबर नहीं है। घर मे किसी को वर्वारा का नाम तक लेने की इजाज़त नहीं थी और न कोई उसका नाम लेता ही था। मैं भी नहीं। पर मन ही मन मैं खूब समझती थी कि बाप का दिल ज्यादा दिन तक ऐसे ही कठोर रहने का नहीं। और आखिर यही हुआ। एक रोज रात को भयानक बर्फीली आधी उठी हुई थी। हवा खिडकियो पर भूखे भेडिये के झुण्ड की तरह टूट रही थी। चिमनियों से सिसकारी की भयानक आवाज उठ रही थी। मालूम होता था कि प्रलय की रात आ गयी है। तेरे नाना और मैं पलग पर लेटे हुए थे। आखो मे नींद नहीं। मैंने कहा, 'आज की रात ग़रीबो के लिए क़त्ल की रात है और जिनके सिर पर चिंता सवार है, उनके लिए तो और भी।' हठात नाना पूछ बठे, 'क्या हाल है दोनो का?' मैंने जवाब दिया, 'ठीक ही है। कट रही है किसी तरह।' यह बोले, 'मैं किसके बारे मे पूछ रहा हू?' मैंने झट कहा, 'अपनी बिटिया और दामाद के बारे मे। और किसके बारे मे?' बोले, 'यह तुमने कसे जान लिया?' मैंने जवाब दिया, 'बाबू? बस भी करो इस खेल को। बहुत हो चुका। तुम्हीं बताओ इससे नुकसान किसका हो रहा है?' उन्होंने दाघ निश्वास छोडा। बोले, 'तुम सबके सब दुष्ट हो। एक नम्बर के दुष्ट।' फिर पूछा, 'उन बुद्धूराम का क्या हाल है,' (मतलब, तेरे पिता का) 'वह सचमुच ही बुद्धू है क्या?' मैंने कहा, 'बुद्धू तो वह है, जो काम धाम से वास्ता न रखे और मुफ्तखोरी में जिंदगी काटे। देख लो अपने याकोव और मिखाईल को—असली बुद्धू वे हैं। घर का बोझ किसके ऊपर है? कौन कमाकर लाता है? तुम! और ये दोनों जसी मदद करते हैं तुम्हारी, वह तुम जानते हो मा वे।' यह सग

मुझे बुरा भला कहने—चुडल, कुतिया, बिचौलिया आदि जो भी आया। मैं चुप लगाकर सुनती रही। बोले, 'तू ही उसके चक्कर मे पडी। न उसके घर का पता है न कुल का।' मैंने दम साध लिया—निकाल लो सारा गुबार! जब वह थक गये, तो मैंने कहा, 'एक बार जाकर देख क्यो नहीं आते तुम उन लोगो को। कितने ठाठ से हैं वे?' वह बोले, 'मैं क्यो अपनी इज्जत गवाऊ? उन्हे आना है, तो वे ही आ जायें यहा।' उनके मुह से यह निकलते ही मै मारे खुशी के रो पडी। वह लगे मेरी चोटी सहलाने—मेरी चोटी उन्हे बहुत प्यारी थी। बोले, 'न रो, बुद्धू, मेरा कलेजा क्या तू पत्थर का समझती है?' सचमुच तेरे नाना का पहले तो सोने जैसा दिल था। जब से उन्हे यह घमण्ड पैदा हो गया कि मेरे जसा कोई नहीं है, तभी से उनमे ओछापन और जड बुद्धि समा गयी।

"आखिर एक दिन तेरे मा-बाप घर आये। उस दिन 'क्षमा रविवार' का पर्व था। दोनो इतने हृष्ट पुष्ट, स्वच्छ और सुदर थे कि देखते ही बनता था। मक्सिम तेरे नाना की बग़ल मे खडा था। और तेरे नाना थे कि उसके कधे से भी नीचे। वह बोला, 'वासीली वासील्येविच! आप यह मत सोचियेगा कि मैं दहेज लेने आया हू। दहेज-वहेज मुझे नहीं चाहिए। मै केवल अपनी पत्नी के पिता के नाते आपको प्रणाम करने आया हू।' उसकी इन बातो से नाना का मन पसीज गया। वह हसते हुए बोले, 'शैतान, लुटेरा कहीं का! लेकिन अब छोडा पागलपन की ये बाते। अब डेरा डण्डा उखाडकर चुपके यहीं आ जाओ।' मक्सिम के माथे पर बल पड गया। बोला, 'यह वर्वारा की मर्जी पर है। वह जो चाहे सो करे—मेरे लिए जसे यह वैसे वह।' इसके बाद दोनो लगे बहस करने। न यह चुप होने को तयार, न वह। मैं कनखियो से और मेज के नीचे पर से इशारे पर इशारे कर रही हू, पर वह भला अपनी कहे बिना कब रुकनेवाला? उसकी आखें ऐसी सुदर थीं कि क्या कहू—कटोरे जसी, स्वच्छ। ऊपर काली काली भौंहें। कभी-कभी उसके माथे पर बल पड जाता और चेहरा ऐसा कठोर हो जाता जसे काठ। उस वक्त मजाल क्या कि मेरे सिवा किसी की बात पर कान दे। मै उसे अपने बेटो से बढ़कर प्यार करती थी और वह इसे जानता था और मुझे भी जी जान से मानता था। कभी कभी मुझे

गले से लिपटाकर या गोद मे उठाकर वह कमरे के चारो ओर चक्कर लगाने लगता और कहता, 'तुम्हीं मेरी असली मा हो—धरती मया जसी। मै तुम्हे वर्वारा से भी अधिक प्यार करता हू।' उन दिना तेरी मा भी बडी चुलबुली थी—पूरी छछूदर। वह टूट पडती बचारे पर और कहती, 'क्या कहा, फिर तो कहो? कलमुहे कहीं के!' और तीनो कमरे मे धमाचौकडी मचाना शुरु कर देते। बडे आनन्द के दिन थे वे। वह नाचने मे भी एक नम्बर था। और एक से एक बढ़िया गीत जानता था। ये गीत उसने सूरदासो से सीखे थे। अन्धे सब से अच्छे गायक होते हैं।

"तो दानो आकर उपगृह मे रहने लगे। वहीं तू पदा हुआ। उस वक्त दोपहर का समय था। तेरा बाप दोपहर का खाना खाने के लिए घर आया। तू 'केहा केहा' कर रहा था। वह खुशी से पागलो जसा व्यवहार करने लगा। तेरी मा को इस तरह लिपटा लिया, मानो उसने बच्चा क्या पदा किया है दुनिया का सब से बडा किला फतह किया है। मुझे उसने कधे के ऊपर उठा लिया और लेकर दौडा आगन मे नाना को नाती के जन्म की खुशखबरी देने। तेरे नाना भी हसी मे शामिल हो गये। बोले, 'मक्सिम! बडा नटखट है तू।'

"लेकिन तेरे मामा लोगो को वह रचमात्र नहीं सुहाता था। बात यह थी कि वह पीता नहीं था और बातचीत मे भी किसी को खातिर मे नहीं लाता था। साथ ही तेज ऐसा था कि रोज नया नया खेल निकाला करता था। बडी मुसीबत उठानी पडी उसे इनकी बदौलत। एक बार 'लेट' के दिनो मे आधी उठी। यकायक सारे घर मे सिसकारी की भयानक आवाज सुनायी पडने लगी। सभी हैरान। डर के मारे सबका बुरा हाल हो गया। तेरे नाना कभी इधर दौडते, कभी उधर। बोले, 'पूजा के सभी दीप जला दो और भजन आरम्भ करो।' और फिर यकायक चारो ओर घनघोर सन्नाटा छा गया तथा घर और भी ज्यादा डरावना लगने लगा। तेरा याकोव मामा समझ गया कि हो न हो दाल मे कुछ काला है। वह बोला, 'यह सब मक्सिम की करामात है।' और सचमुच बात यही निकली। मक्सिम ने ही बाद मे बतलाया कि उसने कोठेवाली खिडकी पर एक कतार मे कई बोतल इस तरह सजा दी थीं कि आंधी चलने से उनमे से भयानक आवाज

निकलने लगे। तेरे नाना ने चेताकर कहा, 'मक्सिम! तुम्हारे ये खेल खतरनाक हैं। इनके चलते कहीं साइबेरिया की हवा न खानी पडे तुम्हें।'

"एक साल ऐसा जाडा पडा कि भेडिये खेत मदान छोडकर बस्ती के पास चले आये। कभी किसी का कुत्ता गायब हो जाता, कभी घोडे किसी हडके भेडिये को देखकर भाग निकलते और कभी किसी मकान का दरबान नशे की हालत मे भेडियो द्वारा चबाया हुआ पाया जाता। भडिया ने आफत मचा दी। तेरा बाप स्कीज पहनता और बन्दूक लेकर रात को मदान मे निकल जाता और दो एक भेडिये मार लाता। वह उनकी खाल निकालकर भूसा भर देता और आखो की जगह शीशा लगा देता, जिससे मालूम होता कि जिन्दा भेडिया है। एक बार तेरा मिखाईल मामा रात को हाजत से बाहर छानी मे गया और वहा से हाफ्ता और थर थर कापता भागा—रोयें खडे, आखें फाडे, जीभ लटकती हुई, घिग्घी बधी हुई। पतलून खुला का खुला और वह उसमे उलझकर गिर पडा। मुह से सिफ इतना ही फुसफुसा रहा था, 'भेडिया!' लम्प तथा जिसके हाथ मे जो आया वही लेकर दौडा छानी की तरफ। और देखते क्या है कि पाखाने के सुराख से सचमुच भडिया झाक रहा है। अब कोई गोली चला रहा है, कोई डण्डे बरसा रहा है, पर भेडिया टस से मस नहीं हुआ। आखिर लोग हिम्मत करके पास गये, तो देखते क्या हैं कि भूसाभरा भेडिया है। उसकी टागें किसी ने कील से तख्ते मे जड दी हैं। उस बार तेरे नाना मक्सिम से बहुत बुरी तरह बिगड गये—वश नहीं चला कि क्या करते। कुछ ही दिनो बाद याकोव भी इन नये नये खिलवाडो मे तेरे बाप का सगी बन गया। मक्सिम क्या करता कि दफ्ती से आदमी का सिर बना लेता और आख, नाक, मुह वगरह रगकर तथा रेशो का केश बनाकर वह और याकोव बाहर निकल जाते और चुपके से किसी की खिडकी के पास उसे खडा कर देते। जिसकी नजर पडती, वही डरकर चीखने चिल्लाने लगता। या कभी दोनो सिर से पर तक चादर तानकर रात मे निकल जाते। लोग समझते कि मुर्दे भूत बनकर आये हैं। एक बार दोनो ने गिरजाघर के पादरी को डरा दिया। वह डरकर भय से पहरेदार के पास भागा और पहरेदार ने भी डरकर गोहार मचाना शुरू किया। दोनो रोज

कोई न कोई नया गुल खिलाते थे। हम लोगों ने लाख समझाया, पर वे क्यों मानने लगे? मैंने मना किया, बर्बारा ने समझाया, पर कोई असर नहीं। मक्सिम हंसकर कहता कि जरा-सी बात में लोगों का बदहवास होना देखकर बड़ा मजा आता है। इस तरह छकाने से इन्हें सीख मिलती है

"इन्हीं शरारतों के चलते एक दिन मक्सिम की जान जाते जाते बची। तेरे मिखाईल मामा ने, जो तेरे नाना की तरह ही ओछा और दिल का खोटा है, तेरे बाप का काम ही तमाम कर देने का निश्चय किया। जाड़े का आरम्भ था। एक दिन सब किसी से मिल मिलाकर घर लौट रहे थे। मक्सिम था, तेरे दोनों मामा थे और छोटा पादरी था, जो किसी गाड़ीवाले को पीटते-पीटते मार डालने के कारण बाद में गिरजाघर से निकाल दिया गया। याम्स्काया सड़क से निकलने के बाद वे तेरे बाप को स्केटिंग सिखाने के बहाने द्यूकोव पोखरी पर लिवा ले गये। वहां पहुंचकर उन्होंने मक्सिम को बर्फ के एक छेद में ढकेल दिया—लगता है यह कहानी तुझे सुना चुकी हूं।"

मैंने पूछा, "मेरे मामुओं का स्वभाव इतना खराब क्यों है?"

नानी ने नास लेते हुए शांत चित्त से जवाब दिया, "स्वभाव के बुरे नहीं, मूर्ख हैं। मिखाईल चालाक और अक्ल से अछूता है। और याकोव बिल्कुल बुद्ध है ... तो सबने मिलकर उसे उस पोखरी में ढकेल दिया, जहां बर्फ टूटी हुई थी। जब वह निकलने की कोशिश करता और किनारा थामता, तो वे जूतों से उसकी उंगलियां मसलकर फिर उसे अन्दर ढकेल देते। खैरियत यही थी कि वह नशे में नहीं था और दूसरे पीकर टुन्न थे। ईश्वर की कृपा से किसी प्रकार वह पोखरी के बीच मुंह बर्फ से बाहर रखकर सांस लेता रहा। वे लोग उस तक पहुंच नहीं पाते थे। चुनांचे इन्होंने कुछ देर तक उस पर बर्फ फेंकी और यह सोचकर चले गये कि वह पोखरी में खुद ही डूब जायेगा। वह किसी प्रकार रेंगकर बाहर निकला और सीधा थाने में चला गया। तुम जानते ही हो थाना बगल ही में चौक के ऊपर है। थानेदार उसे और सभी घरवालों को जानता था। उसने उससे पूरा वृतांत पूछा।"

नानी ने सलीब का निशान बनाते हुए कृतज्ञतापूर्ण स्वर में कहा

"भगवान उसकी आत्मा को शान्ति दे। मक्सिम साव्वातेयेविच सचमुच बड़ा पुण्यशाली था। क्या मजाल कि वह पुलिस से एक शब्द भी कहे। बोला, 'क़सूर बिल्कुल मेरा है, नशे मे पोखरी के पास चला गया और उस गढ़े मे गिर पड़ा, जहां बर्फ टूटी हुई थी।' लेकिन था थानेदार ने कहा कि 'तुम झूठ बोल रहे हो।' वह जानता था कि मक्सिम शराब नहीं पीता। थाने मे उसके सारे बदन मे वोदका की मालिश की गयी, फिर सूखे कपड़ों मे लपेटकर और ऊपर से भेड की खाल का कोट डालकर थानेदार और दो और आदमी उसे घर लाये। मिख़ाईल और याकोव अभी लौटकर नहीं आये थे—वे मा-बाप का नाम ऊंचा करने के उपलक्ष्य मे मधुशाला मे आनन्द मना रहे थे। मेरी और तेरी मा की उस पर नजर पड़ी, तो पहले चीख ही न सकीं—ऊपर से नीचे तक शरीर भीला, उंगलिया चूर और खून से लथ-पथ। इसके अलावा कनपटियो पर मानो ऐसे बर्फ जमी थी, जो पिघलने का नाम ही न लेती हो—कनपटियां पक गयी थीं!

"वर्वारा ज़ोरों से चीख उठी, 'मक्सिम यह क्या हाल कर दिया तुम्हारा सबने मिलकर?' थानेदार ने सूंघ-सूंघकर सुराग लेना शुरू किया। लगा सवाल पर सवाल करने। मैं मन ही मन समझ गयी कि मामला बेढब है। मैंने वर्वारा को थानेदार से भिड़ा दिया और लगी मक्सिम से असल हाल जानने। उसने कान मे फुसफुसाकर कहा 'जल्दी से जाकर मिख़ाईल और याकोव को ढूंढो। उन्हें सिखा दो कि हम लोग याम्स्काया सड़क के बाद अलग हो गये। वे लोग पोक्रोव्का की तरफ चले गये और मैं प्रियादिल्नी कूचे की ओर चला आया। कह देना कि बात ठीक से याद रखें, नहीं तो वे लोग पुलिस के चंगुल मे फंस जायेंगे।' मैं झटपट तेरे नाना के पास गयी। उनसे बोली कि थानेदार के साथ बातचीत मे लगे रहें और मैं फाटक पर बैठी या इंतजार करूंगी। और मैंने सारा काण्ड सुना दिया। वह जल्दी जल्दी कपड़े पहनने लगे, डर से थर-थर काप रहे थे। फुसफुसाकर बोले 'मैं जानता था कि ऐसा ही कुछ होगा।' लेकिन वह झूठी बात थी—वह जानते वानते कुछ न थे। ख़ैर, मैं फाटक पर खड़ी हो गयी और जब प्यारे बेटे आये, तो सबसे पहले दोनो के कान मे कनेठी दी। मिख़ाईल का डर के मारे नशा ही हिरन हो गया। पर याकोव ने बहुत ज्यादा चढ़ा ली थी।

वह लगा बक बक करने, 'मैं कुछ नहीं जानता। सारी करनी मिखाईल की है—वह मुझसे बडा है!' हम लोगो ने किसी तरह थानेदार को शात किया। बेचारा भला आदमी था। बोला, 'आग को सम्भलकर रहना। अब अगर कोई बात हुई, तो मुझे जानते देर न लगेगी कि इसमे किसका हाथ है।' यह कहकर वह चला गया। इसके बाद तेरे नाना मक्सिम के पास जाकर बोले, 'तुम मेरे बेटे से बढकर हो। तुम्हारा उपकार मै जन्म जन्मान्तर नहीं भूलूगा। मैं जानता हू कि इस वक्त तुम्हारी जगह दूसरा होता, तो वह कुछ और ही व्यवहार करता।' फिर वर्वारा की ओर मुडकर बोले 'बेटी! तुम्हें मेरे रोम रोम का आशीर्वाद है कि ऐसा हीरा आदमी मेरे परिवार मे लायीं!' सचमुच तेरे नाना उस वक्त बडा-सा कलेजा रखते थे। आज जसी दुर्बुद्धि और मूर्खता उनमे नहीं आयी थी। इसके बाद हम तीनो कमरे मे यही खडे रहे। मक्सिम सहसा फफककर रोने लगा। ऐसे लगा कि सरसाम मे बडबडा रहा हो बोला, 'अम्मा! क्या बिगाडा है मैने इन लोगो का? क्यो ऐसा सलूक किया इन लोगो ने मेरे साथ?' वह मुझे माताजी न कहकर अम्मा ही कहा करता था, मानो छोटा बालक हो। और सचमुच उसका स्वभाव बालका जसा ही प्यार से भरा हुआ था। वह बार बार यही कहता रहा, 'ऐसा क्या हुआ, अम्मा!' मैं जवाब दू तो क्या? मुझे भी रुलाई आ गयी। आखिर यह कारनामा तो किया था मेरे ही बेटा ने न! उनपर तरस आता था। तेरी मा ने अपने ब्लाउज के सारे बटन तोड डाले और ऐसे अस्त व्यस्त होकर बैठी थी, मानो किसी से लड भिडकर आयी हो। वह रो रोकर कहने लगी, 'मक्सिम! अब हम लोग यहा नहीं रहेंगे। चलो कहीं और चले चले। मेरे भाई लोग तुम्हारी जान के गाहक हो गये है। मुझे डर लगता है। अब हम लोगो को यहा एक क्षण भी न रहना चाहिए।' मैंने डाटा भी, 'क्यो आग मे घी छिडकती है? या ही यह घर फुका जा रहा है!' तेरे नाना ने दोना नालायको को बुलवा भेजा और उनसे कहा कि माफी मागो। मिखाईल तेरी मां के पास गया, तो उसने उसके मुह पर एक तमाचा जड दिया और बोली, 'ला यही तुम्हारी माफी है।' और तेरा बाप बार-बार यही कहता रहा, 'भया तुमसे ऐसा करते कसे बना? आज मेरी उगलिया टूट

जातीं, तो मैं जिन्दगी भर को लुजा हो जाता – दो कौडी का। कौन पूछता बिना हाथ के कारीगर को?' खर, किसी तरह बात रफा दफा हुई। तेरा बाप क़रीब सात हफ्ते बीमार रहा। खाट पर पडा पडा वह यही कहता रहा, 'अम्मा! चलो किसी दूसरी जगह चले चले। अब यहा जी नहीं लगता।' इसके कुछ ही दिन बाद वह आस्त्राखान भेज दिया गया। वहा जार का आगमन होनेवाला था और तेरे बाप को स्वागत द्वार बनाने का काम मिला था। वसन्त ऋतु आ पहुची थी। दोनो पहले ही स्टीमर से आस्त्राखान रवाना हो गये। मुझे ऐसा लगा कोई मेरा आधा कलेजा काटकर लिये जा रहा है। वह भी बहुत उदास था। मुझसे बार बार यही कहता था, 'तुम भी चलो, अम्मा।' पर वर्वारा के ख़ुशी के मारे जमीन पर पाव ही नहीं पड रहे थे। निलज्ज से इतना भी नहीं होता था कि कम से कम ऊपर से दु ख प्रकट करती। इस तरह वे विदा हो गये और बस इतनी ही कहानी है "

यह कहकर नानी ने एक घूट वोदका और चढायी और नाक मे एक चुटकी नास लेती हुई खिडकी के बाहर झाककर बोली, मानो अपने आपसे बात कर रही हो

"तेरे बाप और मुझमे रक्त का सम्बध नहीं था। लेकिन हम दोनो ऐसे थे, जसे सगी आत्माए "

अक्सर जब नानी की कहानी चल रही होती, नाना कमरे मे आते और अपना गिलहरी जसा चेहरा ऊपर उठाकर इधर उधर सूघने के बाद नानी की ओर सदेहभरी निगाह से देखते और बडबडाते हुए कहते

"सब गप है, कोरी गप " अचानक वह मुझसे पूछ बठे

"अलेक्सेई! तेरी नानी यहा दारू पी रही थी न?"

"नहीं।"

"तू झूठ बोल रहा है, तेरा चेहरा कह रहा है।"

उन्हें मेरी बात का विश्वास नहीं हुआ। जब वह जाने लगे, तो नानी ने उनकी पीठ के पीछे कनखी चलाते हुए कहा

"न जानेगा, न मानेगा!"

एक दिन नाना कमरे के बीच खडे थे। उनकी निगाह जमीन पर जमा हुई थी। बोले

यह लगा यक-बक करने, 'मैं कुछ नहीं जानता। सारी करनी मिखाईल की है—वह मुझसे बडा है!' हम लोगो ने किसी तरह थानेदार को शात किया। बेचारा भला आदमी था। बोला, 'आगे को सम्भलकर रहना। अब अगर कोई बात हुई, तो मुझे जानते देर न लगेगी कि इसमे किसका हाथ है।' यह कहकर वह चला गया। इसके बाद तेरे नाना मक्सिम के पास जाकर बोले, 'तुम मेरे बेटे से बढ़कर हो। तुम्हारा उपकार मैं जन्म-जन्मान्तर नहीं भूलूगा। मैं जानता हू कि इस वक्त तुम्हारी जगह दूसरा होता, तो वह कुछ और ही व्यवहार करता।' फिर वर्वारा की ओर मुडकर बोले 'बेटी! तुम्हें मेरे रोम राम का आशीर्वाद है कि ऐसा हीरा आदमी मेरे परिवार मे लायीं!' सचमुच तेरे नाना उस वक्त बडा-सा कलेजा रखते थे। आज जसी दुर्बुद्धि और मूर्खता उनमे नहीं आयी थी। इसके बाद हम तीना कमरे मे योंही खडे रहे। मक्सिम सहसा फफककर रोने लगा। ऐसे लगा कि सरसाम मे बडबडा रहा हो बोला, 'अम्मा! क्या बिगाडा है मैंने इन लोगो का? क्यो ऐसा सलूक किया इन लोगो ने मेरे साथ?' वह मुझे माताजी न कहकर अम्मा हो कहा करता था, मानो छोटा बालक हो। और सचमुच उसका स्वभाव बालको जसा ही प्यार से भरा हुआ था। वह बार-बार यही कहता रहा, 'ऐसा क्यो हुआ, अम्मा!' मै जवाब द तो क्या? मुझे भी रुलाई आ गयी। आखिर यह कारनामा तो किया था मेरे ही बेटो ने न! उनपर तरस आता था। तेरी मा ने अपने ब्लाउज के सारे बटन तोड डाले और ऐसे अस्त व्यस्त होकर बठी थी, मानो किसी से लड भिडकर आयी हो। वह रो रोकर कहने लगी, 'मक्सिम! अब हम लोग यहा नहीं रहेंगे। चलो कहीं और चले चले। मेरे भाई लोग तुम्हारी जान के गाहक हो गये है। मुझे डर लगता है। अब हम लोगो को यहा एक क्षण भी न रहना चाहिए।' मैने डाटा भी, 'क्यो आग मे घी छिडकती है? यो ही यह घर फुका जा रहा है!' तेरे नाना ने दोनो नालायको को बुलवा भेजा और उनसे कहा कि माफी मागो। मिखाईल तेरी मा के पास गया, तो उसने उसके मुह पर एक तमाचा जड दिया और बोली, 'लो यही तुम्हारी माफी है।' और तेरा बाप बार बार यही कहता रहा, 'भया तुमसे ऐसा करते कसे बना? आज मेरी उगलिया टूट

जातीं, तो मैं जिंदगी भर को लुजा हो जाता—दो कौडी का। कौन पूछता बिना हाथ के कारीगर को?' खर, किसी तरह बात रफा दफा हुई। तेरा बाप करीब सात हफ्ते बीमार रहा। खाट पर पडा पडा वह यही कहता रहा, 'अम्मा! चलो किसी दूसरी जगह चले चले। अब यहा जी नहीं लगता।' इसके कुछ ही दिन बाद वह आस्त्राखान भेज दिया गया। वहा जार का आगमन होनेवाला था और तेरे बाप को स्वागत द्वार बनाने का काम मिला था। वसन्त ऋतु आ पहुची थी। दोनो पहले ही स्टीमर से आस्त्राखान रवाना हो गये। मुझे ऐसा लगा कोई मेरा आधा कलेजा काटकर लिये जा रहा है। वह भी बहुत उदास था। मुझसे बार बार यही कहता था, 'तुम भी चलो, अम्मा।' पर वर्वारा के ख ुशी के मारे जमीन पर पाव ही नहीं पड रहे थे। निलज्ज से इतना भी नहीं होता था कि कम से कम ऊपर से दु ख प्रकट करती। इस तरह वे विदा हो गये और बस इतनी ही कहानी है "

यह कहकर नानी ने एक घूट वोदका और चढायी और नाक मे एक चुटकी नास लेती हुई खिडकी के बाहर झाककर बोली, मानो अपने आपसे बात कर रही हो

"तेरे बाप और मुझमे रक्त का सम्बध नहीं था। लेकिन हम दोनो ऐसे थे, जसे सगी आत्माए "

अक्सर जब नानी की कहानी चल रही होती, नाना कमरे मे आते और अपना गिलहरी जसा चेहरा ऊपर उठाकर इधर उधर सूघने के बाद नानी की ओर सदेहभरी निगाह से देखते और बडबडाते हुए कहते

"सब गप है, कोरी गप " अचानक वह मुझसे पूछ बठे

"अलेक्सेई! तेरी नानी यहा दारू पी रही थी न?"

"नहीं।"

"तू झूठ बोल रहा है, तेरा चेहरा कह रहा है।"

उन्हे मेरी बात का विश्वास नहीं हुआ। जब वह जाने लगे, तो नानी ने उनकी पीठ के पीछे कनखी चलाते हुए कहा

"न जानेगा, न मानेगा!"

एक दिन नाना कमरे के बीच खडे थे। उनकी निगाह जमीन पर जमी हुई थी। बोले

"वर्वारा की मा "

"हू!"

"तुम घर का रग-ढग तो देख रही हो?"

"हा, देख रही हू।"

"क्या खयाल है तुम्हारा?"

"सब क़िस्मत का खेल है, बाबू! याद है न इन शरीफ़ज़ादे के बारे मे तुम क्या कहा करते थे?"

"हू!"

"लगता है तुम्हारा कहना सही था।"

"यानी—बन गये मुहताज!"

"खर, यह तो वह ख़ुद ही जाने।"

नाना बाहर चले गये। मैं समझ गया कि कोई न कोई आफत टूटी है। नानी से पूछा

"तुम लोग क्या बात कर रहे थे?"

मेरे पांवो को सहलाते हुए वह बोली

"सब अभी से जान लेगा, तो बडा होने पर जानने को बाकी क्या रहेगा?" यह कहकर वह हसने और सिर हिलाने लगी। फिर स्वगत बोली

"प्रभु की सृष्टि मे तेरे नाना की हस्ती ही क्या है—किस खेत की मूली है वह? कहना मत, पर बात यही है कि तेरे नाना की सारी पूजी जाती रही है। एक शरीफ़ज़ादे को उन्होंने हज़ारो रुपये क़र्ज दे डाले थे। उन हज़रत का दिवाला निकल गया है। तेरे नाना कौडी कौडी को मुहताज हो गये हैं।"

वह सोच मे डूबी बडी देर तक योंही बैठी रही। चेहरे की मुस्कान उदासी मे परिवर्तित हो गयी। मैंने पूछा

"क्या सोच रही हो तुम?"

सम्भलकर उसने जवाब दिया, "सोच रही थी कि तुझे क्या सुनाऊ। अच्छा येव्स्तिग्नेई का गीत सुनेगा? ले सुन

एक था मठ छोटा, उसमे था एक पुजारी,
नाम येव्स्तिग्नेई, बडा अहकारी,

आप अपने आपको समझे था बडा भारी,
चोटी में उजोत जसी जोत की पिटारी,
जार ठहरे हेठ और हेठ थे पुजारी,
जुगनुओ की गिनती मे थे सेठ-साहूकारी!
करनी मे तो चमगादड, पर अकड मे मयूर,
गोल-गोल आखें मानो वतियां धतूर,
उल्लू बुध-पुरनियो के से उभरे उभरे कोये!
दिन रात सीखो के बीज अली गली बोये!
उपदेशो से नाकों दम पडोसियो का कर दिया,
कोई चीज जग मे न ऐसी जिसे वदर किया,
देखी जो मीनार बोला हुह, बहुत नीची है यह,
बग्घी पर चढ़ा तो बोला हुह, बहुत धीमी है यह,
सेब जो चखे तो बोला हुह, ये मीठे हैं कहा!
धप मे बठा तो बोला पीठ जलती है यहा!
कुछ भी क्यो न देखे उसके मुह से कढते ये ही बोल

और यहा आकर नानी ने आखें नचाकर गाल फुला लिये और उसके प्यारभरे मुखडे पर एक अजीब तरह की महा भादू जसी मुद्रा खेल गयी, और एक एक शब्द को मानो चबाती हुई वह कहती गयी

"अमा यह क्या चीज,
इसका है भला कौनसा मोल!
मैं तो ख ुद बना लेता
इससे लाखो दरजे बेहतर—
लेकिन इन छोटी-मोटी
बातो मे उलझू तो क्यो कर?
जानते ही हो, मेरा समय
कितना अनमोल है!
इनमे तो फसे वह, जो
बेकार फूटा ढोल है!"

छन भर को नानी रुकी। फिर आवाज धीमी सी करके कहना जारी रखा

एक रात दूत कई नरकलोक के जमके,
उस मियामिट्ठू कोठारीजी के पास आ धमके,
कहने लगे, "दुनिया गडबडझाला है तेरे लिए?
हर कहीं भूलों का बोलबाला है तेरे लिए?
फिर हमारे देस मे ही चला क्या न तू चले?
नरक मे तो लाजवाब आग हर घडी जले।"
बाका टोप जब लौ पहनें पहनें ही कोठारीजी,
तब लौं पूछपे जमके दोदो दूतो ने सवारी की,
बाकियो ने चगुलो के बीच उह पकड लिया,
धारदार अगुला के बीच उह जकड लिया,
नोकदार नखो की शुरू हुई चिकोटिया,
गुदगुदी से कपकपा उठीं हजरत की बोटिया,
धक्के खा धधकती ज्वालाओ मे धकेले गये,
जमदूत बाहर खडे रहे, वह अकेले गये,
"बता येव्स्तिग्नेई कसी है आग लाजवाब?
आ रहे होगे मजे भुनभुनके होने मे कबाब?"
कोठारी की गोलगोल आखें नाचने लगीं,
पर मुद्रा बनाये रहा बुद्धिमानी मे पगी,
मुह बिचकाये बोला, बाघ के हिकारत का समा
"हुह, नरक की आग से उठता है गस का धुआ!"

मीठी और चिकनी आवाज मे कहानी समाप्त कर नानी धीरे से हसी और मेरी ओर मुडकर बोली

"देखा न येव्स्तिग्नेई को—अन्त तक हार नहीं मानी पट्ठे ने। रस्सी जल गयी, पर ऐंठन न गयी—ठीक तेरे नाना की तरह! अच्छा अब सो जा "

मा शायद ही कभी मुझे देखने कोठे पर आती थी। आती भी तो जल्दी-जल्दी दो एक बाते करके चल देती। वह इन दिनों पहले से अधिक सुन्दर लगने लगी थी और उसने पोशाक भी बेहतर पहननी आरम्भ कर दी थी। लेकिन नानी की ही तरह वह भी किसी बात को मुझसे गुपचुप रखने की कोशिश कर रही थी। इतना मैं ताड गया। मैं उनके रहस्य को बूझने का प्रयत्न करने लगा।

नानी की कहानियो मे अब मुझे रस नहीं आता था। मेरा मन एक अज्ञात आशका से भर गया और यह आशका दिनोंदिन बढती ही जा रही थी। पिताजी के बारे मे नानी की कहानिया भी उसे दबाने मे सफल नहीं हो पा रही थीं।

एक दिन मैंने नानी से पूछा

"पिताजी की आत्मा इतनी अशात क्यो है?"

आखो को मूदते हुए नानी ने जवाब दिया

"यह मै कसे जानू? यह तो भगवान का धधा है—उसी की लीला। हम-तुम इसे क्या समझें "

रात मे नींद न जाने किस देश मे खो जाती थी। मैं आखें खोले नील गगन मे तारा की बरात देखा करता था। मस्तिष्क मे तरह-तरह की दु खभरी कहानिया मडराने लगतीं। इन कहानियो के नायक सदा मेरे पिताजी होते थे। और उनका हमेशा एक ही चित्र सामने आता—एक हाथ मे छडी और पीछे-पीछे एक झबरा कुत्ता

१२

एक दिन मै दोपहर की हलकी झपकी के बाद उठा, तो ऐसा अनुभव हुआ कि मेरी टागें सुषुप्तावस्था से जाग उठी हैं। मैने चारपाई से नीचे उतरने की कोशिश की, तो टागें फिर शून्य और बेजान हो गयीं। लेकिन अब मुझे यह विश्वास हो गया कि टागें सदा के लिए जड नहीं हुई हैं और मैं फिर से चलने फिरने लायक हो सकूगा। यह खयाल आते ही मैं खुशी से चीख उठा और चारपाई से नीचे उतरा। पाव भूमि पर रखते ही लडखडाकर गिर पडा, पर किसी तरह घिसटते हुए कमरे से पार हुआ और सीढिया उतर गया। सोचता जा रहा था कि अचानक मुझे नीचे देखकर सभी लोग चकित और विस्मित हो जायेंगे।

लेकिन इसके आगे की याद नहीं है। याद है तो यह कि मैंने मा के कमरे मे अपने को नानी की गोदी मे पाया। चारो ओर नये नये चेहरा ने मुझे घेर रखा था, जिनमे एक पतली दुबली बुढिया भी थी, जिसके चेहरे की रगत हरापन लिये थी। हरी औरत ने सजीदा स्वर मे, जिसमे दूसरो की आवाज डूब गयी, कहा

"इसे रसभरी का मुरब्बा और चाय दो और कम्बल मे लपेटकर सुला दो "

बुढ़िया की सारी चीजें हरी थीं–पोशाक, टोपी, चेहरा, बायीं आख के नीचे मस्सा, सभी कुछ। यहा तक कि मस्से मे उगा बाल भी दूब की तरह हरा था। वह मुझे घूर रही थी। उसका निचला होंठ नीचे लटका और ऊपरी होंठ ऊपर उठा हुआ था। बीच मे दातो की हरी पात झाक रही थी। हाथो मे उसने काला दस्ताना पहन रखा था। मुझे घूरते वक्त वह एक हाथ आखो के ऊपर रखे हुए थी।

मैंने डरकर पूछा

"यह कौन है?"

मेरे नाना ने रूखे स्वर मे जवाब दिया

"यह तुम्हारी नयी दादी होने जा रही हैं "

मा हसी और येव्गेनी मक्सिमोव को मेरी ओर करके बोली

"और यही अब से तेरे बाप होगें "

इसके बाद उसने जल्दी-जल्दी कुछ और कहा, जिसका मतलब मैं नहीं समझ सका। पर मुझे सिकुडी आखा से ताकता देखकर मक्सिमोव ने मेरी आखो के नजदीक आकर कहा

"मैं तुम्हे रग का बक्स खरीद दूगा।"

कमरे मे तेज रोशनी थी। कोने मे एक मेज पर चादी का शमादान रखा था, जिसमे पाच मोमबत्तिया जल रही थीं। वहीं नाना की 'मेरी कब्र पर सिसक नहीं, मा' नाम की प्रिय प्रतिमा रखी थी। उसके चौखटे मे मोती जडे थे, जिनसे मोमबत्ती की रोशनी म मधुर आभा फल रही थी। प्रतिमा के चारो ओर सुनहली माला मे लाल जडे थे, जो प्रकाश मे दीया की तरह जल रहे थे। खिडकियो के बाहर, अधेरे मे खडे, रोटियो जसे कई गोल चेहरे झाक रहे थे। कई ने खिडकी मे मुह सटा लिया था, जिससे नाक चपटी लग रही थी। यकायक मेरा सिर चक्कर खाने लगा लगा कि सभी चीजें लट्टू की तरह घूम रही हैं। हरी औरत ने मेरी कनपटी को अपनी ठडी उगलियो से छूते हुए कहा

"निश्चय ही, निश्चय ही "

"गश आ गया है इसे," यह कहते हुए नानी गोद मे लेकर मुझे कोठे पर ले जाने लगी।

लेकिन मुझे गश नहीं आया था। केवल यही हुआ था कि मैंने अपनी आखें मूद ली थीं। जब वह मुझे गोद मे लिये हुए सीढी पर पहुची, तो मैंने उससे पूछा

"तुमने पहले क्यो नहीं कहा था मुझसे?"

"अच्छा, अच्छा, अब चुप रह," नानी बोली।

"तुम सब के सब धोखेबाज हो "

मुझे चारपाई पर लिटाने के बाद नानी तकिए मे मुह छिपाकर फफकने लगी। उसकी पूरी देह सिसकियो से हिल रही थी। वह बार-बार कह रही थी

"रो ले, रो ले, एक बार जी भरकर रो ले!"

पर रोने की मेरी जरा भी इच्छा न थी। कमरा अधेरा और सद लग रहा था। चारपाई मेरे कापने से चू चू कर रही थी और हरी औरत का चेहरा था कि आखो से ओझल होने का नाम ही नहीं ले रहा था। मैंने सो जाने का बहाना किया और नानी धीरे-से कमरे के बाहर हो गयी।

अगले चद दिन उदासी के कारण कटने को ही न आते थे। मगनी की घोषणा के बाद मा कहीं चली गयी और घर मे सूनेपन का साम्राज्य छा गया एक टीसभरा सुनापन।

एक दिन सवेरे ही नाना हाथ मे छेनी लेकर कोठे पर आये और जाडे के तूफानो से बचाने के लिए खिडकी मे लगा मसाला उखाडने लगे। पीछे-पीछे नानी एक बालटी पानी और कुछ चियडे लेकर आयी। नाना ने धीरे-से पूछा

"हा तो बुढिया?"

"क्या है?" जवाब मिला।

"खुश हो न?"

नानी ने वही जवाब दुहरा दिया, जो उसने मुझे सीढ़ियो पर दिया था

"अच्छा, अच्छा, अब चुप रहो!"

इन शब्दो का खास महत्त्व था। उनमे कुछ ऐसा छिपा हुआ था, जो आज चुभ रहा था, दुख रहा था, जिसे सभी मन ही मन गुन रहे थे, पर कहने को कोई तयार न था।

नाना खिडकी के अतिरिक्त चौराटे को सावधानी से उखाडकर नीचे ले गये। नानी ने खिडकी खोल दी। बगीचे मे मना और गौरया का झुण्ड चे चे कर रहा था। पिघलती बर्फ धरती से विदा हो रही थी। उसकी मादक गध कमरे मे फल गयी। अलावघर मे लगी नीला-सी आभावाली टाइले अजीब ढग से सफेद सी हो गयी थीं और उन्हे देखने मात्र से मेरे रोए सिहर उठते थे। मैं पलग से नीचे उतरा।

"जमीन पर नगे पर मत घूम," नानी ने चेताया।

मैने कहा

"मै बगीचे मे जा रहा हू।"

"अभी नहीं जा। जमीन सूख जाने दे," नानी बोली।

उसकी आज्ञा का पालन करने को मेरा मन नहीं हुआ। बडे लोग आज मुझे जरा भी नहीं सुहा रहे थे।

हल्के हरे रग की दूब धरती मे से फूट निकली थी। सेब की डालियो पर नयी कलिया चटक रही थीं। पेत्रोव्ना की झोपडी की छत पर हरी घास का सुदर चदोवा तन गया था। चारो ओर पक्षियो का कलरव गूज रहा था। हवा की भीनी मद सुगध ने मेरे अन्दर अजीब मस्ती भर दी। उस खाई के किनारे किनारे, जहा प्योत्र काका ने अपना गला काटा था, ओलो से कुचली हुई पीली घास दिख रही थी। और इस वातावरण मे अप्रिय दृश्य उपस्थित कर रही थी। खाई में गडे अधजले शहतीर वसत की मस्तीभरी बहार के बीच बेतुकापन ला रहे थे। वह पूरी खाई ही सारा मजा किरकिरा कर रही थी। मेरे जी मे आया उखाडकर फेंक दू इन सूखी घासो को, साफ कर डालू शहतीरों और इटो के उस अबार को और आगन के इस कोने को सुथरा करके अपने लिए गरमी बिताने लायक एक गोशा बना लू, ऐसा गोशा जहां बडे-बुजुर्गों की पहुच न हो। मैं फौरन इस काम मे पिल पडा। इसके फलस्वरूप घर की हाल की घटनाओ की टीसती याद से छुटकारा पाने मे मुझे बडी मदद मिली। घाव पूरी तरह भरा तो नहीं, पर दर्द जरूर घट गया।

नानी और मा अक्सर पूछ बठतीं

"तू हमेशा रोनी सूरत क्यो बनाये रहता है?" ऐसे सवालो से मेरा सतुलन बिगड जाता। यह बात न थी कि मुझे उन लोगो से रज

था। दरअसल इस घर की सारी चीजें ही अब न जाने क्यो काटने को दौडती थीं। अक्सर दोपहर के भोजन या चाय अथवा रात के भोजन के वक्त वह हरी औरत भी शरीक हुआ करती थी। मेज पर वह यो बैठी रहती थी, जैसे पुरानी चहारदीवारी मे खडा खभा। उसकी आखें मानो अदृश्य तागो से मुह के ऊपर सिली हुई थीं, जो अपने गढे के अदर सहज स्वाभाविकता के साथ हिलती डोलती रहती थीं। कोई चीज उनके पनेपन से अलक्ष्य न थी। जब वह ईश्वर की चर्चा करती, तो वे नन आकाश की ओर उठ जाते और दुनिया की बाते करते समय धरती पर आ टिकते। उसकी भौंहे ऐसी दीखती थीं, मानो पलको के ऊपर चोकर चिपका दिया गया हो। उसके चौडे, अधखुले दात मुह मे आनेवाली हर चीज को नि शब्द पीस डालते थे। वह अजीब ढग से कांटा पकडती थी मुट्ठी बधी, पर कानी उगली ऊपर उठी हुई। खाते समय कनपटी की नसे हड्डी की गोलाइयो की तरह हिलती डुलती थीं। कान डोलने लगते थे और मस्से पर उगे हरे बाल पीले झुर्रीदार गालो पर, जिनकी स्वच्छता घृणोत्पादक थी, झाड़ू लगाते जाते थे। वह और उसका बेटा दोनो इतने स्वच्छ और साफ रहा करते थे कि उनके नजदीक जाने की मेरी हिम्मत ही नहीं होती थी। शुरू मे बुढ़िया ने कई बार कोशिश की कि मैं उसके झुर्रीदार हाथो को चूमू, जिनसे साबुन और लोहबान की गध आया करती थी। पर मै हमेशा मुह फेरकर भाग खडा होता था।

वह बार-बार अपने बेटे से कहती थी

"येव्गेनी। इस लडके को अवश्य ही बहुत कुछ सिखाना होगा।"

जवाब मे वह केवल अदब से सिर झुका लेता था। उसके माथे पर बल पड जाता था। उस हरी हरी हस्ती के आगे सभी का यही हाल होता था।

बुढ़िया और उसके बेटे से मैं सम्पूर्ण हृदय से घृणा करता था, जिसके फलस्वरूप मेरी कई बार कसकर पिटाई होती थी। एक दिन ब्यालू के वक्त वह आख फाडकर बोली

"अलेक्सेई! इतने बडे-बडे कौर क्या खाते हो? खाना भागा जा रहा है क्या? ज्यादा बडे कौर नहीं खाने चाहिए। इससे दम घुटने का खतरा रहता है।"

मैंने मुह का टुकडा बाहर निकाल लिया और उसे काटे मे गोदकर कहा "बहुत मन ललचा रहा है, तो ला, तुम्हीं खा जाओ!"

मा ने झट मुझे मेज से उठा दिया और अपमानित कर कोठे पर भेज दिया।

थोडी देर मे नानी ऊपर पहुची। हसी के मारे उसका बुरा हाल था। हाथ से मुह दबाकर बोली

"अहह, अलेक्सेई, नटखट कहीं का! शैतान! भगवान सदा तेरी रक्षा करें।"

उसका हाथ से मुह ढापना मुझे अच्छा नहीं लगा। मैं भागकर छत के ऊपर चढ़ गया और बडी देर तक चिमनी की आड मे छिपकर बैठा रहा। मेरा जी मचल रहा था। यही तबीयत हो रही थी कि कोई शरारत करू, किसी को कुछ न समझू, जो मन मे आये कहू। इस प्रवृत्ति को दबाना मुश्किल था, लेकिन उसे दबाना ही पडा। एक दिन अपने भावी सौतेले बाप और सौतेली दादी की कुर्सी मे मैंने गोद लगा दी। दोनो बैठे तो कपडे कुर्सी से चिपक गये। उठने पर बडी दुर्गति हुई। यह चित्र अति हास्यपूर्ण था। नाना ने मुझे ख़ूब पीटा। पिटाई के बाद मा कमरे मे आयी, मुझे अपने पास खींच लिया और जाघो मे दबाकर बोली

"तू इतना शरारती क्यो हो गया है? यह भी कभी सोचता है कि इन शरारतो के कारण मुझको कितना कष्ट होता होगा?"

उसकी आखो मे आसू भर आये। मेरा माथा उसने अपने गाल से सटा लिया। कितना अच्छा होता, अगर वह मुझे दो चार तमाचे जड देती। मैंने क़सम खाकर कहा "बस, तुम रोना बद कर दो, अब मैं मक्सिमोव को कभी नहीं सताऊगा।"

वह धीरे से बोली

"हा, हा, तुझे शरारत नहीं करनी चाहिए। हम लोगो की जल्द ही शादी हो जायेगी। उसके बाद हम मास्को चले जायेंगे और जब वहां से लौटेंगे, तो तू हमारे साथ रहने लगेगा। यव्गेनी वासील्येविच बहुत समझदार है और स्वभाव का भी बहुत अच्छा है। तू उसे अवश्य चाहने लगेगा। तब स्कूल मे तेरा नाम लिखा देंगे और इसके बाद तू भी येव्गेनी वासील्येविच की तरह पढ़ लिख कर डाक्टर

या और जो चाहेगा बन जायेगा। पढ़ा लिखा आदमी क्या नहीं कर सकता? समझा न? अब जा, जाकर खेल "

"इसके बाद" और "जब-तब" का यह सिलसिला मुझे लम्बी सीढ़ी जैसा मालूम पड़ा, जिससे लुढकता-पुढ़कता मै मा से दूर, बहुत दूर, किसी अधकार और एकाकीपन के गढे मे जा गिरा। जिस भविष्य का उसने चित्रण किया था, उसमे मुझे तनिक भी सुख या आकर्षण नहीं नजर आया। मेरे जी मे आया कि मा से कहू

"तुम शादी मत करो। मैं कमाऊगा, तुम खाना।"

लेकिन मैंने कहा नहीं। मा को सुखी बनाने की कल्पना मेरे मस्तिष्क मे सदा घूमा करती थी, पर उसके सामने उसे व्यक्त करने का मुझे कभी साहस नहीं हुआ।

बगीचेवाला मेरा काम तेजी से चल निकला। गढ़े के किनारे के झाड झखाड को मैंने साफ कर डाला और ईंटें लगाकर किनारों को बराबर कर दिया। कुछ और ईंटें लेकर मैंने एक चौडा चबूतरा तयार किया, ऐसा कि आदमी आराम से लेट सके। इटो के बीच की सेधो मे मिट्टी के प्लस्तर से रगीन काच और रकाबियो के टूटे टुकडे जड दिये। धूप मे वे गिरजाघर की प्रतिमाओ की तरह दमकने लगे।

नाना एक दिन मेरा काम देखने आये तो बोले

"शाबाश! खूब अक्ल लगायी है। लेकिन घासो की जडें तूने बाकी छोड दी ह, जिनसे फिर झाड झखाड निकल आयेंगे। कुदाल ले आ, तो मैं इन्हें अभी साफ कर दू।"

मै कुदाल ले आया। हथेली पर थूकने के बाद उन्होंने जोर से कुदाल भाजना शुरू किया। उनकी हुम हुम के साथ कुदाल मिट्टी को खोदने लगी। वह बोले

"इन जडो को फेंक दे। मैं तेरे लिए यहां सूरजमुखी और हालीहक के पौधे लगा दूगा, फिर देखना कितनी बहार आती है इस जगह "

पर न जाने क्यो वह यकायक चुप हो गये और कुदाल थामकर खडे हो गये। मैंने देखा उनकी छोटी छोटी गोल, कुत्ते की आखो जसी समझदार आखो मे आसू छलक पडे।

"क्या बात है?" मैंने पूछा।

मा ने मुझसे इस तरह बात की, मानो मैं बडा हो चुका हू। यह मुझे अच्छा लगा, लेकिन एक बात मेरी समझ मे नहीं आयी – दाढी-मूछ वाला आदमी अभी तक पढाई करता है? मैंने पूछा

"आप क्या पढते हैं?"

"भूमि नापना "

भूमि नापने की पढाई क्या होती है, आलस्यवश मैंने पूछा ही नहीं। घर मे दिल को कुरेदनेवाला अजीब सन्नाटा छाया हुआ था सब ओर साय साय। इच्छा होने लगी कि जल्दी रात हो जाये। नाना अलावघर से पीठ सटाये और आखें सिकोडे हुए खिडकी के बाहर देख रहे थे। हरी औरत सामान रखने मे मा की मदद कर रही थी और लगातार भुनभुनाती और निश्वास छोडती जा रही थी। नानी दोपहर को ही शराब पीकर नशे मे चूर हो गयी थी। अत उसे कोठे पर बद कर दिया गया था, जिससे वह बाहर के लोगो के सामने कोई मूर्खता न कर बठे।

अगले दिन तडके ही मा विदा हो गयी। चलते वक्त उसने मुझे गोद मे उठाकर गले से चिपटा लिया। उसने मेरी आखो मे आखें डालकर ऐसी दष्टि से देखा, जो मेरे लिए अनोखी थी। मुझे चूमते हुए वह बोली

"अच्छा, तो विदा "

नाना ने कहा

"इससे कह दो, मेरा कहना माना करे।" वह, खिन्न मन, आकाश की ओर देख रहे थे, जिसमे लाली बाकी थी।

मा ने मेरे ऊपर सलीब का निशान बनाते हुए कहा

"नाना की बात माना कर।" मैं उम्मीद कर रहा था कि मा कुछ और कहेगी, किंतु नाना ने बीच मे ही टोक दिया और यह मुझे बुरा लगा।

वे लोग घोडागाडी मे सवार हो गये। चढते समय मा का घाघरा किसी चीज मे फस गया और वह बडी देर तक परेशान होकर उसे छुडाती रही।

नाना ने मुझसे कहा

"ताक क्या रहा है? देख, कहा कपडा फसा है।" लेकिन मैं

अथाह दु ख मे डूबा जा रहा था और इसलिए मैंने कपडा छुडाने मे कोई मदद नहीं की।

मक्सिमोव ने अपनी लम्बी टागें, जिनके ऊपर गहरे नीले रग का चुस्त पतलून चढा था, सावधानी से ऊपर खींच लीं। नानी ने उनके हाथ मे कई बडल थमा दिये, जिन्हे उन्होंने घुटनो पर रखकर ठुड्डी से दबा लिया और घबराकर अपने पीले चेहरे को सिकोडते हुए बोले

"अब बस भी कीजिये "

हरी औरत और उसका बडा बेटा, जो फौज मे अफसर था, दूसरी घोडागाडी मे सवार हुए। वह चित्रवत सीट पर सीधी तनकर बैठी थी, अफसर तलवार की मूठ से अपनी दाढी खुजलाता हुआ जम्हाई ले रहा था।

नाना ने उससे पूछा

"यहा से सीधे मोर्चे पर जायेंगे?"

"जी हा, बिल्कुल!"

"बहुत ठीक। इन तुर्कों को मजा चखाना ही होगा "

और वे लोग चल दिये। मा कई बार पीछे मुडकर रूमाल हिलाती रही। नानी घर की दीवार के साथ सटकर रो रही थी और रूमाल हिला रही थी। नाना खडे खडे आसुओ को रोकने की कोशिश कर रहे थे। वह अस्फुट स्वर में बडबडाये

"इस डाल मे मेवे नहीं लग सकते "

मैं चौतरे पर बैठा घोडागाडी को देख रहा था। वह सडक पर धचके खाती बढी जा रही थी और एक मोड पर पहुचकर आखो से ओझल हो गयी। मेरा जी डूब गया। लगा कि कलेजा मुह को आ रहा है।

भोर की बेला अभी नहीं बीती थी। सडक निजन और घरा की खिडकिया बद थीं। एक अनजानी अतल शून्यता मुझे निगले जा रही थी। दूर, कहीं दूर किसी गडरिये की बशी की ऊबभरी तान कानों मे पड रही थी।

नाना ने मेरे कधों को थामकर कहा

"चल आ अन्दर, नाश्ता कर ले। लगता है तेरी किस्मत मे हमीं लोगों के साथ इट पर दियासलाई की तरह जिदगी रगडना लिखा है।"

मैं और वह बिना बोले चाले, सुबह से रात का अधेरा छा जाने तक बगीचे मे काम करते रहे। जमीन खोदना, रसभरी की लताए बांधना, सेब के तनो की काई खुरचना और पत्तियो पर रेंगनेवाले कीडों को मारना—नाना दिन भर यही करते रहे। मैं अपने कोने को सुधारने मे लगा था। नाना ने अधजले शहतीर का सिरा काटकर साफ कर दिया और जमीन मे लकडी के खभे गाड दिये, उनमे मैंने अपने पालतू पक्षियो के पिजडे टाग दिये। बेंच को धूप और शीत से बचाने के लिए मैंने उसके ऊपर सूखी घास की छाजन तयार कर डाली। मेरा कोना बडा रमणीक हो गया।

नाना ने मुझसे कहा

"यह बहुत अच्छी बात है कि अपने लिए जो ठीक समझते हो, उसी के मुताबिक काम करना सीख रहे हो।"

जिदगी के बारे मे उनकी अनुभवी टीकाओ की मैं बडी कदर किया करता था। प्राय वह चबूतरे पर बठ जाते थे, जिसपर मैंने तिनका की चादर बिछा दी थी, और धीरे-धीरे, हर शब्द को तौलते हुए अपनी बात कहना शुरू करते थे। वह कहते

"तू अपनी मा का अग है, जिसे चीरकर अलग कर दिया गया है। उसके अब नयी सतानें होगी, जिन्हें वह तुझसे अधिक प्यार करेगी। और नानी का हाल तो तू देख ही रहा है—उसे नशे की लत गयी है।"

बीच-बीच मे वह देर तक मौन साध लेते, मानो कान लगाकर कुछ सुन रहे हा। और फिर एक एक कर उनके वजनदार शब्द कर्णकुहरा मे प्रवेश करने लगते। वह कहते जाते

"एक बार पहले भी उसने पीना शुरू किया था। उस वक्त मिखाईल के नाम फौज मे भरती का हुक्मनामा आया था। उसने मुझसे कह सुनकर उसे रगरूटी से मुक्ति का प्रमाणपत्र खरीदवा दिया था। इस मूर्खता के कारण उसका जीवन ही चौपट हो गया, क्योकि अगर वह फौज मे चला जाता, तो शायद आज आदमी होता। यही तो क़िस्मत का खेल है मेरी तो अब चलाचली की बेला है आज मरे, कल दूसरा दिन। ऐसा हुआ, तो तू अकेला पड जायेगा चाहे जिये या मरे। इसीलिए कहता हू कि अपना काम आप ही करना सीख।

कभी दूसरो का मुह मत जोह। आदमी को चाहिए कि सदा शात और सुस्थिर, पर अपने मार्ग पर अडिग रहे। बात सब की सुन, पर कर वह, जो अपने को जचे "

बूदा-बादी के दिनो को छोड मैंने पूरी गमिया बाग मे बितायीं। नानी ने मुझे बिस्तर के लिए नमदे का एक टुकडा दिया था। उसी को बिछाकर गर्मी की रातो मे भी मैं वहीं सोता था। अक्सर वह खुद रात को वहीं सोने चली आती। वह अपने साथ पुआल की ढेरी लेती आती और उसे मेरे बिछावन की बगल मे बिछाकर पड रहती और लगती कहानिया सुनाने। कहानी का तार कभी-कभी हठात टूट जाता। वह सहसा चिल्ला उठती

"देख! वह तारा टूटा। यह कोई पवित्रात्मा है, जो धरती पर वास करने आ रही है। आज कहीं न कहीं किसी लायक आदमी का जन्म हुआ होगा।"

फिर मुझे दिखाते हुए कहती –

"वह देख – नया सितारा! आकाश मे कसे जगमग कर रहा है? ओह, आकाश, प्यारे आकाश, तू ईश्वर का रत्न जडित परिधान है "

नाना आकर कहते

"मौत को बुला रहे हो तुम दोनो! खुले मे सोते हो! गठिया धर लेगा किसी दिन या चोर सोते मे आकर दोनो का गला रेत देंगे "

दिन बीत जाता और सूर्य धीरे धीरे अस्ताचलगामी होता। विदाई मे वह आकाश में आग बिखेर देता, जिसके बुझते हुए लाल शोले बाग की मखमली हरी चादर पर रतनार राख फला देते। इसके बाद यकायक अधकार का परदा फैल जाता, जो गोधलिबेला की ऊष्णता समेटकर सारी जगती पर आच्छादित हो जाता। घाम मे पगी पत्तिया डालो पर झुक जातीं और दूब सर नवा लेती। हर चीज मे अनोखी मधुरिमा भर जाती और मीठी सुवास उडने लगती, जसे सगीत की मद स्वर लहरी। दूर खेतो मे लगे फौजी खेमो से आनेवाली सगीत की तानें सुरभिपूर्ण समीर मे भर जातीं। रात अपने साथ मा के प्यार जसा भावो का सशक्त और ताजा आवेश लाती। उसकी स्तब्धता मा की मीठी पुचकार की तरह मोरपख के चवर से हृदय की सारी व्यथा – दिन भर की जमी सारी कडवाहट और मल – को झाडकर

अलग कर देती। मन अनिवचनीय शांति और सतोष से भर उठता। शून्य के नीचे लेटे हुए तारो को एक एक कर निकलता देखने मे अनूठा रस प्राप्त होता था। प्रत्येक सितारा उदित होकर अथाह गगन मे गहराई की नयी माप का सकेत करता था। ये गहराइया हल्के अदश्य हाथो से हमे अपनी गोद मे उठा लेतीं और तब यह कहना कठिन हो जाता कि धरती सिकुडकर हमारे आकार मे आ गयी या हमीं विस्तृत और विकीण होकर जगती के साथ एकाकार हो गये। रात की अधियारी घनी, गहरी, शून्य और नीरव होती जाती। लेकिन सभी ओर सवेदनशील अदश्य तार खिचे होते, जो हर ध्वनि–नीड मे किसी पछी का गान, पास की झाडी मे साही के काटो की सरसराहट, दूर से आनेवाली किसी मनुष्य की आवाज–को झकृत कर देते। दिन की ध्वनियो की तुलना मे ये अनोखी विशिष्टता प्राप्त कर लेते–रजनी की सूक्ष्मग्राही निस्तब्धता मानो प्यार से उनमे एक नवीनता ला देती।

हवा मे उडती बीन की मधुर सगीत लहरी, किसी स्त्री की मधुर हसी, सडक के पत्थर पर तलवार की झन-झन, कुत्ते की हूक–ये ध्वनिया अस्त होते दिवस के झडते पत्तो के समान होतीं।

कभी गली या मदान मे मधुशाला से लौटनेवाला का कोलाहल या गली की इटो पर भागते परो की आहट प्रतिध्वनित हो उठती। पर ये साधारण ध्वनिया थीं, जिनपर कान देने की भी जरूरत न थी।

नानी सिर के नीचे हाथ का तकिया लगाये घटो लेटी रहतीं और हल्के आवेशपूण स्वर मे कोई कहानी सुनाया करतीं। मैं सुन रहा हू या नहीं, इसकी भी परवाह उसे न रहती–इतनी तल्लीन हो जाती वह उस वातावरण मे। सदा वह कोई ऐसी ही कहानी छेडती, जो रात की उस सौंदयपूण निस्तब्धता मे निखार ला देती।

सोता मैं नानी की लयबद्ध स्वर-लहरी की थपकियो मे और उठता चेहरे पर सूय की प्रभा और कान मे पक्षियो का कलरव गान लेकर। धूप की गर्मी पाकर प्रभाती समीर की गति मधुर मद हो जाती। सेब वक्षो के पत्ते ओस की बूदें झाडकर जाग उठते। हरी घास कुहासे की चादर के नीचे अनोखी आब से चमकने लगती। बाल सूय की किरणो का आकाश मे वितान तन जाता। वे उसके बनफशई रग को शुभ्र नीलिमा मे परिवर्तित कर देतीं। उपर दूर, कहीं दूर, अदृष्ट लवा

पछी रस की फुहार बरसाने लगता। नवोदित दिवस की हर ध्वनि और हर रंगीनी मेरी आत्मा को रस से सराबोर कर देती। हृदय उल्लास से भर जाता। मन होता कि उठूं और उठकर समस्त सृष्टि के साथ एकाकार हो जाऊं।

मेरे सम्पूर्ण जीवन का यह सबसे शांत, सुस्थिर एवं चिंतनशील समय था। उस साल की ग्रीष्म ऋतु मे मेरे अंदर अपनी शक्ति के प्रति नवीन आस्था जागी। मैं लोगों से कतराने लगा। ओव्स्यानिकोव घराने के बच्चो का कोलाहल अब मुझे आकर्षित नहीं करता था। और ममेरे भाई जब मुझसे मिलने आते, तो प्रसन्न होने के बदले यही चिंता लगी रहती कि कहीं मेरे बाग की—मेरे अपने हाथों निर्मित कोई चीज नष्ट न हो जाये।

अब नाना के उपदेशो मे भी मुझे दिलचस्पी नहीं मालूम होती थी। उनकी बातें अधिकाधिक नीरस होती जाती थीं। सदा भुनभुनाते और निःश्वास छोडते वह खुद भी नीरस हो गये थे। आजकल नानी के साथ उनकी अक्सर लडाई हो जाया करती थी। ऐसे अवसरों पर वह नानी को घर से निकाल देते। नानी याकोव मामा या मिखाईल मामा के घर चली जाती। कभी-कभी वह लगातार कई दिनों तक घर न लौटती। तब नाना को अपने हाथों चूल्हा फूकना पडता। खाना पकाते वक्त वह उंगलियां जला लेते, रकाबियां फोड डालते, निरंतर चीखते चिल्लाते, सबको कोसते जाते और स्पष्टतः अधिकाधिक कंजूस होते जा रहे थे।

बाग मे वह कभी-कभी मेरे कोने मे आ जाते और आराम से घास पर बैठ जाते—बिल्कुल मौन। बडी देर तक मुझे ताकते, फिर यकायक चुप्पी तोडते हुए पूछ बैठते

"कुछ बोलता क्यों नहीं तू?"

"क्या बोलू?"

वह उपदेश शुरू कर देते

"हम साधारण लोग हैं, रईसजादे नहीं। हमे कोई सिखाने नहीं आयेगा—जो सीखना है खुद ही। किताबें और स्कूल सब दूसरों के लिए बने हैं—हमारे-तुम्हारे जैसों के लिए नहीं। हमे तो आप ही अपनी जरूरत पूरी करनी पडती है "

बोलते-बोलते वह सोच मे डूब जाते—मौन और निश्चल। उस समय उनकी ओर देखते हुए डर लगता था।

उसी साल पतझड के महीनो मे उन्होंने मकान बेच दिया। बिक्री के एक रोज पहले नाश्ते के वक्त उन्होंने उदास, किन्तु दृढ़ स्वर मे नानी से कहा

"वर्वारा की मां! बहुत दिनो तक तुम्हें खिलाया, पर अब यह गाडी नहीं चलने की। अब अपना इतजाम खुद देख लो।"

इस घोषणा का नानी पर रत्ती भर असर नहीं पडा, मानो वह बहुत दिनों से इसी का इतजार कर रही थी। उसने धीरे-से अपनी नासदानी निकाली और नाक मे एक चुटकी नास डालती हुई बोली

"करना है, तो करना ही पडेगा। क्या रखा है इन बातो मे।"

नाना ने एक सुले कूचे मे एक पुराने मकान के सब से निचले हिस्से मे दो अधेरी कोठरिया किराये पर ले लीं। सामान ढोते वक्त नानी ने सूखी छाल का एक पुराना जूता निकाला, जिसमे लम्बा फीता लगा हुआ था, और उसे अलावघर मे खोस दिया। फिर जमीन पर बैठकर बौने भूत को पुकारने लगी

"बौने भूत! यह रही तुम्हारे लिए गाडी, हमारे साथ नये घर मे नये सुख-सौभाग्य के लिए चले चलो "

नाना उस वक्त आगन मे थे। उन्होंने खिडकी से झाककर देखा। बोले

"अच्छा! बौना भूत भी साथ चलेगा? काफिर कहीं की। तू मेरी भी हसी करायेगी।"

नानी ने गम्भीर चेतावनी देते हुए कहा

"बाबू! यह क्या बक रहे हो? ऐसी बातें नहीं कहते, बुरा नतीजा होगा।" लेकिन नाना ने उसे जोर से डाटा और बौने भूत को साथ ले चलने से मना कर दिया।

तीन दिनो तक घर के सामानो की बिक्री चलती रही। इस्तेमाली सामानो को खरीदनेवाले तातारो का घर मे जमघट लगा हुआ था। हर सामान पर मोलभाव—बिगडना मनाना, कोसना चिल्लाना। नानी खिडकी मे बैठकर सारा दृश्य देखती रहती—कभी हसने लगती और कभी आखो मे आसू छलछला आते। धीमे स्वर मे वह कहती

"ले जाओ, भाई। ले जाओ सब कुछ—तोड डालो सब कुछ!"

मुझे भी ग्राग या अपना यह काला छोड़ने के खयाल से रुलाई ग्रा रही थी।

हम लोगो को ले जाने के लिए दो गाडिया ग्रायीं। एक म सामान के ढेर के उपर मैं चढ गया। गाड़ी सारे सामान को भरकर ऐसे हिलडुल रही थी, जसे भूचाल ग्रा रहा हो। मुझे लगता था ग्रब गिरा तब गिरा।

ग्रगले दो साल—मा की मृत्यु पर्यंत—ऐसे ही भचाल की स्थिति मे जिंदगी बीती।

सदा यही शका बनी रही—ग्रब गिरा तब गिरा।

नये घर मे जाने के कुछ ही दिन बाद मा हम लोगों से मुलाकात करने ग्रायी। वह दुबली हो गयी थी—चेहरा पीला ग्रौर बड़ी-बड़ी ग्राखें दीप्त ग्रौर विस्मय विस्फारित! वह हरेक चीज को यो घूर रही थी, मानो पहले पहल ग्रपने मा-बाप को या मुझे देख रही हो। वह ताकती ही रही, बोली नहीं। उधर मेरे सौतेले पिता हल्के हल्के सीटी बजाते, खासते, पीठ मे पीछे उगलिया बजाते हुए कमरे में चहल कदमी कर रहे थे।

मेरे गालो को ग्रपनी गरम हथेलियो मे लेकर मा बोली

"हे भगवान, कितना बडा हो गया है यह!"

वह ढीला-ढाला बदनुमा कत्थई फ्राक पहने थी। फ्राक पेट के पास ऊचा उठा हुग्रा था।

सौतेले पिताजी ने मेरी ग्रोर हाथ बढ़ाते हुए कहा

"नमस्ते दोस्त! खरियत से तो हो न?"

नाक सिकोडकर हवा को सूघते हुए वह बोले

"बडी सील है यहा!"

दोनों थके थके ग्रौर ग्रस्त व्यस्त दीख रहे थे, मानो भागकर ग्रा रहे हा ग्रौर विश्राम करने को उत्सुक हो।

चाय की मेज पर नीरसता ग्रौर उदासी छायी रही। नाना मौन ग्रौर गुमसुम खिडकी के शीशे पर वर्षा की बूदो का दौडना देख रहे थे। उन्होंने पूछा

"तो ग्राग मे सब कुछ स्वाहा हो गया?"

"सब कुछ," मेरे सौतेले पिता ने स्वर मे दृढ़ता भरकर कहा। "हम लोग खुद ही मुश्किल से बचे "

"हु! आग तो आग ठहरी!"

मा ने नानी के कान मे कुछ कहा, जिसे सुनकर उसने ऐसे आखें सिकोडीं, मानो अचानक चौंधिया गयी हो। वातावरण और भी नीरस और उदासीभरा हो गया।

नाना से न रहा गया। उन्होंने ऊचे, पर शात और चुभते स्वर मे कह ही दिया

"येव्गेनी वासील्येविच! मैंने उडती खबर सुनी है कि आग वाग कुछ नहीं लगी थी। तुमने जुए मे अपना सब कुछ गवा दिया "

कमरे मे मौत का सा सन्नाटा छा गया। केवल खिडकी पर बूदा की टप-टप और समोवार मे भाप की सू-सू सुनायी पड रही थी।

आखिर मा ने मौन भग किया। वह बोली

"बाबूजी "

नाना बीच ही मे तडप उठे

"बाबूजी! बाबूजी क्या? अभी आगे जो दुर्गति होगी, वह बाकी है। मैंने उसी वक्त कहा था—बीस का तीस से मेल नहीं बठ सकता। शादी अपने ही दर्जे के लोगो मे करनी चाहिए। अब मजा मिल गया। 'भलामानस है! रईस है!' अब बन चुकीं रईस की बहू। पा लिया मजा? क्यो बिटिया?"

इसके बाद रसोईघर मे हगामा मच गया। सभी जोर जोर से बोलने लगे। मेरे सौतेले पिताजी की आवाज सबसे ऊपर थी। मै ड्योढ़ी मे जाकर लकडियो के ढेर पर बठ गया—मूक और स्तब्ध। यह क्या मेरी वही मा है? नहीं, नहीं—यह तो कोई और है। बिल्कुल अजनबी। कमरे मे यह फक इतना साफ दिखाई नहीं दे रहा था, मगर ड्योढी के अधेरे मे तो उसका पुराना चित्र मानसपटल पर बिल्कुल सजीव हो गया।

मुझे याद नहीं है कि कब और कसे हम लोग सोर्मोवो मे जा बसे। हमारा नया मकान कुदो का बना था। दीवारें नगी थीं, कागजी छींट के बिना। बल्लो के बीच की दरारें पटुआ ठूसकर बद की गयी थीं। अनगिनत तिलचटो ने उनके अदर अपना घर बना रखा था। गली की ओर दो कमरों मे मा और सौतेले पिताजी रहा करते थे। नानी तथा मै रसोईघर मे थे, जिसकी एक खिडकी छत पर खुलती थी। छत के

उस पार कारखाने की काली चिमनियां नज़र आती थीं। उनके मुह से चक्कर काटता घना धुआं निकला करता था और जाड़े की हवा से समूची बस्ती के ऊपर फल जाता था। हमारे ठडे कमरों मे हमेशा धुए की बडी तेज गध फली रहती थी। रोज तडके कारखाना का भोपू भडिया की तरह चीख उठता था

"हू ऊऊ!!!"

खिडकी के पास बेंच रखकर मैं उसपर चढ़ जाता और सबसे ऊपर के शीशे से कारखाने को देखा करता। उसका रोगनी से जगमग फाटक बूढ़े भुक्खड़ो के पोपले मुह की तरह अनगिनत आदमियो की चींटो जसी कतार को निगल जाता। दोपहर को दूसरा भोपू बजता और फाटक के काले होठ खुल जाते। उसके अदर के एक गहरे छेद से कारखाना फिर आदमियो की भीड को उगल देता—अच्छी तरह चूस और चबा लेने के बाद। बाढ के जल की तरह गली मे एक काली पात फल जाती और फिर मानो श्वेत हवा के झोकों से घरो मे समा जाती। नील गगन यहा शायद ही कभी दिखाई देता। बस्ती की छतो और कालिख से लदी बर्फ के टीलों के ऊपर दूसरा ही चदोवा तना होता—भूरा और सपाट—जिसके भद्देपन को देखकर आखें अपने आप ही बद हो जातीं और कल्पना कुण्ठित हो जाती।

शाम के वक्त कारखाने के ऊपर उदासीभरी लाली फल जाती। चिमनियां के सिर उससे प्रकाशित हो जाते। ऐसा लगने लगता कि उनकी उत्पत्ति धरती से नहीं हुई हैं, बल्कि वे भयानक आकाश के सूड हैं, जो लटककर आग पीते हैं और छककर आग पीने के बाद जोर जोर से डकार लेते हैं। रोज एक ही दृश्य को देखते-देखते मेरा हृदय गहरी वितृष्णा से भर गया। मन वातावरण से विद्रोह कर उठा। घर का सभी काम काज नानी करती थी। खाना पकाती, फश धोती, लकडी काटती, पानी भरती—यही उसका जीवन क्रम हो गया था। शाम होते होते वह थकावट से चूर हो जाती और नि श्वास छोडती तथा कराहती हुई बिस्तर पर चली जाती। कभी कभी दिन का खाना तयार करने के बाद रूईदार जकेट पहन और घाघरा समेट वह शहर रवाना हो जाती थी। कहती

"देख आती हू, बुड्ढे का क्या हाल है "

"मुझे भी साथ ले चलो।"

"देखता नहीं है हवा कसी बर्फीली है। तू टण्ड से ठिठुर जायेगा।"

शहर वहा से लगभग सात किलोमीटर दूर था और बीच का रास्ता बफ से ढका हुआ। नानी पदल निकल जाती। मा का चेहरा जद और शरीर गर्भावस्था के कारण सूजा हुआ था। वह किनारो पर झालर लगे एक भूरी शाल मे, जो अपने आखिरी दिनो को पहुच चुकी थी, लिपटी सिकुडी बठी रहती। मैं उस शाल से हृदय से घृणा करता था, क्योंकि उसमे उसकी लम्बी चौडी सुदर देह अजीब और भद्दी मालूम होती थी। झालर के फटे सिरों को मै और फाड दिया करता था। यह मकान, यह कारखाना, पूरी बस्ती, यह सभी कुछ मुझे फूटी आखा नहीं सुहाता था। परों मे नमदे का फटा जूता पहने मा घर मे घूमा करती थी। वह बराबर खासती रहती थी। खासने से उसका निक्ला हुआ पेट हिलने लगता था। उसकी भूरी-नीली आखो से मूक विक्षोभ की विचित्र ज्वाला निक्ला करती थी। प्राय वे यो ही, निर्जीव-सी नगी दीवारो को ऐसे एकटक ताकती रहती थीं, मानो वहीं चिपक गयी हो। कभी-कभी वह लगातार घटो गली की ओर अपनी शून्य दृष्टि गडाये रहती। गली भी अजीब थी—गदे आदमी के जवडे की तरह, जिसके कुछ दात उम्र से काले और भद्दे हो गये हैं, कुछ झड चुके हैं और उनके स्थान पर नये दात बठा दिये गये हैं, जो जवडे के लिहाज से बहुत बडे हैं।

मैंने पूछा

"हम लोग यहा क्यो रहते हैं?"

"ओफ! मत पूछ ये बातें," उसने गहरी व्यथा के साथ कहा।

आजकल वह मुझसे बहुत कम बोलती थी—केवल जरूरी होने पर। जसे

"वह उठा ला, इसे ले जा, जरा यह ले आ," आदि

वह मुझे बहुत ही कम बाहर निकलने देती, क्योकि मैं जब भी खेलने जाता, अपने सायियो से पिट पिटाकर लौटता था। ये लडाई-झगडे मेरे लिए मनोरजन के एकमात्र साधन थे। अपने उग्र स्वभाव के कारण मै पूरे जोश से मुक्केबाजी के दगलो मे पिल पडता था। घर आने पर मा मुझे कोडे से पीटती थी। पर इससे चिढ़कर अगली बार

मैं और जोर शोर से लडता था। मां भी दण्ड की मात्रा बढा देती थी। एक दिन मैंने उससे कहा

"मारोगी, तो दात काट लूगा और भागकर वन मे जान दे दूगा।"

वह हक्की-बक्की रह गयी और मुझे ठेलकर लगी कमरे म चक्कर लगाने। आवेश से हाफ्ती हुई बोली

"दुष्ट! जानवर!"

स्नेह नामक सजीव और मनमोहक इद्रधनुष मेरे जीवनाकाश से ग्रस्त हो गया था। उसकी जगह छा गयी अलक्ष्य रोष की नीली लपटें और असतोष की ज्वाला। हर चीज के प्रति मेरे मन मे द्वेष की भावना जाग उठी। उदास और निर्जीव वातावरण मे भारी असन्तोष और एकाकीपन की अनुभूति होती थी।

सौतेले पिताजी का व्यवहार मेरे प्रति सख्त और मा के प्रति रूखा था। वह सदा मुह से सीटी बजाते, खासते और खाने के बाद शीशे के सामने खडे होकर अपने टेढ़े-मेढ़े दातो को तिनके से खोदते रहते थे। मा से झगडने की उनकी आदत-सी हो गयी थी और इन झगडो की सख्या दिनादिन बढ़ती जा रही थी। मा के साथ वह रुखाई से पेश आते थे, जिससे मुझे बहुत क्षोभ होता था। झगडा होता, तो वह रसोईघर का दरवाजा बद कर लेते। स्पष्टत वह नहीं चाहते थे कि मै उनकी बात सुनू। पर मै कान लगाकर भीतर से आती उनकी गजन-तजन की आवाज सुना करता था।

एक दिन बडे जोर से पर पटककर और चिल्लाकर उन्होंने कहा

"कुतिया कहीं की! तेरा पेट फूलने के कारण मै किसी को घर मे नहीं बुला सकता।"

विस्मय और विक्षोभ के मारे मैं अलावघरवाले चबूतरे पर उछल पडा। सिर इतने जोर से छत से टकरा गया कि दात से जीभ कट गयी।

शनिवार को दजनो मजदूर हमारे घर कारखाने के कूपन बेचने आया करते थे, जो उन्हे कारखाने की दूकान से खाने-पीने का सामान खरीदने के लिए मिलते थे। कारखाना तनखाह की जगह पर कूपन ही दिया करता था। सौतेले पिताजी उन्हे आधे दाम पर खरीद लेते थे।

वह रसोईघर मे ख़ूब गभीर चेहरा बनाकर मेज पर बठ जाते। मजदूरों को वहीं बुलाया जाता। कूपन को हाथ मे लेकर वह उलट-पुलटकर देखते और माथे पर बल डालकर कहते

"डेढ़ रूबल मिलेगा।"

"क्या कह रहे हैं आप, येव्गेनी वासील्येविच? भगवान के लिए " मजदूर आजिजी से कहता।

"कह तो दिया। डेढ़ रूबल।"

गदे, घिनौने जीवन का यह क्रम जल्द ही खत्म हो गया। मा के बच्चा होने के कुछ ही दिन पहले मुझे नाना के घर बुला लिया गया। वह इन दिनो कुनाविनो बस्ती मे पेस्चानाया सडक पे एक दो मजिले मकान मे रह रहे थे। सडक नपोल्नाया गिरजाघर के कब्रिस्तान की ओर जाती थी। उन्हे एक छोटा-सा कमरा मिला हुआ था, जिसमे एक बडा-सा रूसी अलावघर था। कमरे की दो खिडकिया आगन की ओर खुलती थीं।

मुझे देखकर वह किलकारी मारकर हसे और बोले

"आ गया तू! यही तो बात है। कहावत है मा सबसे सगी होती है, लेकिन तेरे काम आ रहा है, तेरा बुड्ढा बेवकूफ नाना ही अरे, तुम लोग "

नये घर से अच्छी तरह परिचित भी न होने पाया था कि मां और नानी नवजात शिशु को लिये हुए वहीं आ गयीं। हुआ यह कि मेरे सौतेले पिता मजदूरो को ठगने के अपराध मे कारखाने से निकाल दिये गये, लेकिन वह कहीं गये और उन्हें फौरन ही रेलवे स्टेशन पर खजाची की जगह मिल गयी।

बहुत सा समय यो ही गुजर गया और मुझे फिर मा के पास भेज दिया गया। वे लोग पत्थर के एक मकान के सबसे निचले हिस्से मे रह रहे थे। मा ने फौरन मेरा नाम स्कूल मे लिखा दिया, लेकिन स्कूल से मुझे पहले ही दिन से चिढ़ हो गयी।

मै निराली सूरत बनाये स्कूल पहुचा। परो मे मा के जूते, नानी का ब्लाउज काटकर बनाया गया कोट, पीली क़मीज और ढीला-ढाला पतलून। लडको ने देखते ही हसना शुरू कर दिया। पीली क़मीज के कारण मेरा नाम 'ईंट का एक्का' रख दिया गया। लडको से तो मैंने

शीघ्र ही निपट लिया, लेकिन पादरी साहब और मास्टर भी मुझसे चिढ़े रहते थे।

मास्टर साहब गंजे थे। उनका चेहरा पीला था और उन्हें नकसीर की बीमारी थी। नाक में रूई के गाले खोंसे हुए वह क्लास में आते। डेस्क पर बैठकर नकियाती आवाज में वह सवाल पूछना शुरू करते। फिर किसी शब्द के बीच ही में रुककर नाक से रूई निकालकर देखने और लगते सिर हिलाने। चेहरा उनका चपटा, पीतल के रंग का, चिड़चिड़ा था। उसपर झुर्रियां पड़ी थीं और उनके अंदर हरी काई-सी जमी मालूम पड़ती थी। सवथा अनावश्यक और बेजान आखें, इस चेहरे को खास तौर पर बहुत भोंडा बना देती थीं। वे मुझपर ही जमी रहती थीं, जिससे हमेशा यह इच्छा होती थी कि गालों को हथेली से साफ करूं।

शुरू में कुछ दिन मैं आगे की बेंच पर बैठा—ठीक मास्टर साहब की नाक के नीचे। पर उनकी वह दीठ असह्य हो गयी। ऐसा लगता कि वह सदा मुझपर आखें गड़ाये रहते हैं। अपनी नकियाती आवाज में वह अक्सर यही कहते रहते

"पेस्कोव! अपनी क़मीज़ बदल! पेस्कोव! पांव रगड़ना बंद कर! पेस्कोव! फिर तूने अपने जूतों से फ़र्श मैला कर दिया!"

मैं भी खूब शरारत करके इसका बदला लेता था। एक दिन मैं आधा तरबूज ले आया, जो बर्फ में जम गया था। उसका गूदा निकालकर मैंने अंधेरी ड्योढ़ी की ओर के दरवाजे के ऊपर एक छोटी सी घिरनी में बांध दिया। दरवाजा खुलने से तरबूज ऊपर उठ जाता था, पर मास्टर साहब के दरवाजा बंद करते ही वह टोपी की तरह उनके गंजे सिर पर लटक आता था। इसके बाद तो दरबान मुझे मास्टर साहब की चिट्ठी के साथ घर लिवा ले गया। वहां मेरी खूब मरम्मत हुई।

एक दिन मैंने उनके डेस्क की दराज़ में सुंघनी छिड़क दी। मास्टर साहब को ताबड़तोड़ छींकें आने लगीं और वह क्लास छोड़कर भागे। घर जाकर एवज़ में उन्होंने अपने दामाद को भेज दिया, जो फ़ौजी अफ़सर था। उसने हम लोगों से कई बार "ईश्वर ज़ार को चिरायु

करे," और "हम स्वतन्त्र, हम स्वतन्त्र" गवाया। कोई लडका बेसुरा गाने लगता, तो वह उसके सिर पर ऐसे हास्यास्पद और जोर से आवाज पदा करनेवाले खास ढग से रूलर मारता, जिससे चोट लगती।

बडे-बडे तथा मुलायम बालो वाला एक नौजवान और खूबसूरत पादरी हम लोगो को धम की शिक्षा दिया करता था। वह भी मुझसे चिढता था, क्योंकि मेरे पास 'बाइबिल की पवित्र किताब' नहीं थी। दूसरे, मैं उसकी बोली की नकल किया करता था।

क्लास मे आते ही वह सवाल करता

"पेशकोव! बोल, किताब लाया है या नहीं? हां, किताब?"

"नहीं। नहीं लाया। हां।"

"क्या—हा?"

"नहीं।"

"तो उठ यहां से। जा घर। हां, घर। मैं तुझे पढाने का इरादा नहीं रखता। हां। इरादा नहीं रखता!"

क्लास से निकाले जाने मे मुझे जरा भी आपत्ति नहीं होती। मैं उठकर चल देता और स्कूल खत्म होने तक बस्ती की गदी गलियो मे घूमकर चारों ओर के कोलाहलपूर्ण जीवन का निरीक्षण किया करता।

पादरी का चेहरा पानीदार था। मुह की काट ईसामसीह जैसी और आखें स्नेहपूण, नारी जसी थीं। उसके हाथ छोटे-छोटे थे, जो हर चीज को, चाहे वह किताब हो, या क़लम, या रूलर, बडे स्नेह से पकडते। ऐसा लगता था कि वह सभी वस्तुओ को सजीव समझकर प्यार करता है और छूते वक्त डरता रहता है कि कहीं टूट न जायें। पर लडकों के प्रति उसकी वसी ममता नहीं थी। फिर भी लडके उसे चाहते थे।

क्लास मे मुझे अच्छे नम्बर मिलते थे। इसके बावजूद मुझे सूचना मिली कि आचरण ठीक न होने के कारण स्कूल से निकाल दिया जाऊगा। इस खबर से मैं घबरा उठा। स्पष्ट था कि स्कूल से निकाले जाने का घर पर भी बुरा परिणाम भुगतना पडता, क्योंकि मा का स्वभाव दिनोदिन बहुत ही चिडचिडा होता जा रहा था और वह मुझे बहुत पीटने लगी थी।

लेकिन बीच ही मे एक ऐसी घटना घटी कि मै इस श्राफ्त से बच गया। मेरे स्कूल मे एक दिन अचानक बिशप ख्रिसाफ* का आगमन हुआ। वह जादूगर से लगते थे और जहा तक मुझे याद है कुबडे थे।

जमीन तक लोटनेवाला काला चोगा और सिर पर बालटी जसी टोपी पहने इस नाटे से आदमी के क्लास मे आते ही न जाने कहा से प्रफुल्लता का एक अनोखा वातावरण छा गया। वह डेस्क पर बठ गये और अपनी लम्बी चौडी आस्तीनो से दोनो हाथ बाहर निकालकर बोले

"हा तो बच्चो! आओ हम लोग कुछ बातचीत करें।"

सभी डेस्क के पास जा रहे थे। मेरा नाम अत मे आया। मुझसे उन्होने पूछा

"क्या उम्र है तुम्हारी? ऍं! इतनी उम्र मे ही इतने लम्बे चौडे हो गये? खूब बरसात का पानी सोखा होगा!"

लम्बे, नुकीले नाखूनो वाला दुबला पतला एक हाथ डेस्क पर रखकर और दूसरे हाथ से अपनी छोटी-सी दाढ़ी पकडकर उन्होंने स्नेहपूर्ण आखो से मेरी ओर देखा और बोले

"अच्छा, धार्मिक इतिहास की कोई कहानी याद हो, तो सुनाओ।"

जब मैंने कहा कि मेरे पास किताब नहीं है, इसलिए धार्मिक इतिहास मैं नहीं याद कर सका, तो अपनी पादरियो वाली ऊची टोपी सीधी करते हुए बोले

"यह तो ठीक नहीं। ये पाठ तो तुम्हें जरूर याद करने चाहिए। अच्छा, किताब से बाहर की कोई चीज याद है—कहीं किसी से सुनी हुई कहानी ही सही? 'भजन सहिता' का नाम सुना है? बहुत अच्छा! और बाइबिल की प्रार्थनाए याद हैं? लो, यह भी तुम्हें

---

*बिशप ख्रिसाफ ने 'प्राचीन विश्व के धर्म' शीर्षक से तीन खण्डोमे एक निबन्ध लिखा था। इसके अलावा उनके कई लेख निकले थे। इनमे 'नारी और विवाह' शीर्षक लेख पढकर युवावस्था मे मैं बहुत प्रभावित हुआ था। लगता है मुझे उसका शीर्षक सही तौर पर याद नहीं है। वह आठवें दशक के एक धार्मिक पत्र मे प्रकाशित हुआ था।—ले०

मालूम है? और सतों की जीवनी जानते हो? ए, कविता मे सतो की जीवनी सीखी है? शाबाश, तुम तो बडे विद्वान हो जी।"

इतने मे हमारे क्लास का पादरी आ गया—दौडता, हाफता हुआ। बिशप से आशीर्वाद पाने के बाद वह उनसे मेरे बारे मे कहने लगा। बिशप ने हाथ के इशारे से उसे रोककर कहा

"जरा रुकिये " और फिर मेरी ओर मुडकर बोले

"अच्छा, भक्तराज अलेक्सेई की कहानी जरा सुनाओ तो "

मैंने सुनाना शुरू किया। बीच की एक लाइन याद न रहने के कारण मैं रुक गया। बिशप ने कहा

"शाबाश बेटे! कितनी सुदर कहानी है—क्यो? अच्छा अब राजा दाऊद के बारे मे कुछ जानते हो? ठीक! बहुत ठीक! सुना जाओ तो!"

स्पष्ट था कि उन्हे ये पद्य अत्यत प्रिय हैं और मेरे पद्यपाठ से उन्हें हार्दिक रस प्राप्त हो रहा है। बडी देर बिना टोके वह सुनते रहे। फिर बोले

"तुमने अक्षर अभ्यास भजन सहिता से किया था? कौन पढाता था तुम्हे? तुम्हारे अच्छे नाना! क्या कहा तुम्हारे बुरे नाना? सच? तुम बहुत शरारत करते हो क्या?"

मैं शम से गड गया, लेकिन अपना अपराध स्वीकार कर लिया। मास्टर साहब और पादरी साहब ने अपनी लम्बी गवाहिया द्वारा उसकी पुष्टि की। बिशप गर्दन झुकाये सुनते रहे। अत मे नि श्वास छोडकर बोले

"सुना न तुमने क्या कह रहे हैं ये लोग? अच्छा, यहा आओ।"

अपना एक हाथ, जिससे चदन की मद सुगधि आ रही थी, उन्होंने मेरे मस्तक पर रखकर पूछा

"तुम क्यो इतनी शरारत करते हो?"

"स्कूल मे मेरा मन नहीं लगता," मैंने जवाब दिया।

"मन नहीं लगता? यह क्या कहते हो, बेटा? मन नहीं लगने से तुम पढ ही नहीं सकते थे, पर तुम्हारे नम्बरो से तो यही मालूम होता है कि बात ऐसी नहीं है। बात जरूर कुछ और ही है।"

उन्होंने भीतर की जेब से एक छोटी-सी किताब निकाली और उसपर लिखा

"पेशकोव, अलेक्सेई। बेटा, तुम्हें शरारत नहीं करनी चाहिए। कभी कभार कुछ शरारत कर बठो, तो कोई बात नहीं, पर ज्यादा शरारत अच्छी नहीं। लोग उसे बर्दाश्त नहीं करेंगे। समझे न? क्यों बच्चो, मैं ठीक कह रहा हू न?"

पूरा क्लास प्रफुल्ल स्वर मे बोल उठा

"आप ठीक कहते हैं!"

बिशप ने लडको से पूछा

"लेकिन तुम लोगो का अपना क्या हाल है? तुम लोग खुद तो बहुत कम बदमाशी करते होगे?"

"जी नहीं। बहुत करते हैं! बहुत!" लडको ने क्लास को हसी से गुजाते हुए जवाब दिया।

बिशप ने मुझे अपने पास खींच लिया और कुर्सी की पीठ से सटकर विस्मयसूचक स्वर मे कहा

"एक बात जानते हो? जब मैं तुम्हारी उम्र का था, तो मैं भी बडा शरारती था। बचपन मे सभी न जाने क्यो ऐसे होते है!"

सारा क्लास फिर हस पडा। यहा तक कि मास्टर और पादरी भी हसने लगे।

सारा क्लास लडको की हसी से गूज उठा। बिशप उनसे सवाल पूछते जाते थे और जवाबो को पहेली बनाकर लडकों को उलझाते जाते थे। पूरे क्लास मे हसी-खुशी की लहर-सी फल गयी। अत मे बिशप उठ खडे हुए। चलने लगे तो बोले

"नटखट नन्हो की इस टोली को छोडने को मन नहीं हो रहा है। पर अब चलने का वक्त हो गया है।"

हाथ उठाकर और लम्बी चौडी आस्तीन खिसकाकर उन्होंने क्लास के ऊपर सलीब का निशान बनाते हुए आशीर्वाद दिया

"भगवान तुम्हे चिरायु और यशस्वी करे! विदा!"

बच्चा ने चिल्लाकर जवाब दिया

"विदा, धर्म पिता! फिर जल्दी ही आइयेगा।"

अपनी ऊची टोपी हिलाते हुए उन्होंने कहा

"जरूर। मैं फिर आऊगा और तुम लोगो के लिए किताबें भी लाऊगा।"

फिर मास्टर साहब की ओर मुडकर बोले

"अब आज लडको को छुट्टी दे दीजिये।"

डयोढ़ी मे मुझे रोककर वह धीमे स्वर मे बोले

"वादा करो कि अब इतनी शरारत नहीं करोगे   ठीक?" फिर निःश्वास छोडते हुए कहा, "तुम्हारे बदमाशी करने का मूल कारण क्या है, यह मुझसे छिपा नहीं है। अच्छा, विदा!"

बिशप के इन शब्दो ने मुझे अभिभूत कर दिया। मेरे हृदय मे एक विचित्र भावना का उद्रेक हुआ। फलस्वरूप, जब मास्टर साहब ने मुझे क्लास के बाद रोककर यह समझाना शुरू किया कि मुझे आगे से बहुत ही नेक और भला बनकर रहना चाहिए, तो मैंने उनकी बात ध्यान लगाकर सुनी।

पादरी साहब ने अपना कोट पहनते हुए स्नेहभरे स्वर मे कहा

"अब से तू मेरे क्लास मे पढ़ने आना! पर बिल्कुल खामोश होकर बठना। बिल्कुल शात।"

स्कूल का वातावरण तो अनुकूल हो गया। पर शीघ्र ही घर पर एक काण्ड हो गया। मैंने मा का एक रूबल चुरा लिया। यह अपराध मैंने बिना सोचे-समझे किया था।

बात यह हुई कि एक दिन शाम को मुझे छोटे बच्चे के पास छोड-कर मा कहीं चली गयी थी। बठे-बठे जी नहीं लगा, तो मैंने सौतेले पिताजी की एक किताब उठा ली। उसका नाम था 'डाक्टर की डायरी' लेखक बडे दयूमा। किताब के पन्नो मे एक रूबल का और दस रूबल का नोट था। किताब मेरी समझ के बाहर थी। पर उसे बद करते समय यकायक मुझे खयाल आया कि एक रूबल से मैं न केवल 'बाइबिल' खरीद सकता हू, बल्कि 'राबिसन क्रूसो' भी आ जायेगी। कुछ ही दिन पहले मैंने 'राबिसन क्रूसो' के बारे मे सुना था। एक दिन बाहर बहुत जोर का पाला पड रहा था, इसलिए कुछ मिनट के विराम के वक्त मैं अपने साथियो को परियो की कहानियां सुना रहा था। यकायक एक लडके ने तिरस्कारपूर्वक कहा

"परियो की कहानिया मे क्या रखा है? राबिसन क्रूसो की कहानी सच्ची कहानी है।"

कुछ और लडको ने 'राबिसन क्रूसो' पढी थी और उन्होने भी उसकी तारीफ की। नानी की कहानियो का अपमान मुझे बहुत अखरा

ग्रौर मैंने सोच लिया कि 'राबिसन क्रूसो' पढकर मैं भी उन लोगों को कहूगा कि "उसमे क्या रखा है!"

अगले दिन स्कूल पहुचा, तो मेरे हाथ मे बाइबिल की पुस्तक ग्रौर थे एडसन की परियो की कहानियो के फटी जिल्दो वाले दो भाग। इनके अलावा डेढ़ सेर सफेद पावरोटी तथा आधा सेर सासेज था। व्लादीमिर गिरजाघर के कोनेवाली किताबो की छोटी सी अधेरी दूकान मे मुझे 'राबिसन क्रूसो' की एक प्रति भी मिली थी—पतली ग्रौर पीली जिल्द की। मुखपृष्ठ पर दाढीवाले एक आदमी की तसवीर थी, जो सिर पर रोयेंदार टोपी ग्रौर किसी जानवर की खाल पहने हुए था। मुझे उसमे दिलचस्पी नहीं मालूम हुई। हा, 'परियो की कहानियो' की फटी जिल्दें भी इतनी आकर्षक थीं कि मैंने उन्हीं को खरीद लिया।

पाठो के बीच की छुट्टी हुई, तो दोस्तो के साथ हमने रोटी ग्रौर सासेज खायी ग्रौर 'परियो की कहानियो' से 'बुलबुल' नामक कथा पढ़ने लगे। पहले ही पृष्ठ से इस कहानी ने हम सबो का मन मोह लिया।

उसका पहला वाक्य मुझे आज भी याद है—"चीन देश मे सभी चीनी रहते हैं। यहा तक कि वहा का बादशाह भी चीनी ही होता है ..." मुझे याद है कि इस वाक्य ने अपनी सरलता, उसमे निहित सुदर सगीत, उसके निराले सौंदय ने मुझे आनद विभोर कर दिया था।

स्कूल मे 'बुलबुल' की कहानी खत्म नहीं हो सकी। घर लौटा, तो मा चपटी कडाही का हत्था थामे अण्डे भून रही थी। भूनते ही भूनते उसने खिची आवाज मे पूछा

"तूने एक रूबल निकाला है?"

"हा। उसी से यह किताबें लाया हू ..."

उसने मेरी पीठ पर कडाही का हत्था दे मारा ग्रौर परियो की कहानियो वाली पुस्तके छीन लीं। वे किताबें मुझे फिर कभी नहीं मिलीं ग्रौर यह पिटाई से भी अधिक दुख की बात थी।

मैं कई दिनो तक स्कूल नहीं गया। इस बीच सौतेले पिताजी ने घर की बात अपने सहकर्मियो से कह दी ग्रौर उन्होंने उसे अपने लडको से जा कही। नतीजा यह हुआ कि बात स्कूल तक पहुच गयी

श्रौर जब मैं स्कूल गया, तो लडको ने मुझे नये 'चोर' उपनाम से बुलाना शुरू किया। दो श्रक्षरो का शब्द–उसका अर्थ साफ था, पर उसमे मेरे प्रति श्रन्याय निहित था। मैंने रूबल लेने की बात नहीं छिपायी थी। पर जब यह बात श्रौरो का समझाने लगा, तो किसी ने भी मेरा विश्वास नहीं किया। श्रत घर श्राकर मैंने मा से साफ शब्दो मे कह दिया कि "मैं श्रब स्कूल नहीं जाऊगा।"

मा को फिर बच्चा होनेवाला था। पीले चेहरे, बहकी-बहकी श्रौर यातनापूर्ण श्राखो वाली वह खिडकी पर बठी साशा को दूध पिला रही थी श्रौर श्राखें फाडकर तथा मछली की तरह मुह खोलकर मेरी श्रोर देख रही थी।

उसने धीमे स्वर मे कहा

"तू झूठ बाल रहा है। तेरे रूबल लेने की बात लडको को कसे मालूम हो सकती है?"

"जाकर तुम्हीं पूछ लो।"

"तो तुझी ने कही होगी। बोल, तुझी ने कही है न? झूठ बोलने से काम नहीं चलेगा, क्योंकि मै कल खुद स्कूल जाकर पता लगाऊगी।"

मैंने उस लडके का नाम बता दिया। मा का चेहरा द्रवित हो गया श्रौर श्रासुश्रो की धार बहने लगी।

मैं रसोईघर मे जाकर श्रलावघर के पीछे लकडी की पेटियो के श्रपने बिस्तर पर पड रहा। पास के कमरे से मा की सिसकिया की श्रावाज श्रा रही थी। वह कह रही थी

"हे भगवान! हे भगवान!"

जले हुए श्रौर चरबी सने चिथडो की गध श्रसह्य हो गयी श्रौर मैं श्रागन मे चला गया। मा ने पुकारा

"कहा जा रहा है? यहा श्रा। मेरे नजदीक।"

हम लोग फश पर बठ गये। साशा मा की गोद मे बठा उसकी क़मीज के बटनो से खेल रहा था श्रौर तोतली श्रावाज मे कह रहा था "बबन!" जिसका मतलब था–बटन।

मै मा से सटा हुश्रा बठा था। उसने मुझे बाहो मे भरते हुए कहा

"हम लोग बड़े ग़रीब हैं। एक-एक कोपेक दांत से पकड़ना पड़ता है, तब गृहस्थी चलती है "

अपनी बात अधूरी ही छोड़कर उसने अपने गरम हाथों से मुझे अपनी ओर निकट खींच लिया।

फिर वह अचानक चिल्ला उठी

"कमीना कहीं का! कमीना!" यही शब्द थे, जिन्हें एक बार पहले भी मैं उसके मुंह से सुन चुका था।

साशा ने नकल की

"तमीना कईं का!"

साशा विचित्र लड़का था। दुबले-पतले शरीर के ऊपर बहुत बड़ा सा मस्तक और नीली स्वच्छ आंखें, जिनमें सदा मुस्कान भरी रहा करती थी। ऐसा लगता था कि वे किसी चीज को खोज रही हैं। बहुत जल्द ही बोलने लगा था। वह कभी न रोता, सदा मगन रहता। कमजोर इतना था कि बड़ी मुश्किल से बकयां खींचता था। मुझे वह बहुत चाहता था। देखते ही मेरी गोद में चढ़ जाता और अपनी कोमल उंगलियों से मेरे कान खींचने लगता। इन उंगलियों से न जाने क्यों बनफ्शे की भीनी सुगंध आया करती थी। उसकी अचानक मौत हो गयी—न बीमारी, न कुछ। सवेरे सदा की तरह हंस-खेल रहा था, पर शाम को, जब गिरजाघर की घंटियां गोधूली की प्रार्थना का आह्वान कर रही थीं, खत्म। उसकी लाश मेज पर पड़ी थी। यह घटना दूसरे बच्चे निकोलाई के जन्म के कुछ ही दिनों बाद हुई।

मां ने अपने वादे के अनुसार स्कूल में मेरी सफाई पेश कर दी। और मैं फिर नियमपूर्वक स्कूल जाने लगा था, लेकिन इसके बाद ही मुझे फिर नाना के घर चले जाना पड़ा। बात यों हुई

एक दिन चाय के वक्त मैं आंगन की ओर से रसोईघर में आ रहा था, तो कान में मां के फफक-फफककर रोने की आवाज आयी। वह कह रही थी

"येव्गेनी! येव्गेनी! तुम्हारे पैरों पड़ती हूं, उसके पास मत जाओ " "बक-बक बंद कर," सौतेले पिताजी की आवाज आयी।

"नहीं। मैं जानती हूं तुम रोज उसके पास जाते हो।"

"जाता हूं, तो तुम्हारा क्या!" जवाब मिला।

दोनों कुछ देर के लिए चुप हो गये और तब मेरी मा ने खासते हुए कहा

"कसे कमीने हो तुम "

जवाब मे पीटने की आवाज आयी। मैं कमरे मे दौडा। मा घुटनो के बल जमीन पर बैठी थी—कुर्सी से पीठ और कुहनी को टिकाये तथा वक्ष ऊपर को उठाये। मस्तक पीछे लटका हुआ था, कण्ठ से खरखराती-सी आवाज निकल रही थी और आखो मे अस्वाभाविक चमक थी। वह सामने खडा था—बढ़िया सूट पहने, छला, चिकना बना हुआ। उसकी लम्बी टाग मा की छाती पर थी। मैंने हड्डी की मूठ वाली रोटी काटने की छुरी उठा ली (मा के पास मेरे पिताजी की यही एकमात्र यादगार बच रही थी) और पूरी ताकत लगाकर उसे सौतेले पिताजी की बग़ल मे चला दिया।

सौभाग्यवश मां ने उसे एक ओर को ठेल दिया और छुरी कोट को फाडती हुई केवल खाल मे लगी। वह "बाप रे!" कहकर बग़ल थामे हुए बाहर भागा। मा बडे जोरो से चीखी और मुझे जमीन पर गिरा दिया। सौतेले पिताजी ने आगन से लौटकर मुझे छुडाया।

यह सब होने के बाद भी शाम को वह बाहर चला ही गया। उसके जाने के बाद मा मेरे पास आयी। मैं अलावघर के पीछे लेटा हुआ था। उसने मुझे गले लगाकर चूम लिया।

"माफ कर दे, बेटा, मुझे। मैंने तेरे साथ अन्याय किया। लेकिन तुझे भी क्या सूझी थी? भला कोई ऐसे छुरी चलाता है?"

मैंने ठडे दिल से, बातो को खूब तौलकर कहा कि उसे मार डालूगा और अपने भी प्राण दे दूगा। और इसमे तनिक सदेह नहीं कि मैं ऐसा कर गुजरता। कम से कम कोशिश तो जरूर करता। आज भी वह घृणित दृश्य मेरे स्मृति पटल पर नाच रहा है—उसकी वह नीचतापूर्ण लम्बी टाग, जिसपर चढे पतलून की काली चौडी धारी चमक रही है, देख रहा हू कि कसे वह ऊपर उठती है और पैर स्त्री के सीने पर वार करता है!

बर्बर रूसी जीवन के इन गर्हित दृश्यो को याद कर मैं प्राय सोच मे पड जाता हू—क्या उनके बारे मे लिखना उचित है? लेकिन विचारने पर यही दृढ़ विश्वास होता है कि उनका परदा चाक करना जरूरी है,

क्योंकि उनके अंदर ऐसी कुत्सित और कठोर वास्तविकता निहित है, जिसके अवशेष आज भी हमारे बीच वर्तमान हैं। वह ऐसा सत्य है, जिसे अपने निष्ठुर और बीभत्स जीवन से हमें जड़ मूल से उखाड़ फेंकना होगा—जीवन ही क्या, मानव आत्मा और मस्तिष्क से भी पूर्ण रूप से निकाल देना आवश्यक है।

ऐसे बीभत्स दृश्यों के बारे में लिखने का एक अन्य अच्छा कारण भी है। यद्यपि वे गर्हित हैं, बीभत्स हैं और साधारणतः स्वस्थ और सुंदर आत्माओं को बुरी तरह झकझोर देनेवाले हैं, किंतु फिर भी रूसी व्यक्ति मन से इतना सबल और पुष्ट है कि इन बीभत्सताओं को निर्मूल करने की क्षमता रखता है, वह उन्हें निर्मूल करके ही रहेगा।

हमारे जीवन की यही विलक्षणता नहीं है कि वह बर्बरता और पाशविकता की मोटी तह से आच्छादित है, बल्कि यह कि इस तह के नीचे से आलोकमय, सबल, सर्जनात्मक और भलाई की शक्तियां विजयी होकर बाहर आ रही हैं और यह दृढ़ आशा पैदा कर रही हैं कि वह दिन दूर नहीं, जब हमारे देश की जनता के जीवन में सौंदर्य एवं आलोकपूर्ण मानवता का सूर्य उगेगा और अवश्य उगेगा।

१३

मैं फिर नाना के घर आ गया।

"फिर आ पहुंचा बदमाश," कहते हुए नाना ने मेरी अभ्यर्थना की। हाथ मेज़ पर पटकते हुए बोले "इस बार तो मैं तुझे खिलाने पिलाने से रहा। नानी खिलाये तो खिलाये।"

नानी ने कहा

"हां, हां। मैं खिलाऊंगी। बहुत बड़ी बात है जैसे यह भी!"

"ठीक है, खिलाओ," नाना ने ज़ोर से कहा। पर दूसरे ही क्षण शांत स्वर में बोले

"हम लोगों में अलगाव हो गया है। तेरी नानी की गृहस्थी अलग और मेरी अलग।"

नानी खिडकी पर बैठी लस बुन रही थी। पीतल की कीलो के साथ फ्रेमवाली गद्दी वसत ऋतु की धूप मे इस तरह चमक रही थी, जसे सुनहले रग की साही। सलाइया मधुर आवाज़ पैदा कर रही थीं। खुद नानी भी कासे की मूर्ति जैसी दिख रही थी। वह तनिक भी नहीं बदली थी, लेकिन नाना का शरीर गिर गया था। चेहरे पर झुरियो की सख्या बढ गयी थी, सुनहरे बाल मटले हो गये थे और शात गर्वीली गति विधियो की जगह उनमे झल्लाहट और हडबडी आ गयी थी और उनकी हरी आखें हर चीज़ को शकापूर्ण दृष्टि से देखती थीं। नानी हसते-हसते दोनो के बीच हुए जायदाद के बटवारे का ब्योरा सुनाने लगी। सारे बतन-भाडे और रकाबिया नानी को देकर वह बोले थे

"लो, यह सब तुम्हारा है। अब कुछ मत मागना मुझसे।"

इसके बाद उन्होंने उसके पुराने फ्राक और दूसरे सारे सामान ले लिये। उनमे लोमडी की खाल का एक लबादा भी था। इस सारे सामान को उन्होने सात सौ रूबल मे बेच दिया और यह रकम अपने यहूदी धर्म-पुत्र को, जो फलों का व्यापार करता था, सूद पर लगाने के लिए दे दी। नाना बेतरह लोभी हो गये थे और लाज लिहाज को तिलाजलि दे बठे थे। वह पुरानी जान पहचान वाले अमीर सेठो या कारीगरो के पास जाया करते थे, जिनके साथ उन्होने पहले नौकरी की थी। उनसे यह कहकर कि "बेटो ने मुझे बरबाद कर दिया है," रुपये मागते थे। पुराने ताल्लुकात का खयाल कर वे लोग उन्हे बडे बडे नोट देकर विदा करते थे। घर आकर वह स्कूली बच्चो की तरह इतराते हुए नानी को ये नोट दिखाकर कहते थे

"देख रही है समुरी? तुझे तो कोई इसका सौवा भाग भी नहीं देगा!"

अपने एक नये जान पहचान के आदमी को नाना ने ये रुपये सूद पर दे दिये। वह फर का व्यापार करता था। उसका सिर गजा और क़द लम्बा था और लोग उसे "ख्लीस्त" (कोडाजी) कहा करते थे। उसकी एक बहन थी–गोलमटोल, लाल गाल और काली आखो वाली। वह दूकान करती थी और ऐसी मोटी लसदार थी जसे सीरा।

घर मे सब कुछ बटा हुआ था। एक दिन नानी अपनी कमाई से आटा-नमक लाती, दूसरे दिन नाना। जिस दिन नाना की बारी रहती,

उस दिन भोजन निकृष्ट और स्वादहीन होता था। नानी अपनी बारी के दिन बढ़िया गोश्त लाती थी, पर नाना अक्सर फेफड़ा या श्रतड़ी उठा लाते। चाय और चीनी दोनों अपनी अलग-अलग रखते थे, पर चाय बनायी जाती थी एक ही बतन मे। नाना कनौती खड़ी करके कहते

"जरा रुको! देखू कितनी पत्ती डाली है तुमने?"

नानी की पत्तियों को हथेली पर रखकर वह गिनते। फिर कहते

"तुम्हारी पत्तियां बारीक हैं। मेरी मोटी हैं, उनसे ज्यादा रग निकलेगा, इसलिए तुम ज्यादा पत्ती डालो।"

यह देखते थे कि नानी दोनो के प्यालो मे बिल्कुल बराबर चाय डालती है या नहीं। जितनी प्यालिया नानी पीती, उतनी ही वह भी पीते।

आखिरी प्याली ढालने के पहले नानी पूछती

"एक और पियोगे?"

चायदानी मे झाकने के बाद वह जवाब देते

"एक और सही।"

यहा तक कि देव प्रतिमाओं के दीये का तेल भी दोनो बारी-बारी से खरीदते थे—एक बार नानी तो दूसरी बार नाना। पचास वर्ष साथ रह चुकने के बाद यह हाल था उनका!

नाना की इन हरकतो से मुझे हसी भी आती थी और घृणा भी मालूम होती थी। नानी को उनपर केवल हसी आती। मुझसे कहती

"छोड इन बातो को। उम्र होने से सठिया गये हैं। अस्सी साल के हुए भी तो। कहा तक बुद्धि सीधी रहे? करने दो जो चाहें—किसी का कुछ बिगडता तो है नहीं? हमारा-तुम्हारा क्या है—हम दोनो के लिए खाना जुटाने को मैं अभी काफी हू।"

अब मैं भी थोडा बहुत कमाने लगा। रविवार को तडके बोरा लेकर शहर मे निकल जाता और पुरानी हड्डिया, फटे कपडे, लोहे की कीलें और रद्दी कागज जमा कर लाता। कबाडी की दूकान मे चिथडे, कागज या धातु की चीजें बीस कोपेक प्रति पूद* के भाव से और

*पूद—१६ किलोग्राम।

हड्डियां आठ या दस कोपेक प्रति पूद के भाव से बिक जाया करती थीं। बीच मे भी स्कूल से छुट्टी पाने के बाद मैं कबाड जमा किया करता था, जिससे प्रति शनिवार तीस से पचास कोपेक तक की आमदनी हो जाती थी। कोई-कोई हफ्ता ख़ूब अच्छा जाता, तो इससे भी ज्यादा मिल जाता था! नानी पैसे लेकर जल्दी से अपने घाघरे की जेब मे डाल लेती और आखें नीची कर मुझे शाबाशी देते हुए कहती

"धन्यवाद, मेरे लाल, दुलारे! अब हम दोनो भूखो नही मर सकते। हैं न?"

एक दिन घर मे घुसने पर देखा कि नानी मेरा दिया हुआ पचटकिया कोपेक हाथ मे लेकर उसे देख रही थी और आसू बहा रही थी। उसकी मासल नाक पर आसू की एक बडी-सी बूद साफ नजर आ रही थी।

शीघ्र ही मुझे पता चला कि कबाड बेचने से ज्यादा मुनाफा लकडी के पल्लो की चोरी करने मे है। ओका नदी के किनारे या पेस्को द्वीप पर, जहां वार्षिक मेले के समय धातु का सामान बेचनेवालो की दूकानें रहा करती थीं, बहुत से तख्ते पडे मिलते थे। मेला खत्म होने पर लकडी की इन कामचलाऊ दूकानों को तोडकर उनका काठ पेस्की मे जमा कर दिया जाता था। बाढ़ आने तक वह वहीं पडा रहता था। टुटपुजिया शहरी लोग इन तख्तो को खरीद लेते थे। एक साबूत पल्ले पर दस कोपेक तक मिल जाते थे। दिन भर मे दो-तीन पल्ले चुरा लाना कठिन नहीं था। लेकिन यह काम कुहासे या बरसात के समय ही हो सकता था, जब कि रखवाले अपनी कोठरियो में दुबके रहते थे।

लडको की एक पूरी जमात थी, जो यही धधा किया करती थी और उन सबो मे आपस मे खूब मेल रहा करता था। सान्का व्याखिर की उम्र दस साल की थी। उसकी मा मोदवा जाति की भिखारिन थी। सान्का मिलनसार स्वभाव का, शात और नेक लडका था। दूसरा था कोस्त्रोमा, दुबला पतला और अस्त-व्यस्त बालो वाला यतीम और बेघरबार। उसकी आखें काली और खूब बडी-बडी थीं। बाद मे, तेरह साल की उम्र होने पर एक जोडा कबूतर चुराने के अपराध मे उसे

बच्चो को जेल भेज दिया गया, जहा उसने फासी लगाकर आत्महत्या कर ली। उस मडली का एक और सदस्य था बारह वर्षीय खाबी, जो तातार जाति का था। वह खासा पहलवान था, लेकिन स्वभाव का बेतरह सीधा और नेक। चौथा सदस्य था बठी नाक वाला याज। उसकी उम्र थी आठ साल। उसका बाप कब्रिस्तान मे रखवाला था और कब्र खोदने का काम करता था। वह मछली जसा चुप्पा था। उसे "मिरगी का रोग" था। हमारी मडली मे ग्रीश्का चूर्का सबसे बडी उम्र का सदस्य था। उसकी मा विधवा दर्जिन थी। ग्रीश्का चूर्का समझदार और बडा ही इसाफी स्वभाव का था। यो वह मुक्केबाजी का उस्ताद था। हम सभी एक ही मुहल्ले मे रहते थे।

हमारी बस्ती मे चोरी को अपराध नहीं समझा जाता था। वह आदत-सी हो गयी थी। इतना ही नहीं, मुहल्ले मे रहनेवाले टुटपुंजिया व्यवसायियो का—जिन्हे मुश्किल से दो जून खाना जुटता था—वही जीविका का एकमात्र सहारा थी। मेला तो केवल डेढ़ महीना लगता था। वह साल भर की उनकी रोजी के लिए काफी न था। अत बहुत से सदगृहस्थ भी नदी की बदौलत कुछ आमदनी हासिल किया करते थे। बाढ़ से निकलनेवाले लकडी के कुदा या पल्लो को वे उठा लाते अथवा छोटे छोटे बेडे बनाकर इधर-उधर से सामान ढो लाते। यही उनका धधा था। अधिकतर वे चोरी के सहारे ही जीते थे। उनका काम था लुक छिपकर ओका या वोल्गा के किनारो पर घूमना और बजरो या घाटो पर पडी चीजो को उडा लेना। इतवार के दिन कई लोग गर्व से अपनी साहसिकता की गाथाए सुनाया करते थे। बच्चे उन्हें चाव से सुनते और सबक हासिल करते थे।

वसत ऋतु आने पर मेले की तयारी आरम्भ हो जाती थी। उस वक्त बस्ती मे शाम के वक्त नशे मे धुत्त मजदूरों, कोचवानो और कारीगरो की खासी भीड रहती और बस्ती के बच्चे उनकी जेबें काटने का धधा आरम्भ कर देते। यह पेशा यहा बिल्कुल वध समझा जाता था। लडके बडी शान से बुजुर्गों के सामने ही ऐसा करते थे।

बढ़इयो के औजार, फिटरो के पेचकश और घोडागाडियो की धुरियो के कावले सफाई से पार कर दिये जाते। पर हमारी मडली इन कामो से दूर रहती थी। चूर्का ने एक दिन कहा

"मैं चोरी नहीं करूगा—मा मना करती है।"

और खाबी बोला

"मुझे चोरी करने मे डर लगता है।"

कोस्त्रोमा हमेशा चोरो से घृणा करता था। 'चोर' शब्द का वह खास अदाज से, हर अक्षर पर खूब जोर देते हुए उच्चारण करता था। और जब दूसरे लडको को पियक्कडो को लूटते देखता, तो खदेड देता और अगर कोई पकड मे आ जाता, तो उसकी खूब मरम्मत करता था। बडी-बडी आखो वाला यह उदास लडका हमेशा बडो की तरह अपने को दिखाने की कोशिश किया करता था। चलता तो गोदी-मजदूरो की तरह दायें-बायें हिलता हुआ और बोलता तो आवाज रूखी और मोटी बनाकर। उसका तौर-तरीका अस्वाभाविक, बुजुर्गों जसा था। जहा तक व्याखिर का सवाल है, तो वह चोरी को पाप मानता था।

लेकिन पेस्की से तख्ते और पल्ले उडा लाने को हम लोग चोरी नहीं मानते थे। इस काम को करने मे मडली का कोई सदस्य नहीं घबराता था। हम लोगो ने एक ऐसा तरीका निकाला था, जिससे काम आसानी से बन जाता था। शाम को अधेरा हो जाने पर या बुरे मौसमवाले दिनो मे व्याखिर और याज खाडी की फिसलनी बफ को पार करते हुए पेस्की की ओर अग्रसर होते। वे इस तरह जाते कि रखवालो का ध्यान बरबस उनकी ओर आकर्षित हो जाता। तब तक बाकी चारो भिन्न भिन्न दिशाओ से लुकते हुए लकडियो के ढेर की ओर बढ़ जाते। रखवालो का ध्यान याज और व्याखिर की ओर रहता था। तब तक हम लोग पूवनिश्चित स्थान पर पहुचकर मनचाहे तख्तो को चुन लेते। थोडी देर बाद हमारे दोनो तेज दौडनेवाले साथी रखवालों को चिढ़ाते हुए भाग खडे होते और इधर हम लोग तख्ते लेकर पार हो जाते। चारो एक एक रस्सी रखते, जिसके सिरे मे लोहे का अकुश बधा रहता। उसे तख्ते मे अटकाकर हम उसे बफ के ऊपर खींच लेते। रखवाले शायद ही हम लोगा को देख पाते और देख भी पाते, तो हमे पकडना मुश्किल होता। तख्तो को बेचकर उनकी आमदनी को हम लोग छ] बराबर भागो मे बाट लेते। प्राय हरेक को पाच से सात कोपेक तक मिल जाते।

इतना पसा एक रोज के भोजन के लिए काफी था, लेकिन व्याखिर की मा को वोदका भी चाहिए थी और वोदका न मिलने पर वह व्याखिर को पीटा करती थी। कोस्त्रोमा का अरमान कबूतरों का शिकारी बनने का था, इसलिए वह पैसा जमा कर रहा था। चूर्का की मा बीमार थी, इसलिए वह अधिक से अधिक कमाने के फर मे रहता था। खाबी भी पसे जमा कर रहा था, क्योंकि वह अपने शहर लौट जाना चाहता था, जहा से उसका मामा उसे यहा लाया था। उसका मामा यहा आने के थोडे दिन बाद ही नदी मे डूब गया था। खाबी अपने शहर का नाम भूल गया था, उसे इतना ही याद था कि वह बोल्गा के निकट कामा नदी के तट पर है।

न जाने क्या, इस नगर की बात आने पर हम लोगा को बडी हसी आती थी। हम लोग अपने भेंगे तातार साथी को चिढ़ाया करते थे

एक है शहर
बडा साफ व सुदर
एक बात मगर हा
उसे पता नहीं कहा!
यहा कि वहा?
इसी जहान मे?
कि कहीं आसमान मे?

पहले तो खाबी हम लोगो का गाना सुनकर बिगड खडा होता था। लेकिन एक दिन व्याखिर ने फाख्ते जसी अपनी आवाज में कहा

"छोड भी यार, दोस्ती मे नाराजी अच्छी नहीं।"

तातार दोस्त यह सुनकर लज्जित हो गया और उस दिन से वह खुद भी कामा नदी के तटवर्ती अज्ञात नगरवाला गीत गाने लगा।

लेकिन हम लोगा की मडली तख्ते चुराने के मुकाबले मे कूडा कबाड इकट्ठा करना ज्यादा अच्छा समझती थी। वसत आ जाने पर बफ गल गयी और मेलेवाले पक्के मदान को वर्षा ने धोकर साफ कर दिया। अत इस वक्त यह काम अधिक रोचक हो गया। जहां-तहां

लोहे की कीलें और नालियों मे धातु के तरह-तरह के टुकडे आसानी से मिलने लगे। कभी-कभी ताबे या चांदी के सिक्के भी मिल जाते थे। लेकिन हमेशा रखवालो का डर बना रहता था। गिड़गिडाकर और खुशामद कर हम लोग उन्हें शात करते थे। कभी-कभी दो एक कोपेक उन्हें भी थमाना पडता था, तभी वे हमे कूड़े का अपना बोरा ले जाने देते थे। कुल मिलाकर आमदनी करना मुश्किल काम था, लेकिन कठिनाइयो के उस अनुभव ने हम लोगो को एक दूसरे का पक्का दोस्त बना दिया। ऐसी बात न थी कि हम लोगो मे झगडा न होता हो, पर जहा तक मुझे याद है मार-पीट की कभी नौबत नहीं आयी थी।

झगडा शात करने का काम व्याखिर किया करता था। वह हमेशा ठीक मौके पर कुछ सीधे-सादे शब्द कह देता, जो हमे अचम्भे और चक्कर में डाल देते तथा चढ़ा गुस्सा उतर जाता। सभी लज्जित हो जाते। वह स्वय विस्मय के साथ उन शब्दो का उच्चारण करता। याश के जले भुने शब्दो का वह न तो कभी बुरा मानता था और न उनसे घबराता ही था। वह सभी बुरी बातों को बेकार समझता और बडी शाति तथा विश्वास से उन्हें टाल जाता।

कहता, "इसकी क्या जरूरत है यारो!" और बात सभी को चुभ जाती—मूर्खता के अतिरिक्त यह कुछ नहीं है।

मा को वह सदा "मेरी मोदवी" कहता। किसी को इसपर हसी नहीं आती।

मसलन, एक दिन वह कहने लगा

"जानते हो रात को क्या हुआ? मेरी मोर्दवी घर लौटी और सो भी पीकर टर। फटाक से दरवाजा खोला और चौखट पर बठकर गाने लगी। फिर कौन उठता है वहा से? बस, गाती ही रही।"

वह कहानी कहते वक्त हस रहा था और उसकी गोल-गोल सुनहरी आखें चमक रही थीं।

चूर्का ने बडी गभीरता से पूछा "क्या गा रही थी वह?"

व्याखिर अपनी बारीक आवाज मे जाघ पर ताल देते हुए मा का गीत सुनाने लगा

ठक ठका ठक ठोकर
मेरी खिडकी के कांच पर
मेरा छला गडेरिया
मुझको बुलाने आ गया!
चली मैं यार के सग
सझा दमके रगा रग!
गडेरिये की बासुरी!
लय-तान से हवा भरी!
कितनी मीठी टेर मेरे यार की!
सुनने के लिए सारी दुनिया रुकी!

व्याखिर बहुत से ऐसे गीत जानता था और बडे रस के साथ उन्हें सुनाया करता था।

रात की घटना बयान करते हुए उसने कहा

"वह गाते गाते वहीं सो गयी। दरवाजा यो ही खुला रह गया और ठडी हवा सरसर कमरे मे आने लगी। मै ठड के मारे ठिठुरा जा रहा था, पर उसे उठाकर दरवाजे से हटाये कौन? उतनी बडी लाश घसीटना मेरे बूते के बाहर था। सवेरा होने पर मैंने उससे कहा 'तुम इतना क्यो पी लेती हो?' उसने जवाब दिया, 'क्या रखा है इन बातो मे? कुछ दिन और सह ले। अब थाडे ही दिनो की मेहमान हू मैं।'"

चूर्का ने तपाक के साथ सहमति प्रकट की

"इसमे क्या शक है। देखते नहीं हो, अभी से उसका पूरा बदन बेतरह सूज गया है।"

मैंने व्याखिर से पूछा

"मा मर जायेगी, तो तुझे अफसोस होगा क्या?"

उसने चकित होकर जवाब दिया

"क्यो नहीं? वह तो बहुत अच्छी है "

हम लोगो को भी इसमे सदेह नहीं था। यद्यपि वह व्याखिर को बराबर पीटा करती थी, पर दिल की नेक थी। जिस दिन हम लोगो को बहुत कम आमदनी होती, चूर्का प्रस्ताव करता

"आज व्याखिर की मा की वोदका के लिए एक एक कोपेक हम लोगो की ओर से रहे, नहीं तो बेचारे को मार पडेगी।"

उस मडली मे केवल चूर्का और मैं पढ़ना लिखना जानते थे। व्याखिर को इससे ईर्ष्या होती थी। अपने चूहो जसे कान को सहलाते हुए फाख्ते जसी आवाज मे वह कहता

"मेरी मोदवी मर जायेगी, तो मैं भी स्कूल मे नाम लिखाऊगा। मास्टर के परो पडकर कहूगा कि मुझे दाखिल कर लीजिये। पढ़ाई समाप्त करके मैं बिशप का माली बन जाऊगा। या हो सकता है कि जार के बगीचे मे ही मेरी नौकरी लग जाये।"

उसी वसत मे मोदवी की मृत्यु हो गयी। एक हाथ मे वोदका की बोतल लेकर वह एक बड़े के साथ, जो नया गिरजाघर बनवाने के लिए चदा इकट्ठा कर रहे थे, जा रही थी। कुदों का एक ढेर उनके ऊपर गिर पडा। उसे लोग अस्पताल ले गये। चूर्का व्याखिर से बोला

"मेरे घर चलकर रह। मेरी मा तुझे लिखना पढना सिखा देगी "

इसके कुछ दिनो बाद व्याखिर दूकानो के सामने खडा होकर और सिर ऊपर करके उनकी तख्ती पढ़ने लगा

"प-स ना री की दू-का न!"

चूर्का उसकी भूल सुधारता "पसनारी नहीं, पनसारी है, उल्लू!"

"ओ ठीक! बोलते हुए शदब मे गडबडा गया।"

"शदब नहीं, शब्द कह।"

"शब्द इधर से उधर चले जाते हैं, जो। बात यह है कि कोई उन्हे पढ़ता है, तो वे खुशी के मारे उछलने लगते हैं," व्याखिर ने जवाब दिया।

वृक्षो और हरियाली के प्रति उसका अगाध प्यार देखकर हम लोग चकित हो जाते थे और हमे हसी भी आती थी।

हमारी बस्ती मे, जो रेतीले क्षेत्र मे फली हुई थी, हरियाली बहुत कम दिखाई देती थी। यो ही कहीं किसी के आगन मे बेचारा सरपत या एल्डर की सूखी झाडिया या पीली घास नजर आ जाती, पर वह भी बाडो मे मुह छिपाये हुए। अगर व्याखिर के सामने कोई घास पर बठ जाता, तो फौरन उसको डाट सुननी पडती

"घास को क्यो बरबाद कर रहा है बे! रेत पर क्यो नहीं बठा जाता?"

वह रहता, तो हम लोगो की हिम्मत नहीं होती कि श्रोका के तट पर बेंत की डडी या एल्डर की टहनी तोड ले। परेशानी से अपनी देह हिलाता हुआ वह कहता

"तुम लोगो को हमेशा शैतानी ही सूझती रहती है। क्यो बरबाद कर रहे हो इसे?"

उसकी यह परेशानी हम लोगो को लज्जित कर देती।

शनिवार को हम लोग मौज मनाते थे। उसके लिए हम लोग सप्ताह भर छाल के बने पुराने जूते बटोरते और उन्हें सुविधाजनक कोनो मे जमा करते थे। शाम को सिबीर्स्काया घाट से तातारी घाट-मजदूरो के निकलने का वक्त होता था। कोने मे छिपकर हम लोग उनपर जूते फेंकना शुरू करते। पहले तो वे बिगडकर गाली बकने और हम लोगो को खदेडने लगते। पर बाद मे उन्हें भी खेल मे मजा आने लगता। वे भी छाल के जूते जमा करके तयार हो जाते। कभी-कभी वे हमारे ही खजाने पर छापा मारकर हमारा गोली बारूद चुरा लेते। हम लोग इसपर आपत्ति करते

"यह ईमानदारी नहीं है।"

तब वे चुराया माल आधा आधा बाट देते। इसके बाद दोनो ओर से गोले दगने लगते।

एक खुला मदान था। साधारणत उसी मे वे लोग पात बाधकर खडे हो जाते। हम लोगो की मडली उनके चारो ओर दौड दौडकर चिल्लाना, कूदना और जूते फेंकना शुरू कर देती। वे लोग भी जोर जोर से चिल्लाते जाते। जब कभी पैर के नीचे निशाना बाधकर फेंके गये जूते से कोई मुह के बल रेत मे ढह पडता, तो उनकी खुशी का ठिकाना न रहता।

अक्सर खेलते खेलते अधेरा हो जाता। छोटे छोटे दूकानदार कोनों मे छिपकर हमारा खेल देखते और हम लोगो को गडबड मचाने के लिए डाटते। पर जूतो की बौछार उनकी फटकार से भला कहा रुकनेवाली थी। मटमले पछियो की तरह धूल धूसर जूते हवा मे इधर से उधर और उधर से इधर उडते। कभी हमारा कोई साथी खासी चोट खा जाता, लेकिन उस प्रतियोगिता मे जो मजा था, उसके आगे घाव और चोट की कौन परवाह करता!

तातारो की जमात को भी खेल मे हम लोगो से कम मजा नहीं आता था। वे भी सब कुछ भूल जाते। खेल खत्म होने पर कभी-कभी हम लोग तातारो के सघ मे जाते थे। वहा घोडे के मास से हम लोगो की खातिरदारी की जाती थी। मास के साथ अजीब तरह की बनी तरकारी होती थी। खाना खत्म होने पर गहरे लाल रग की चाय और बादामी केक आ जाता। ये भीमकाय तातारी—जिनमे सभी एक से एक बढ़कर पहलवान हुआ करते—हमे बहुत ही भले लगते। उनका स्वभाव बालको जसा सरल था। सबसे बडी चीज यह थी कि वे कभी किसी बात का बुरा नहीं मानते थे और एक दूसरे के प्रति उनका व्यवहार अत्यत हार्दिक हुआ करता था।

इन तातारो की हसी उन्मुक्त थी। हसते हसते उनकी आखो से आसू ढलक पडते। उनमे एक किसान था। वह कासिमोवी तातार था। उसकी नाक टूटी हुई थी। लोग कहते थे कि उसकी देह मे दत्य जसी ताकत है। एक बार गिरजाघर का एक घटा बजरे से उतारना था। बारह मन के उस घटे को उसने अकेले उतारकर किनारे रख दिया। वह हसी के साथ जोर-जोर से जानवरो जसा विचित्र स्वर निकालता था। वह कहता था

"ऊ-ऊ ऊ! ऊ-ऊ ऊ! चिडियो जसे शब्द। शब्द बोलते ही कह उठता, चिडिया पकडी गयी—सोने की चिडिया!"

एक दिन व्याखिर को अपनी हथेली पर रखकर उसने ऊपर हवा मे उछाल दिया और बोला

"उड जा पछी आकाश मे!"

बूदा बादी के दिन हम लोग क़ब्रिस्तान की बगल मे याज की छोटी-सी कोठरी मे जमा हुआ करते थे, जहा वह अपने बाप के साथ रहता था। उसका बाप अष्टावक्र था—पूरी देह टेढ़ी-मेढी और सिकुडी सिमटी, गदा-मदा। खूब लम्बी बाहें, छोटे सिर तथा सावले चेहरे पर मले-से बाल। गदन ऐसी थी, मानो पतला डठल, जिसके सिरे पर सूखे शलजम की तरह सिर लगा हुआ था। मन ही मन अत्यत मग्न होकर वह अपनी पीली आखें मूद लेता और कहता

"हे भगवान, उनींदी रातो से हमे बचा!"

हम लोग अपने साथ चाय, चीनी और रोटी लेकर आते थे। याज के बाप के लिए थोडी वोदका भी होती थी। चूर्का डाटकर कहता

"गवार कहीं का! जल्दी से समोवार गम कर!"

और गवार हसकर हुक्म बजा लाता। जब तक समोवार गरम होता रहता, हम लोग अपने धधे के विषय मे विचार विमश किया करते और वह भी हमे अपनी सलाह देता जाता। मसलन

"परसो त्रूसोव परिवार मे चालीसवा है। बहुत बडा मतक भोज होगा, वहा मिलेगी तुम्हे काफी हड्डिया।"

लेकिन चूर्का बोलता

"त्रूसोव के यहा की बावचिन तो खुद ही हड्डिया जमा करती है।" चूर्का से कोई बात छिपी न थी।

व्याखिर खिडकी से कब्रिस्तान की ओर झाककर कहता

"बादल बदली के दिन अब जल्द ही खत्म होने का हैं। फिर हम लोग जगल जा सकेगे।"

याज बहुत कम बोलता था। कूडे-कबाड मे मिले खिलौनो को हम लोगो के सामने करके वह अपनी उदास आखो से हमारे चेहरे निहारा करता था। इन खिलौनो मे लकडी के सिपाही, बिना टाग के घोडे, कुछ बटन और कुछ पीतल के टुकडे होते थे।

उसका बाप चाय की मेज ठीक करके उसपर समोवार रख देता। सभी प्याले भिन्न रगो और आकार के थे। कोस्त्रोमा प्याला मे चाय उडेलता। याज का बाप अपनी वोदका पीकर अलावघर पर चढ जाता। वहा से घुग्घू जसी आखो से हम लोगो की ओर देखकर वह आप ही आप बडबडाने लगता

"तुम लोगा की गिनती भी भला, आदमियो मे होगी? पूरे चोट्टो की जमात हो तुम लोग। फू! उनींदी रातो मे भगवान ही हमे बचाता है!"

व्याखिर कहता

"हम लाग चोर नहीं ह।"

"चोर नहीं तो चोर-बच्चे ही सही " वह जवाब देता।

उसकी बडबडाहट से हम लोग जब खीझ उठते, तो चूर्का डांटकर कहता

"चुप रह! गवार कहीं का!"

वह बस्ती के सभी बीमार आदमियो के नाम गिनाना शुरू करता और हिसाब लगाता जाता कि पहले कौन मरेगा। कहता, अब की फला आदमी क़ब्रिस्तान मे गडने के लिए आयेगा। यह हिसाब लगाकर वह मन ही मन खुश होने लगता, मानो आदमी का मर जाना उसके लिए खेल हो। ख्याखिर, चर्का और मैं उसकी इस आदत को बर्दाश्त नहीं कर सकते थे। वह समझ जाता कि इस तरह की बातो से हम लोग घबरा रहे हैं। उस वक्त हमे चिढ़ाने के लिए वह जान-बूझकर कहने लगता

"डर लगता है, क्यो बच्चू? घबराओ मत, इस बार एक बहुत मोटा आदमी जल्द ही मरनेवाला है। क़ब्र मे गाडने पर उसकी लाश बहुत दिन तक सडेगी।"

हम लोग उसे मना करते। पर उसकी जबान क्यो बद होती? कहता

"तुम सबो की बारी भी जल्द ही आनेवाली है। कूडा कुरेदकर कब तक जियोगे बच्चू, तुम लोग?"

"मर ही जायेंगे, तो क्या होगा, बन जायेंगे फरिश्ते " ख्याखिर बोला।

"तुम लोग और फरिश्ते बन जाओगे?" याज का बाप मुह चिढाते हुए कहता और हो-हो हसने लगता।

इसके बाद फिर मुर्दों का वीभत्स वणन शुरू कर देता।

लेकिन कभी कभी अपनी धीमी, मक्खियो की भनभनाहट जसी आवाज मे वह अजीब अजीब तरह की बातें कहने लगता। एक दिन बोला

"एक बात सुनाऊ? परसों एक औरत गाडी गयी, जिसकी अजीब कहानी है। मुझको उसका सारा किस्सा मालूम हो गया। जानते हो "

औरतो का प्रसग वह प्राय ही छेडा करता था और बडे कुरुचिपूण ढग से। उसकी बातो मे एक उदासीभरी जिज्ञासा होती थी, मानो वह हमी लोगो से अनुरोध कर रहा हो कि हम उसके साथ सोच विचार करें। और हम लोग बहुत ध्यान से उसकी बाते सुनते

थे। वह रुक-रुककर अपनी बात कहता और अक्सर अचानक कोई सवाल पूछ बैठता। उसकी बातें हमारे स्मृतिपटल पर सदा दर्द और जलन से भरे घाव कर जातीं।

तो वह बोलता गया

"लोगो ने उससे पूछा कि आग किसने लगायी थी। वह बोली, 'मैंने।' सब कहने लगे, 'तू पागल है, उस रात को तो तू अस्पताल मे थी!' पर वह रट लगाये रही, 'आग मैंने लगायी!' अजीब पहेली थी। किसी की समझ ही मे नहीं आया कि वह ऐसी बातें क्यो कह रही थी हे भगवान उनींदी राता से हमे बचा! "

हरियाली के बिना उस निर्जन कब्रिस्तान मे गाडे जानेवाले हर आदमी की जीवन-कहानी उसे मालूम थी। जब वह बोलने लगता, तो मानो उस बस्ती के सभी घरो के दरवाजे हम लोगो के लिए खुल जाते और वहा रहनेवाला का सारा जीवन चित्र हमारे सामने उभर आता। लगता कि वह तो रात भर अपनी बातो का सिलसिला जारी रख सकता था। पर अधेरा होते ही चूर्का मेज से उठ खडा होता और कहता

"मै तो चला घर। मा परेशान हो रही होगी। और कौन चलेगा?"

सभी चल देते। याज चारदीवारी तक हम लोगो के साथ आकर फाटक बद कर लेता और अपने सावले हडीले चेहरे को लोहे की छडो से सटाकर हम लोगो को विदाई देता।

उसे कब्रगाह मे छोड तो जाते हम लोग, पर चित्त मे उद्विग्नता लिये हुए। एक दिन कोस्तोमा ने पीछे मुडकर कहा

"जानते हो, किसी दिन सवेरे ही उसके मरने की खबर सुन लोगे।"

चूर्का का कहना था कि याज की जिदगी हम लोगो से भी अधिक गयी-गुजरी है। पर व्यासिर ने उसकी उक्ति का प्रतिवाद किया। वह बोला

"हम लोगो की जिदगी तो गयी गुजरी नहीं है "

मेरी भी यही राय थी। उस बाजारू जिदगी की स्वतत्रता मुझे रुचती थी। मुझे अपने साथी भी बहुत प्यारे थे। उस दोस्ती मे अपार आनद और एक दूसरे के लिए त्याग करने की उच्च प्रेरणा थी।

स्कूल मे मेरे लिए नयी समस्या पदा हो गयी। लडको ने मुझे आवारा और कबाडी कहना शुरू किया। एक दिन खूब झगडा हो गया। इसके बाद उन्होने मास्टर से जाकर शिकायत कर दी कि मेरे बदन से कूडे की बदबू आती है, इसलिए क्लास मे मेरे साथ बठना असभव है। मुझे याद है कि इस चुगली से मेरे दिल को गहरी ठेस लगी थी। उसके बाद स्कूल मे मुह दिखाना असभव ज्ञात होने लगा था, क्योकि शिकायत सरासर झूठी थी। मैं रोज सवेरे सावधानी से हाथ मुह धोता था और स्कूल जाते समय हमेशा वे कपडे बदल लिया करता था, जो कबाड जमा करते वक्त पहनता था।

आखिर मैंने तीसरे दर्जे का इम्तहान दिया और अच्छे नम्बर पाने के फलस्वरूप पुरस्कार मे प्रशसापत्र, बाइबिल, क्रिलोव की कहानियो की एक प्रति तथा बिना जिल्द की एक और किताब–'फाता मोर्गाना' मिली। पुरस्कार को देखकर नाना की खुशी का ठिकाना न रहा। उन्होने कहा कि किताबो का अत्यत सावधानी से रख देना चाहिए और बोले कि उन्हें अपने खास सदूक मे बद कर दूगा। उन दिनो नानी कई रोज से बीमार थी। उसके पास पसा नहीं था। नाना रोज शिकायत करते थे

"तुम्हारी वजह से मैं लुटा जा रहा हू। बिक नहीं गया मै तो कहना!"

अत मैंने किताबें ले जाकर बेच दीं। उनसे मुझे पचास कोपेक मिले, जो मैंने नानी के हवाले कर दिये। प्रशसापत्र मैने कलम चलाकर खराब कर डाला। पर नाना ने उसे नहीं देखा और उसे हिफाजत से अपने सदूक मे बद कर दिया।

स्कूल की छुट्टी हो गयी और मैंने फिर अपना धधा आरभ कर दिया। वसत ऋतु आ जाने पर वह और भी रोचक हो गया था। अब हम लोग ज्यादा कमा लेते थे। रविवार के दिन हमारी पूरी मडली खेतो, सनोबर वनो मे घूमने निकल जाती। अधेरा होने पर हम लोग लौटते–थककर चूर, पर बेहद खुश। हमारी दोस्ती और भी पक्की होती जा रही थी।

लेकिन यह जोवन क्रम अधिक दिन नहीं चला। सौतेले पिताजी की नौकरी फिर छूट गयी और वह कहीं बाहर चले गये। मा और नन्हा

20•

निकोलाई नाना के घर आ गये। नानी इन दिनों एक धनी सेठ के घर रह रही; थी। वहा उसे ताबूत मे ईसा मसीह की मूर्ति वाली चादर तयार करने का काम मिला था। अत मुझे ही बच्चा खिलाने का काम करना पड़ता था।

मां क्षय से क्षीण हो गयी थी। दुनिया की हर चीज को भयानक आखो से ताकती हुई वह अब बहुत कम बोलती थी। कमजोरी के कारण उसके लिए चलना फिरना भी मुहाल था। भाई भी बच्चा की तपेदिक का रोगी था और उसके परो पर बहुत से फोडे निकल आये थे, जो अच्छा होने का नाम ही नहीं लेते थे। वह इतना कमजोर था कि रो भी नहीं सकता था। भूख लगने पर वह केवल कराहता था—बडे दर्दनाक ढग से कराहता और पेट भरा होने पर ऊघता और नि श्वास छोडा करता था। उस वक्त उसके मुह से बिल्ली के सतुष्ट बच्चे जैसी आवाज निकलती थी।

नाना ने एक दिन बडे ध्यान से उसे देखा। देखने के बाद बोले

"इसे कुछ नहीं है। केवल पौष्टिक भोजन चाहिए। पर तुम सबो को खिलाने के लिए मेरे पास पसा कहा है?"

मा ने नि श्वास छोडकर कहा

"बेचारे का पेट ही कितना-सा है? मुट्ठी भर भी नहीं चाहिए "

"यही तो बात है," नाना बोले, "मुट्ठी भर इसको, दो मुट्ठी भर उसको। लेकिन सब जोड जाओ, तो मेरा दिवाला "

उन्होंने हाथ हिलाया और मुझसे बोले

"निकोलाई को धूप में बालू में बिठाना चाहिए "

मैं एक बोरा साफ सूखा हुआ बालू ले आया और खिडकी के नीचे, जहा धूप आती थी, रख दिया। नाना के कहे मुताबिक उसी मे गदन तक बच्चे को गाड दिया। उसे यह अच्छा लगता था। वह खूब मगन होकर बठा रहता था उसी मे और मेरी ओर टुकुर टुकुर ताका करता था। उसकी आखें विलक्षण थीं—पुतली के चारा ओर नीले घेरे थे, जिनके चारो ओर हलके नीले वृत्त।

उसके प्रति मुझमे स्नेह जाग उठा। ऐसा लगता कि मेरे मन की उसे थाह है। खिडकी के नीचे मैं घटो उसकी बगल मे लेटा रहता। उधर से नाना मा को अपनी पतली आवाज मे यह कहते सुनाई देते

"मरने मे भी कुछ लगता है? हां, जीना अलबत्ता हुनर का काम है!"

मां की लम्बी खोंखोखों सुनायी पड़ती

निकोलाई अपने नन्हे सिर को हिलाता और हाथ नीचे से निकालकर मेरी ओर बढ़ा देता। उसके बाल विरले एव रपहले थे। चेहरा ऐसा लगता मानो बहुत दुनिया देख चुका हो।

कोई बिल्ली या मुर्गी पास आ जाती, तो वह उसे बड़े ग़ौर से देखता। देख लेने के बाद हलकी मुस्कराहट के साथ मेरी ओर ताकने लगता। उसकी वह मुस्कान मुझे विचलित कर देती। मैं सोचने लगता—शायद उसे पता है कि मैं घटो उसके पास बठा उकता जाता हू और चाहता हू कि उडकर गली मे अपने दोस्तों के पास पहुच जाऊ।

घर का आगन बहुत छोटा था। उसमे कबाड का ढेर लगा हुआ था। पीछे की तरफ गुसलखाना था। फाटक से गुसलखाने तक छप्परदार ओसारों और छोटी छोटी कोठरियों की क़तार थी। छतो पर नावों के टुकडो, कुदों, तख्तों और भीगी लकडियो का अबार लगा था। बर्फ पिघलने के बाद छुटभयो ने ये चीजें ओका नदी से हासिल की थीं। पूरे आगन में नदी के पानी से फूली लकडियो का ढेर जमा था, जिनसे धूप निकलने पर सडांध आती थी।

बग़ल मे एक छोटा-सा बूचडखाना था। हर रोज तडके ही उसमे से बछडों और भेडों के मिमियाने की आवाज आया करती थी। और खून की तेज गध उठकर धूलभरी हवा मे बारीक लाल जाली की तरह छा जाती।

खोपडी पर कुल्हाडी के उल्टे भाग का वार पडते ही जानवरो की आवाज शात हो जाती। उस वक्त निकोलाई के माथे पर बल पड जाता। वह होंठ भींच लेता, मानो जानवर की आवाज की नकल करना चाहता हो। पर मुह से केवल "ऊह ऊह" की आवाज मात्र ही निकलती।

दोपहर को नाना खिडकी से सिर निकालकर पुकारते

"खाना तयार है!"

छोटे बच्चे को वह अपनी गोद मे बठाकर खिलाते थे—अपने मुह मे रोटी और आलू चबाकर टेढी उगली से उसके छोटे से मुह मे डालते

थे। और ऐसा करते समय निकोलाई के होठ और नुकीली ठुड्ढी उनकी जूठन और लार से सन जाते थे। थोड़ा खिलाने के बाद क़मीज़ उघाड़कर उसका फूला हुआ पेट टोहते और कहते

"हो गया पूरा कि नहीं? लगता है अभी और खायेगा।"

मा अधेरे कोने मे बिस्तर पर पड़ी हुई कहती

"देख नहीं रहे हो, अभी हाथ बढ़ा रहा है।"

नाना जवाब देते

"बच्चे को क्या मालूम? पेट भरने पर भी खाना मागते रहते हैं "

यह कहकर मुह मे चबाया एक कौर फिर बच्चे के मुह मे डाल देते थे। खिलाने का यह तरीका देखकर मुझे बेहद घिन और शर्म महसूस होती। दम घुटने लगता और मतली-सी होने लगती।

अत मे नाना कहते

"हो गया। अब इसे ले जाओ मा के पास!"

गोद मे उठाते वक्त निकोलाई शिकायत के स्वर मे कराहने और हाथ मेज़ की ओर बढ़ाने लगता। मा उसे गोद मे लेने के लिए बिस्तर से थोड़ा उठने की कोशिश करती और अपने हाथ, जिनमे हड्डी और चमड़ा मात्र रह गया था, बढ़ा देती। वह सूखकर काटा हो गयी थी— जैसे उतरी छाल का चीड़।

उसका बोलना-चालना लगभग बद हो गया था। अगर कभी दो चार शब्द निकलते भी, तो मानो बोझ की तरह छाती फाड़कर। दिन भर कोने में पड़ी वह तिल तिल कर मृत्यु की ओर बढ रही थी। मुझे मालूम हो गया था—यह चद ही दिनो की मेहमान है। और यदि कोई बात अस्पष्ट रह गयी थी, तो नाना की बातो ने उसे स्पष्ट कर दिया था। वह बार-बार मौत की ही बातें करते, खासकर शाम को जब कि सड़ी हुई चीज़ों से बोझिल और भेड की खाल की तरह गम हवा खिड़की से घर मे भर जाती थी।

नाना की चारपाई देव प्रतिमाओं वाले कोने मे बिछती थी— प्रतिमाओं के लगभग ठीक नीचे। वह खिड़की की ओर सिरहाना करके सोते थे और सोने से पहले आप ही आप बकने लगते थे

"मरो, मरने का वक्त आ गया है। यह क़ाफ़िला प्रभु के घर पहुचेगा, तो मज़ा आ जायेगा। वह पूछेगा तो जवाब नदारद! सारी

जिंदगी मैंने मेहनत करते बितायी—हमेशा किसी न किसी काम मे लगा रहा। फिर भी यह अत—ऐ ईश्वर!"

मैं अलावघर और खिडकी के बीच फर्श पर सोता था। उतनी जगह मे मेरे पाव नहीं अटते थे। अत पैरो को अलावघर के नीचे फैलाना पडता था, जहां तिलचटे रात भर उनके ऊपर रेंगा करते थे। उनके रेंगने से गुदगुदी मालूम होती थी। वहा पडे पडे मुझे नाना का सारा धधा दिखायी पडता था। जब वह कोई काम बिगाड देते, तो मुझे न जाने क्यों, द्वेषपूर्ण खुशी-सी होती थी। खाना बनाते वक्त वह सडसी या कुरेदनी के सिरे से अक्सर खिडकी का शीशा तोड डालते। मुझे हसी आती कि इतने होशियार होते हुए भी नाना को सडसी के डडे का सिरा काट देने की क्यो नहीं सूझती।

एक दिन बर्तन मे कुछ पक रहा था। वह यकायक उफनने लगा। नाना ने इतने ज़ोर से सडसी को पीछे की ओर खींचा कि बर्तन तो टूट ही गया, खिडकी के दोनो शीशे भी चूर चूर हो गये। इसे कहते हैं, ग़रीबी मे आटा गीला। नाना फर्श पर बैठ गये और "हे भगवान! हे प्रभु!" कहकर रोने लगे।

जब वह बाहर चले गये, तो मैंने रोटी काटनेवाला चाकू लेकर डडे का सिरा काट डाला। नाना ने लौटकर यह देखा, तो लगे हाय तौबा मचाने। कहने लगे

"बेवकूफ कहीं का! उसे आरे से काटना चाहिए था! बरबाद कर दी लकडी तूने। उसका बेलन बनाकर बेच देते, तो कुछ पैसे मिल जाते। तुम लोग मिलकर उजाड डालोगे मुझको!"

वह ड्योढ़ी मे गये, तो मा ने मुझसे कहा

"तूने किसलिये टांग अडायी "

अगस्त मे एक रविवार को दोपहर के वक्त मा चल बसी। मेरे सौतेले पिताजी हाल ही मे सफर से लौटे थे और उन्हें नौकरी भी मिल गयी थी। उन्हे स्टेशन के नज़दीक एक साफ-सुथरा घर मिल गया था, जिसमे शीघ्र ही मा को ले जानेवाले थे। नानी और निकोलाई पहले ही उसमे चले गये थे।

मरने के दिन सुबह ही वह शात, लेकिन अधिक स्पष्ट और हलके स्वर मे मुझसे बोली

"येव्गेनी वासील्येविच से जाकर कह कि मा मिलने के लिए बुला रही है।"

वह दीवार का सहारा लेकर बैठ गयी और बोली

"दौड़, जल्दी से।"

मुझे ऐसा लगा कि वह मुस्करा रही है। आखो मे आज अजीब ज्योति दिखायी पडी। सौतेले पिताजी सवेरे की प्रार्थना मे गये हुए थे। नानी ने कहा कि यहूदिन के यहा से थोडी सुघनी ला दे। पर दूकान मे तैयार सुघनी नहीं थी। यहूदिन ने जब तक पत्ते कूटकर सुघनी तैयार की, मुझे वहीं बैठे रहना पडा।

लौटकर नाना के घर पहुचा, तो मा मेज के पास बैठी हुई थी। उसने बनफशई रग की साफ पोशाक पहन रखी थी, बाल सवरे हुए थे। एक जमाने के बाद आज फिर उसका पुराना गर्वीला रूप निखर आया था।

मैंने पूछा

"तबीयत कुछ अच्छी हो गयी है?" न जाने क्यो, मैंने बहुत झिझकते हुए यह प्रश्न किया।

मेरी ओर भयानक नजर से ताकते हुए वह बोली

"यहाँ आ। इतनी देर कहाँ रहा तू?"

इसके पहले कि मैं जवाब दे सकू उसने बाल पकडकर मुझे खींच लिया और मेज से एक लम्बी छुरी लेकर उसका फल मारने लगी। छुरी हाथ से छूटकर नीचे गिर पडी। बोली

"उठा उसे! दे मुझे!"

उठाकर मैंने उसे मेज पर रख दिया। मा ने मुझे ढकेल दिया। मैं अलावघर की पट्टी पर बैठ गया। वहा से आखें फाडकर उसकी ओर देखने लगा।

कुर्सी से उठकर वह धीरे धीरे कोने की ओर बढ़ी और जाकर अपनी चारपाई पर पड गयी और लगी माथे का पसीना पोंछने। मुट्ठी मे रूमाल कांप रहा था और हाथ बडी कठिनाई से उठ रहा था, दो बार वह चेहरे के बजाय तकिये पर गिर गया और रूमाल तकिये पर ही रेंगता रहा।

धीमे स्वर मे उसने पानी मागा।

मैं बालटी मे से एक प्याला पानी ले ग्राया। कठिनाई से सिर उठाकर उसने एक घूट मुह मे डाला ग्रौर फिर ग्रपने हाथ से, जो सब हो रहा था, मुझे टेलकर गहरा नि:श्वास छोड़ा। उसने कोने मे देव प्रतिमाग्रो की ग्रोर तथा फिर मेरी ग्रोर दृष्टि डाली। इसके बाद होंठ हिले, मानो मुस्कुरा रही हो, ग्रौर लम्बी बरौनिया शनै शनै ग्रांखो पर बिछ गयीं। दोनो कोहनियां ग्रगल बगल टिकी हुई थीं ग्रौर कापती उगलियो वाले हाथ धीरे धीरे गले की ग्रोर बढ़ रहे थे। चेहरे पर क्षण भर के लिए एक काली छाया नाचकर विलीन हो गयी—ग्रौर छोड गयी तनी हुई रक्तहीन खाल तथा नुकीली नाक। मुह विस्मय से खुल गया, पर सास सुनाई नहीं दे रही थी।

मैं प्याला लिये खडा ऐसे महसूस कर रहा था, मानो कई युग बीत गये हों। मां के चेहरे को निर्जीव ग्रौर बेरग होते देखता रहा।

नाना घर मे ग्राये। मैंने कहा

"मा मर गयी "

चारपाई पर दृष्टि डालकर वह बोले

"क्यो झूठ बोलता है?"

फिर ग्रलावघर के पास जाकर पके केक निकालने लगे। बरतन भयानक ग्रावाज मे ठनठना उठे। मैं उन्हें देख रहा था, निश्चयपूर्वक यह जानते हुए कि मा मर चुकी है—इस प्रतीक्षा मे कि नाना भी इसका एहसास करें।

मेरे सौतेले पिताजी ग्राये, साफ-सफेद पोशाक पहने हुए। धीरे से कुर्सी खींचकर वह मां की चारपाई के पास गये। यकायक कुर्सी हाथ से गिर पडी ग्रौर वह पीतल की तुरही जसे स्वर मे चिल्ला उठे

"यह क्या! यह तो चल बसी!!!"

ग्रलावघर का हत्था लगा लौह द्वार हाथ मे लिये ग्रौर ग्राखें फाडे हुए नाना ऐसे डग रख रहे थे, मानो उन्हें कुछ नजर न ग्रा रहा हो।

क़ब्रगाह मे जब ताबूत पर सूखा बालू डाला जाने लगा, तो नानी ग्रधे की तरह दूसरी क़ब्रों की ग्रोर चली गयी। वहां एक क्रास से टकराकर उसका मुह कट गया। याज का बाप उसे ग्रपनी कोठरी मे ले गया। वह जब चेहरे से खून धो रही थी, तो उसने मुझे सात्वना देने की कोशिश की। बोला

"भगवान किसी की नींद न छीने! तुम ऐसा चेहरा क्यों बनाये हुए हो। इन बातो को ज्यादा सोचना बेकार है। क्यो न, नानी? अमीर हो या ग़रीब मौत से कोई नहीं बच सकता। क्यों न, नानी?"

उसने खिडकी के बाहर देखा और सहसा बाहर भागा। लौटा तो पीछे-पीछे व्याखिर का लिये हुए और बेतरह खुश।

किसी घुडसवार की टूटी हुई एड उसके हाथ मे थी, जिसे झुलाता हुआ वह बोला

"देखा कसी लाजवाब चीज हाथ लगी है आज! व्याखिर ने और हमने तय किया है कि तुमको यह भेंट करेंगे। जरूर किसी कज्ज़ाक की गिर पडी है। दो कोपेक देकर मैं खुद ही व्याखिर से इसे खरीद लेना चाहता था "

"क्यो बेकार झूठ बोल रहे हो?" बिगडकर व्याखिर बोला। पर याज का बाप उसी तरह मेरे आगे उछलता और आखें मटकाता रहा। बोला

"देख न व्याखिर को? क्या मजाल कि इस बालू से तेल निकल आये। अच्छा भाई, मेरी तरफ से नहीं, व्याखिर की ही तरफ से तुम्हे यह भेंट है "

नानी ने हाथ-मुह धोकर अपने नीले सूजे चेहरे पर रूमाल बाध लिया और मुझसे उसने घर चलने को कहा। पर मैंने इनकार कर दिया। मैं जानता था कि मरनी के भोज मे शराब के साथ हुडदग भी मचेगा। गिरजाघर मे ही मिखाईल मामा याकाव मामा से कह रहे थे

"आज छककर पी जायेगी।"

व्याखिर ने मुझे हसाने के लिए एड को अपनी ठुड्डी पर लटका लिया और उसे जीभ से पकडने की कोशिश करने लगा। याज के बाप ने भी बनावटी हसी हसकर कहा

"देखो, देखो तो! यह क्या कर रहा है?"

लेकिन जब मेरी उदासी दूर होती नहीं नजर आयी, तो वह गभीर होकर बोला:

"बस, काफी है। ज्यादा अफसोस करना अच्छा नहीं। मौत सभी को आती है। पछी तक मरते हैं। एक काम करो—चलो तुम्हारी मां की क़ब्र के चारो ओर घासवाली मिट्टी की तह लगा दें। हम, तुम,

ख्यालिर और मेरा यात्र मदान से घासवाली मिट्टी ले आयेंगे और कब्र को ऐसा बना देंगे कि उसके जोड की दूसरी क़ब्र न मिलेगी।"

मुझे भी यह विचार पसद आया और हम मैदान की ओर चल दिये।

मा को दफनाने के कुछ दिनो बाद एक दिन नाना ने मुझसे कहा

"अलेक्सेई! तू मेरे गले का हार नहीं है। अब भाई, यहा जगह नहीं तेरे लिए। जा, अपनी रोजी रोटी की फिक्र कर "

और निकल पडा मैं रोजी रोटी की फिक्र मे–जीवन की राहा पर।

१९१२–१९१३

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिजाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।

हमारा पता है
२१, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

सवश्रेष्ठ रूसी और सोवियत पुस्तकमाला

प्रगति प्रकाशन द्वारा हाल में प्रकाशित

कोरोलेंको, व्ला० **अधा सगीतज्ञ।**

पुनर्मुद्रित सस्करण।

"कीयेव के मेले मे एक खास सगीतज्ञ को सुनने के लिए बडी भीड इकट्ठी हो गयी। वह अधा था, मगर उसकी सगीत प्रतिभा और जिदगी के बारे मे बडी अदभुत अफवाहे थी। कहा जाता था कि उसका बचपन मे एक समृद्ध परिवार से अपहरण कर लिया गया था कुछ औरो का कहना था कि उसने स्वय कुछ रोमानी विचारो के कारण अपना घर छोड दिया था और भिखारियो के एक दल म शामिल हो गया था। कारण चाहे कुछ भी रहा हो, पर हॉल ठसाठस भरा हुआ था "

इस उपन्यास की कथावस्तु इसी अधे बालक प्योत्र पापेल्स्की की कहानी है, जो एक विख्यात सगीतज्ञ बन जाता है। यह एक ऐसे आदमी की कहानी है, जिसने आत्मिक दृष्टि के साथ साथ सुख के अपने लक्ष्य को भी पा लिया है।

लेव तोलस्ताय और चेखाव के समकालिन व्लादीमिर कोरोलेंको (१८५३-१६२१) बडी बहुमुखी प्रतिभा के धनी लेखक थे और गार्की के पहले शिक्षक थ।

प्रकाशित होनेवाली है

लेस्कोव, नि० **विमुग्ध यायावर।**

"कितने बुद्धिमान और असाधारण व्यक्ति है!" लेव तोलस्तोय ने अपने एक पत्र म निकोलाई लेस्कोव (१८३१–१८९५) के बारे म लिखा था। लेस्कोव की असामान्य प्रतिभा के बारे मे भी ये ही शब्द इस्तेमाल किये जा सकते हैं। उनके बिना १९वी सदी के उत्तराध का रूसी साहित्य शायद अधूरा ही रहता। लेस्कोव ने रूस के अनूठे जीवन, उसके "धर्मात्मक", "विमुग्ध" लोगो और विद्राही जना को चित्रित किया। "शब्दो के कलाकार के नाते लेस्कोव रूसी साहित्य के लेव तोलस्तोय, गोगाल, तुर्गेनेव और गोचाराव जैसे महारथियो की श्रेणी मे आते है,' गार्की ने लिखा था।